॥ श्रीः ॥

मुहूर्तचिन्तामणि।

दैवज्ञ श्रीरामाचार्यकृत.

टिहरीराज्यनिवासी पण्डित-महीधरशर्मा

विरचित-

भाषाटीकासहित।

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष-"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,

बम्बई.



संवत २००६. शके १८७१.

मुद्रक और प्रकाशक-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

मालिक-"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस, बम्बई.

श्रीः।

प्रस्तावना।

सिद्धान्तसंहिताहोरारूपं स्कन्धत्रयात्मकम्।
वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिःशास्त्रमकल्मषम् ॥ १ ॥
अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तेषु केवलम्।
प्रत्यक्षं ज्यौतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ ॥ २ ॥
विनैतदखिलं श्रौतस्मार्त्तकर्म न सिद्ध्यति।
तस्माज्जगद्धितायेदं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ॥ ३ ॥

वेदके छः अंग–हैं शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष। इनमेंसे सर्वोत्तम अंग नेत्रसंज्ञक निर्मल निष्कलंक ज्योतिष ही है, जिसको प्राचीन ऋषियोंने सिद्धान्त(गणित–ग्रन्थ) संहिता (मुहूर्त आदि) होरा (जातक, ताजिक आदि फलादेश) इन तीन स्कन्धोंमें प्रगट किया। इसके विना समस्त श्रौत स्मार्त (वैदिक एवं धर्मशास्त्रोक्त) कर्म सिद्ध नहीं हो सकते, इसलिये संसारके उपकारार्थ ब्रह्माजीने इसे वेदनेत्र करके कहा, इसी हेतु (यज्ञादि वैदिककर्म करनेवाले) द्विजों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों) को इसे यत्नसे पढ़नेकी आज्ञा है। अन्य शास्त्रोंमें विवाद बहुत हैं, प्रत्यक्ष फलोदय ऐसा नहीं है जैसा प्रत्यक्ष चमत्कृत ज्योतिष है, जिसके साक्षी सूर्य, चन्द्रमा, उदयास्त, शृंगोन्नत्यादि हैं। शिक्षामें भी लिखा है कि--"शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्। ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्त श्रोत्रमुच्यते ॥ छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पान् प्रचक्षते ॥" इति। समस्त अंग प्रत्यंग परिपूर्ण होते हुए भी जैसे नेत्रोंके विना समस्त अन्धकार ज्ञात होता है वैसे ही इनके विना समस्त साधन निरर्थक है। वसिष्ठसिद्धान्तका भी वाक्य है कि "वेदस्य चक्षुः किल शास्त्रमेतत् प्रधानताङ्गेषु ततोऽर्थजाता। अङ्गैर्युतान्यैः परिपूर्णमूर्तिश्चक्षुर्विहीनः पुरुषो न किंचित् ॥" इत्यादि बहुत प्रमाणवाक्य हैं पर वर्त्तमान समयमें बहुधा वर्त्तमानसामयिक महाशय कहते हैं कि, ज्योतिष कुछ वस्तु नहीं है, भूतकालमें ब्राह्मण ही विद्यावान् रहे. सुज्ञ होनेसे उन्होंने यह पारिणामिक दूरदर्शी विचार किया कि, यदि हमारी सन्तान विद्या पराक्रमादि·

कोंसि अल्पसार हो जायगी तो क्या वृत्ति आजीवन करेगी ? इसलिये ज्योतिषशास्त्र बनाया कि, जिससे सबको प्रतीत हो एवं ब्राह्मणोंको ही मानें इत्यादि बहुतसे वाद प्रतिवाद करते हैं तथापि जानना चाहिये कि, यह शास्त्र किसने आरम्भमें बनाया और कब बना? यह तो सर्वसाधारण जानते ही हैं कि, जो खगोल. भूमिमान (पैमायश). सूर्य चन्द्रग्रहण आदि गणित एवं दिन रात्रि पक्ष, मास वर्ष आदि काल सब ज्योतिषहीसे तो प्रकट हैं, रहा फलादेश पक्ष, सो यह प्राचीन ग्रन्थकर्ता आचार्योंकी बुद्धिमत्ता है कि, सब जीवमात्र अपने अपने कर्मानुसार फल पाते हैं, यह तो प्रगट ही है परन्तु वह कर्म एवम् उसका परिणाम अदृश्य है, इसे दृश्य करनेके लिये उन महात्माओंने ऐसे २ हिसाब (गणित) नियत किये कि, जिनकी संज्ञायें सूर्यादि ग्रह और तिथि वार नक्षत्र योग करण लग्न मुहूर्त आदि नियम कर दिये हैं । जिनके द्वारा सद्विचारशील पाठक भूत भविष्य वर्त्तमान फल कह सकते हैं; जैसे बहुतसे गणितादि कार्मोंमें कोई करण (इष्ट) मानके आगे कार्य संपादित होते हैं ऐसे ही ज्योतिष फलादेशमें करण इष्टकाल एवं मुहूर्त हैं इनसे सभी कार्य्य होते हैं तथा च यह वेद मूर्ति ईश्वरका एक मुख्य अंग नेत्र है. वेद इसको प्रमाण करता है, इसके विना कोई भी यज्ञादि कृत्य (श्रौत स्मार्त कर्म) नहीं होते और प्रत्यक्ष चमत्कृत भी है। वेद प्रमाण-"विद्या हो वै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा शेवधिष्टेहमस्मि । असूयकायानृजवे यताय न मां ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम्" इत्यादि है. इसमें ज्योतिषकी मुख्यता इसप्रकार है कि- "अन्यानि शास्त्राणि विनोदमात्रं न किंचिदेषां तु विशिष्टमस्ति । चिकित्सितं ज्योतिषमन्त्रवादाः पदे पदे प्रत्ययमावहन्ति ॥ १ ॥" और शास्त्र तो विनोद (दिलबहलाव वा मनोरंजक) मात्र हैं, वैद्यशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, मन्त्रशास्त्र, धर्मशास्त्र प्रत्येक पदपदमें प्रत्यय (विश्वास) देते हैं, जैसे ज्योतिषमें प्रत्यक्ष ग्रहगणित है कि. चन्द्रमाके शृंगोन्नति, ग्रहण, ग्रहयुति, तुरीयादि यन्त्र वा नलिकादियोंसे ग्रहच्छाया, ग्रहोंका उदयास्त ठीक समयपर मिल जाते हैं, तथा जन्म, वर्ष प्रश्न आदि विचारमें यदि इष्ट शुद्ध हो एवं विचारवाला भी सुपठित हो तो भूत भविष्य वर्त्तमान फल ठीक ही मिलते हैं। इसे संसारके शुभार्थ ब्रह्माजीने वेदविभागानन्तर अंगोंमें स्थापन किया, "अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयीत १ दर्शपूर्णमासाभ्यां यजेत २" इत्यादि श्रुति हैं. आठ वर्षकी गणना सूर्यचारवश गणितहीसे है तथा दर्शपौर्णमासादि ज्ञान भी विना ज्योतिष होही नहीं सकता । लिखा भी है कि, "वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः कालानुपूर्वा विहिताश्च यज्ञाः ।

तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञान् ॥ १ ॥" यज्ञ ईश्वर ही है, इसके उपयोगी वेद हैं, कालनाम समयका है और कालस्वरूप परमात्मा होनेसे "कालात्मा" यज्ञपुरुष को ही कहते हैं, वही तो ज्योतिष है जिसके विना कालज्ञान नहीं होता। विना कालज्ञान यज्ञादि कुछ नहीं हो सकते। अन्यान्य प्रमाण भी बहुत हैं किन्तु इस समय बहुत व्याख्यानको छोडकर प्रयोजन लिखना ही मुख्य है कि श्रुतिनेत्र ज्योतिषशास्त्र ऐसा अद्वितीय एवं प्रत्यक्ष चमत्कृत होनेपर भी सहसा सर्व साधारणके हृदयकमलोंमें विकासमान नहीं होता, परञ्च विपरीतताका आभास स्वतः कालानुसार उत्पन्न होने लगता है। इसका हेतु सामयिक महिमासे मूल भाषा संस्कृतका ह्रास होना ही है। इसी कारण यह प्रत्यक्ष शास्त्र क्रमशः लुप्त होता जाता है, द्वितीय यह है कि, इस संस्कृताल्पपरिचयसमयमें बहुतसे मनुष्य कुछ सामान्य फलादेश देख सुनकर, यद्वा कियत्प्रकार भूतादि विद्याका अभ्यास करके तत्काल मनोहर बातें चमत्कारी दिखलाकर लोगोंके मनको मोहन करके अल्पश्रमसे अपना लाभ उठा लेते हैं। उस समय वे पाखण्डी पण्डितजी तो कहाते हैं परन्तु परिणाममें उनके कहे हुए फल अविश्वास्य प्रकट हो जाते हैं। इसपर जनश्रुति ही बैठती है कि ज्योतिष ही पाखण्डी हैं उन पाखण्डियोंके चातुर्यको कोई नहीं कहता। इत्यादि व्यवस्था होनेमें सर्व साधरणको ज्योतिषशास्त्रमें सुबोध होनेके निमित्त प्रचलित ग्रन्थों (जिसका अर्थ सर्वसाधारणको बोध नहीं हो सकता) की भाषाटीका करना ही एकमात्र उद्धार समझकर गढ़वालदेशाधीश माहामहिम क्षत्रियकुलभास्कर श्रीबदरीशमूर्ति श्रीमन्महाराजाधिराज प्रतापशहादेव बहादुरके आज्ञानुसार कुछ काल पहिले तथा उनके सत्पुत्र श्री ५ श्रीमन्महाराजाधिराज सत्कीर्तिमान् कीर्तिशाहदेव बहादुरकी आज्ञासे सांप्रतमें भी मैंने पूर्वश्लोकोक्त तीन स्कन्धोंमेंसे होरा फलादेश ग्रन्थ जातकोंमें मुख्य "बृहज्जातक" एवं ताजिकोंमें मुख्य तन्त्रत्रयात्मक "नीलकण्ठी" समस्त प्रश्न विचार सहित और "चमत्कारचिन्तामणि" "भावकुतूहल" आदि ग्रन्थोंकी भाषाटीका प्रकाशित करके कुछ संहिता वैशेषिक सारणी सदृश मुहूर्तग्रन्थोंकी भा० टी० प्रकाशित करनेका विचार हुआ कि मुहूर्त सभी कार्मोमें सभीको आवश्यक होते हैं और शुभमुहूर्तका फल शुभ हि होता है। इसके संहिता आदि बडे ग्रन्थोंमें पाठ बहुत हैं जो छोटे हैं उनके प्रयोजन भी स्वल्प ही हैं इसलिये यह मुहूर्तचिन्तामणि नामक ग्रन्थ जो पाठमें थोडा, सरस कविता, अनेक प्रकारके छन्दोंसे सुशोभित और अर्थ बहुत है तथा और भी विशेषता है कि अन्य मुहुर्तग्रन्थ 'रत्नमाला' आदिकोंमें तिथिवार नक्षत्र आदिकोंके पृथक् पृथक् प्रकरण हैं, एक कार्यके मुहूर्त देखनेमें अनेक प्रकरण देखने पड़ते हैं, इसमें जो कुछ कार्य देखना हो तो एक ही स्थलमें तिथ्यादि

लग्न लग्नांशपर्यन्त एवं धर्मशास्त्रीय निर्णय भी मिल जाते हैं। इन ही शुभ लक्षणोंसे इस आधुनिक ग्रन्थकी सिद्धि एवं सर्वत्र प्रमाणता हो रही है, परन्तु अर्थ इसका स्फुरित नहीं होता इसलिये इसीकी भाषाटीका करना योग्य समझा, इसे देख पञ्चांगमात्र जाननेवाले भी मुहूर्तका विचार उत्तम प्रकारसे जान लेंगे तथा पाठकोंको भी सुगमता हो जायगी।

यद्यपि इस ग्रंथकी भाषाटी० मुद्रित भी हो चुकी है तथापि पुनः प्रयास करनेका प्रयोजन विद्विज्जन सुज्ञ पाठकवृन्द इस टीकाका सारांश देख विचारकर जान जायँगे कि कैसा सरल स्वच्छ एवं निर्गल अर्थ ग्रन्थकर्ता आचार्यके आशयानुमत प्रकट किया गया है, इससे विचारशील सज्जन इस परोपकारार्थ परिश्रमको प्रसन्नतासे चरितार्थ करेंगे.

विदुषामनुचरः-
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
बम्बई.



श्रीः ।

अथ मुहूर्तचिन्तामणिस्थविषयानुक्रमणिका ।

विषयाः	पृष्ठांकाः

अथ संस्कारप्रकरणम् ५।

अथ विवाहप्रकरणम् ६।

अथ वास्तुप्रकरणम् १२ ।

गृहप्रवेशप्रकरणम्

उपसंहाराध्यायः ।

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता

इतिमुहूर्तचिन्तामणिविषयानुक्रमणिका समाप्ता ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ मुहूर्तचिन्तामणिः ।

भाषाटीकासहितः ।

शुभाशुभप्रकरणम् १ ।

मङ्गलाचरणम् ।

गौरीश्रवःकेतकपत्रभङ्गमाकृष्य हस्तेन दधन्मुखाग्रे ।
विघ्नं मुहूर्ताकलितद्वितीयदन्तप्ररोहो हरतु द्विपास्यः ॥ १ ॥

श्रीनाथपादाम्बुजदीर्घनौकामाश्रित्य तर्तुं विबुधैरपार्यम् ।
श्रीरामदैवज्ञकवेः कवित्वसिन्धुं प्रवृत्तोऽस्मि कियद्वराकः ॥ १ ॥
निजतातपदाम्बुजाप्तबोधो मौहूर्ते वितनोमि बालतुष्ट्यै ।
विवृतिं नृगिरा महीधराख्यः क्षन्तव्यं विबुधैर्यदत्र मेऽघम् ॥ २ ॥

भाषाकार विघ्नविघातार्थ मंगलाचरणरूप निजगुरुको प्रणामपूर्वक भाषारचनाका प्रयोजन कहता है, कि सत्कवि रामदैवज्ञके कवितारूपी समुद्र जो कि विद्वानोंसे भी सहसा पार नहीं उतरा जाता अर्थात् एकाएक कविके आशयको बिना कुछ आधार नहीं पाते इसका मैं एक छोटासा (वराक) अल्पसार (श्रीनाथ) लक्ष्मीनाथ विष्णु अथवा (श्री) शोभायुक्त (नाथ) आदिनाथ शिव, विशेषतः आनन्दानन्दनाथ आदि गुरुपंक्तित्रिकमेंसे प्रथम श्रेण्यधीश श्रीनाथ परब्रह्मरूप सच्चिदानन्दमय गुरुके चरणकमल ही एक बडी (नौका) नावके आश्रय पाके उक्त कवितासमुद्र तरनेको उद्यत हुआ हूँ, अपने जनकके करकमलोंके प्रसादसे पाया है मुहूर्तादिकका बोध (ज्ञान) जिसने ऐसा मैं महीधरनामा (ब्राह्मण राजधानी टीहरी जिला गढ़वाल निवासी) मुहूर्तग्रन्थोंसे अनभिज्ञोंके प्रसन्नतार्थ इस "मुहूर्तचिन्तामणि" नामक ग्रन्थकी सरस हिन्दीभाषाटीका करता हूँ, तब प्रार्थना भी करता हूँ कि इसमें (जो कुछ मेरी दुष्कृत) अयोग्यता हो तो विद्वज्जन क्षमा करें ॥ १ ॥ २ ॥

आचार्य प्रथम मङ्गलाचरण इंद्रवज्रा छन्दसे करता हैः—

श्रीगणेशजीने निजमाता (गौरी) पार्वतीके कानमें पहिरे हुए केतकीके (पत्र) पुष्पके एक भागको अपने शुण्डादण्डसे बाललीला अपनी माताको दिखलानेके लिये बलात्कारसे खैंच (ग्रहण) कर अपने मुखमें एक ओर भक्षण निमित्त धारण किया जितनेमें भक्षण न

हो सका इतने (मुहूर्त) क्षणपर्यंत द्विदन्तकी शोभा देखनेमें आयी क्योंकि गणेशजी एकदन्त हैं दूसरे और थोडे समय केतकीपुष्पके टुकडे रखनेसे द्विदन्त जैसे प्रतीत हुए यह अद्भुतोपमालङ्कार है और (द्विपास्य) एक बार शुण्डासे पुनः मुखसे पीनेवाले हाथीका है । मुख जिसका ऐसा गणेश विघ्नको हरण करे ॥ १ ॥

क्रियाकलापप्रतिपत्तिहेतुं संक्षिप्तसारार्थविलासगर्भम् ।
अनन्तदैवज्ञसुतः स रामो मुहूर्तचिन्तामणिमातनोति ॥ २ ॥

क्रिया (जातकर्म) आदि समस्त कार्यसमूहकी प्रतिपत्ति (यह कार्य अमुक दिनमें शुभ अमुकमें अशुभ) का हेतु (कारणभूत) एवं संक्षेप (थोडे) शब्दोंमें सार (निष्कर्ष) अर्थका बिलास प्रकाश है गर्भ (अन्तर) में जिसके अर्थात् मुहूर्त ग्रन्थ प्राचीन अनेक हैं, परन्तु उनमें पाठ बहुत और तिथ्यादि विचारोंके पृथक् प्रकरण हैं इसमें समस्त कार्यनिर्वाह थोडे ही शब्दोंसे एक ही स्थलमें हो जाता है इसलिये दिनशुद्धि विशेषके यद्वा "मुहूर्त" दिनके पंद्रहवें भाग (दो घडी) उपलक्षित कालके चिन्ता शुभाशुभनिरूपण विचारका मणि, जैसे हीरा आदि समस्त कांतिमानोंके आधार हैं ऐसे ही समस्त मुहूर्त (दिनशुद्धि) के आधार इस मुहूर्तचिन्तामणि नामक ग्रन्थको जगद्विख्यात अनन्तनामा दैवज्ञ (ज्योतिषी) का पुत्र रामदैवज्ञ विस्तारित अर्थात् विधिनिषेधके सन्निवेश (विधान) का निरूपण करता है ॥ २ ॥ (उ० जा०)

तिथीशाः ।

तिथीशा वह्निकौ गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रविः ।
शिवो दुर्गाऽन्तको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी ॥ ३ ॥

प्रथम पंचांगके शुभाशुभनिरूपणार्थ तिथियोंके स्वामी कहते हैं:—कि प्रतिपदाका स्वामी अग्नि, एवं द्वि० ब्रह्मा, तृ० पार्वती, च० गणेश, पं० सर्प, ष० कार्त्तिकेय, स० सूर्य, अ० शिव, न० दुर्गा, द० यम, ए० विश्वेदेव, द्वा० हरि, त्रयोद० कामदेव, चतुर्द० शिव, पू० अमा० चन्द्रमा है । इनके कहनेका प्रयोजन यह है, कि तिथिका जो अधिपति उसका पूजन उसीमें होता है तथा उनके जैसे गुण एवं कर्म हैं वैसे ही प्रकार कर्तव्य कार्यका शुभाशुभ परिणाम देते हैं जैसे रत्नमाला आदिकोंके तिथिप्रकरणोक्त प्रयोजन हैं कि, प्रतिपदामें विवाह, यात्रा, व्रतबन्ध, प्रतिष्ठा, सीमन्त, चूडा, वास्तुकर्म, गृहप्रवेश आदि मंगल न करना, परन्तु यहां विशेषतः शुक्ल प्र० की है, कृष्णमें उक्त कार्योंमेंसे कुछ होते हैं उनकी स्पष्टता आगे लिखेंगे, द्वितीयामें राज-सम्बन्धी अङ्ग वा जिह्वाके कृत्य व्रतबन्ध, प्रतिष्ठा, विवाह, यात्रा, भूषणादि कर्म शुभ होते हैं ।

तृतीयामें द्वितीयाके उक्त कर्म और गमनसम्बन्धी कृत्य, शिल्प, सीमन्त, चूडा, अन्नप्राशन, गृहप्रवेश भी शुभ होते हैं, रिक्ता ४। ९। १४ में अग्निकर्म, मारणकर्म, बन्धन,-कृत्य, शस्त्र, विष, अग्निदाह, घात आदि विषयक कृत्य, शुभ और मंगलकृत्य अशुभ होते हैं। पञ्चमीमें समस्त शुभकृत्य सिद्धि देते हैं परन्तु ऋण (कर्जा) इसमें न देना । देनेसे नाश हो जाता है। षष्ठीमें तैलाभ्यंग, पितृकर्म और दन्तकाष्ठोंके विना सभी मंगल पौष्टिक कर्म करने तथा संग्रामोपयोगी शिल्प, वास्तु, भूषण, वस्त्र भी शुभ हैं, सप्तमीमें जो जो कृत्य द्वि० तृ० पं० ष० में कहे हैं वे सिद्ध होते हैं। अष्टमीमें रणोपयोगी कर्म, वास्तुकृत्य, शिल्प, राजकृत्य, लिखनेका काम, स्त्री, रत्न, भूषणकृत्य शुभ होते हैं। दशमीमें जो जो द्वि० तृ० पं० स०में कहे हैं वे सिद्ध होते हैं। एकादशीमें व्रत उपवासादि समस्त धर्मकृत्य, देवताका उत्सव, वास्तुकर्म, सांग्रामिक कर्म, शिल्प शुभ होते हैं। द्वादशीमें समस्त स्थावर जंगमके कर्म, पुष्टिकारक शुभकर्म सभी सिद्ध होते हैं। त्रयोदशीमें द्वि० तृ० पं० स० के उक्त कृत्य शुभदायक होते हैं। पूर्णिमामें यज्ञक्रिया, पौष्टिक, मङ्गल, संग्रामोपयोगी, वास्तुकर्म, विवाह, शिल्प, समस्तभूषणादि सिद्ध होते हैं । अमावस्यामें पितृकर्ममात्र होते हैं कहीं शास्त्रोक्त उग्रकर्म भी कहे हैं । अन्य मंगल पौष्टिकोत्सवादि कृत्य न करने ॥ ३ ॥ (अनुष्टुप्)

तिथीनां संज्ञा । सिद्धियोगाश्च ।

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णेतितिथ्योऽशुभमध्यशस्ताः ।
सितेऽसिते शस्तसमाधमाः स्युः सितज्ञभौमार्किगुरौ च सिद्धाः ॥ ४ ॥

तिथियोंकी तीन आवृत्तिमें नन्दादि पंच संज्ञा क्रमसे हैं, जैसे–१ । ६ । ११ । नन्दा, २ । ७ । १२ । भद्रा. ३ । ८ । १३ । जया, ४ । ९ । १४ । रिक्ता, ५ । १० । १५ पूर्णा संज्ञक हैं। इनके जैसे नाम वैसे ही फल भी हैं तथा शुक्लपक्षमें पूर्व त्रिभाग (प्रतिपदासे पंचमीपर्यंत) अशुभ अर्थात् इनमें चन्द्रमा क्षीण ही रहता है । द्वितीय त्रिभाग (पंचमीसे दशमीपर्यंत) मध्य और अंतिम त्रिभाग (दशमीसे पूर्णिमापर्यन्त) शुभ होते हैं तथा कृष्णपक्षमें पू० त्रि० (पंचमीपर्यन्त) शुभ, म० त्रि० (पंचमीसे दशमीपर्यन्त) मध्यम और अं० त्रि० (एकादशीसे अमा० पर्यन्त) अधम होते हैं । चतुर्थपादका अर्थ यह है कि शुक्रवारके दिन नन्दा १ । ६ । ११ । बुधको भद्रा । २ । ७ । १२ मंगलको जया ३ । ८ । १३ । शनिवारको रिक्ता ४ । ९ । १४ । गुरुवारके दिन पूर्णा ५ । १० । १५ । सिद्धि देनेवाली हैं। इसका प्रयोजन यह है कि "सिद्धा तिथिर्हंति समस्तदोषान्०" इत्यादि मासशून्य, मासदग्ध, दिनदग्ध आदि दोषोंको हटाकर कार्य सिद्ध कर देती है ॥ ४ ॥ (उपजाति)

रव्यादिवारेषु यथाक्रमनिषिद्धतिथिभानि ।

नन्दा भद्रा नन्दिकाख्या जया च रिक्ता भद्रा पूर्णसंज्ञामृताकात् ।
याम्यं त्वाष्ट्रं वैश्वदेवं धनिष्ठार्यम्णं ज्येष्ठान्त्यं रवेर्दग्धभं स्यात् ॥ ५ ॥

सूर्यादिवारोंमें नन्दादि उक्ततिथि क्रमसे अशुभ (घातक) होती है । जैसे रविवारको नन्दा १ । ६ । ११ । सोमवारको भद्रा २ । ७ । १२ । मंगलको नन्दा १ । ६ ११ । बुधको जया ३ । ८ । १३ गुरुवारको रिक्ता ४ । ९ । १४ शुक्रवारको भद्रा २ । ७ । १२ । शनिवारको पूर्णा ५ । १० । १५ । ऐसे ही नक्षत्र भी जैसे रविवारको भरणी, सोमवारको चित्रा, मंगलको उत्तराषाढा, बुधको धनिष्ठा, गुरुवारको उत्तराफाल्गुनी, शुक्रको ज्येष्ठा शनिवारको रेवती दग्धनक्षत्र होते हैं । उक्त घातक तिथि तथा ये दग्धनक्षत्र शुभकृत्यमें वर्ज्य हैं ॥ ५ ॥ (शालिनीवृत्त)

तिथिचक्रम् ।

तिथि	तिथि फ-	स्वामी	संज्ञा	शुक्ल	कृष्ण	पालन
१	सिद्धि	अग्नि	नन्दा	अशुभ	शुभ	कोहडा
२	कार्यसाधन	ब्रह्मा	भद्रा	अ०	शुभ	वनभंटा
३	आरोग्य	गौरी	जया	अ०	शुभ	नोन
४	हानि	गणेश	रिक्ता	अ०	शुभ	तिल
५	शुभ	सर्प	पूर्णा	अ०	शुभ	खट्टा
६	अशुभ	स्कंद	नन्दा	मध्यम	मध्यम	तेल
७	शुभ	सूर्य	भद्रा	म०	म०	आमला
८	व्याधि	शिव	जया	म०	म०	नारियल
९	मृत्युदा	दुर्गा	रिक्ता	म०	म०	लड्डुआ
१०	धनदा	यम	पूर्णा	म०	म०	चिचेंडा
११	शुभा	विश्वे	नन्दा	शुभ	अशुभ	सेमदाना
१२	सर्वसिद्धि	हरि	भद्रा .	शुभ	अशुभ	मसूर
१३	सर्वसिद्धि	काम	जया	शुभ	अ०	भंटा
१४	उग्रा	शिव	रिक्ता	शुभ	अ०	सहद
१५	पुष्टिदा	चन्द्र	पूर्णा	शुभ	अ०	जुवा
३०	अशुभ	पितर	•	•	•	मैथुन

ककचादिनिन्द्ययोगाः ।

षष्ठ्यादितिथयो मन्दाद्विलोमं प्रतिपद्बुधे ।
सप्तम्यर्केऽधमाः षष्ठ्याद्यामाश्च रदधावने ॥ ६ ॥

शनिवारसे विपरीत तथा षष्ठीसे सीधे क्रमसे गिननेमें तथा प्रतिपदाको बुध, सप्तमीको रवि अधम (शुभकार्यमें वर्जनीय) क्रकचयोग होता है. पंचांगोंमें इसे वारदग्ध लिखते हैं। इनकी सुगमता यह भी है कि, तिथिवार जोड़नेसे १३ जिस दिन हों वही वा० ह० जैसे शनिवारकी षष्ठी, शुक्रकी सप्तमी, बृहस्पतिवारकी अष्टमी, बुधकी नवमी, मंगलकी दशमी, चंद्रवारकी एकादशी, रविवारकी द्वादशी और बुधकी प्रतिपदा, रविकी सप्तमी ये पृथक् २ ही कही हैं। और षष्ठी, प्रतिपदा अमावस्याके दिन काष्ठ विशेष नीम आदिसे दंतधावन (दांतुन) न करना किसी आचार्यके मतसे नवमी तथा रविवारको भी वर्जित है ॥ ६ ॥ (अनुष्टुप्)

कृत्यविशेषे निषिद्धतिथयः ।

षष्ठ्यष्टमीभूतविधुक्षयेषु नो सेवेत ना तैलपले क्षुरं रतम् ।
नाभ्यञ्जनं विश्वदशद्विके तिथौ धात्रीफलैः स्नानममाद्रिगोष्वसत् ॥७॥

षष्ठीके दिन तैलाभ्यंग, अष्टमीको मांसभोजन, चतुर्दशीको क्षौर, अमावस्याके दिन स्त्रीसंभोग मनुष्य न करें। किसीका मत है कि, मैथुन सभी पर्वदिनोंमें न करना चतुर्दशी, कृष्णाष्टमी, अमावस्या, पूर्णिमा, सूर्यसंक्रांति ये पर्व होते हैं, उक्त कार्मोंमें तिथि तत्कालकी मानी जाती है, उदयव्यापिनी नहीं तथा त्रयोदशी, दशमी द्वितीयाके दिन तैलाभ्यंग (उबटन) न करना, यह नियम केवल मलापकर्षस्नानमात्रको ब्राह्मणरहित तीन वर्णोंको है और अमावास्या, सप्तमी, नवमीको आमलेके चूर्णसे स्नान न करना, करने से धन एवं संतति क्षीण होती अन्य हैं, दिनोंमें तिलकल्कसहित आमलोंसे स्नान पुण्य देता है, यह वैद्यक शास्त्रसे भी स्नानकी औषधी वर्णकांतिकारक है ॥ ७ ॥ (इन्द्रवंशा)

दग्धादियोगचतुष्टयम् ।

सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दा वेदाङ्गसप्ताश्विगजाङ्कशैलाः ।
सूर्याङ्गसप्तोरगगोदिगीशा दग्धा विषाख्याश्च हुताशनाश्च ॥ ८ ॥

सूर्यवारकी द्वादशी, चं० एकादशी, मं० पंचमी, बु० तृतीया, बृ० षष्ठी, शु० अष्टमी शनिवारकी नवमीको दग्धयोग होता है। रविवारकी चतुर्थी, चं० षष्ठी, मंगलकी सप्तमी, बु० द्वितीया, बृ० अष्टमी, शु० नवमी, श० सप्तमीको विषयोग होता है। रविवारकी

द्वादशी. चं० षष्ठी, मं० सप्तमी, बु० अष्टमी, बृ० नवमी, शु० दशमी, श० एकादशीको हुताशनयोग होता है । ये तीन योग नामसदृश फल देते हैं, शुभकार्यमें वर्जित हैं ॥ ८ ॥

(इन्द्रवज्रा)

सूर्यादिवारे तिथयो भवन्ति मघा विशाखा शिवमूलवह्निः ॥
ब्राह्मं करोऽर्काद्यमघण्टकाश्च शुभे विवर्ज्या गमने त्ववश्यम् ॥ ९ ॥

रविवारकी मघा, चं० विशाखा, मं० आर्द्रा, बु० मूल, बृ० कृत्तिका, शु० रोहिणी, श० हस्त यमघंटयोग होते हैं । इतने दग्ध, विषाख्य, हुताशन, यमघंटयोग शुभकार्यमें वर्जित हैं । विशेषतः यात्रामें ही वर्ज्य हैं । आवश्यकमें इनके परिहार भी ग्रंथांतरों में हैं कि, विंध्याचल तथा हिमालयके बीच इनका विचार मुख्य है अन्य देशोंमें नहीं, तथा लग्नसे केंद्र त्रिकोण में शुभ ग्रह हो इनका दोष नहीं और किसीका मत है कि, यमघंटकी ८ घटी वर्ज्य हैं, वसिष्ठ मत है कि, ४ योग दिनमें अनिष्ट फल देते हैं रात्रिमें नहीं ॥ ९ ॥ (उप०)

(रव्यादिवारेएतास्तिथयोदग्धाद्याः)

र.	चं	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	वाराः
१२	११	५	३	६	८	९	दग्धास्तिथयः
४	६	५	२	८	९	७	विषाख्यास्ति.
१२	६	७	८	९	१०	११	हुताशनास्ति.
मघा	विशा	आर्द्रा	मूल	कृत्ति	रोहि.	हस्त	यमघण्टनक्ष०

चैत्रादिशून्यतिथयः ।

भाद्रे चन्द्रदृशौ नभस्यनलनेत्रे माधवे द्वादशी
पौषे वेदशरा इषे दश शिवा मार्गे द्विनागा मधौ ।
गोऽष्टौ चोभयपक्षगाश्च तिथयः शून्या बुधैः कीर्तिता
ऊर्जाषाढतपस्यशुक्रतपसां कृष्णे शराङ्गाब्धयः ॥ १० ॥
शक्राः पञ्च सिते शक्राग्नविश्वरसाः क्रमात् ।

मासशून्य (मासदग्ध) तिथि कहते हैं, भाद्रपदकी १ । २ तिथि, श्रावणकी ३ । २ वैशाखकी १२, पौषकी ४ । ५ आश्विनकी १० । ११ मार्गशीर्षकी २ । ८ चैत्रकी ९ । ८ दोनोंही पक्षोंमें शून्य होती हैं तथा कार्तिककी ५ आषाढकी ६ फाल्गुनकी ४ ज्येष्ठकी १४ माघकी ५ कृष्णपक्षमें शून्य होती हैं और कार्तिककी १४ आषाढकी ७ फाल्गुनकी ३ ज्येष्ठकी १३ माघकी ६ शुक्लपक्षमें शून्य होती हैं, इनहीको मासदग्ध भी कहते हैं ॥-(शा० वि० १०) (अनु०)

तिथिनक्षत्रसम्बन्धिदोषाः ।

तथा निन्द्यं शुभे सार्पं द्वादश्यां वैश्वमादिमे ॥ ११ ॥
अनुराधा द्वितीयायां पंचम्यां पित्र्यभं तथा ।
त्र्युत्तराश्च तृतीयायामेकादश्यां च रोहिणी ॥ १२ ॥
स्वातीचित्रे त्रयोदश्यां सप्तम्यां हस्तराक्षसौ ।
नवम्यां कृत्तिकाष्टम्यां पूभा षष्ठ्यां च रोहिणी ॥ १३ ॥

तिथिनक्षत्रसम्बन्धी दोष कहते हैं—द्वादशीमें आश्लेषा, प्रतिपदामें उत्तराषाढा, द्वितीया में अनुराधा, तृतीयामें तीनों उत्तरा, एकादशीमें रोहिणी, त्रयोदशीमें स्वाती, चित्रा, सप्तमीमें हस्त, मूल, नवमीमें कृत्तिका, अष्टमीमें पूर्वाभाद्रपदा, पंचमीमें मघा शुभकार्यमें वर्जनीय हैं ॥ ११-१३ ॥

चैत्रादिमासेषु शून्यनक्षत्राणि ।

कदास्रभे त्वाष्ट्रवायू विश्वेज्यौ भगवासवौ ।
वैश्वश्रुती पाशिपौष्णे अजपादग्निपित्र्यभे ॥ १४ ॥
चित्राद्वीशौ शिवाश्व्यर्काः श्रुतिमूले यमेन्द्रभे ।
चैत्रादिमासे शून्याख्यास्तारा वित्तविनाशदाः ॥ १५ ॥

चैत्र महीनेमें रोहिणी, अश्विनी, वैशाखमें चित्रा, स्वाती, ज्येष्ठमें उत्तराषाढा, पुष्य आषाढमें पूर्वाफाल्गुनी, धनिष्ठा, श्रावणमें उत्तराषाढा, श्रवण, भाद्रपदमें शतभिषा; रेवती, आश्विनमें पूर्वाभाद्रपदा, कार्तिकमें कृत्तिका, मघा, मार्गशीर्षमें चित्रा, विशाखा, पौषमें आर्द्रा, अश्विनी, हस्त, माघमें श्रवण, मूल, फाल्गुनमें भरणी, ज्येष्ठा नक्षत्र होते हैं, इनमें शुभकार्य करनेसे वित्त (धनादि) नाश होते हैं ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ (अनुष्टुप्)

चैत्रादिषु शून्यराशयः ।

घटो झषो गौर्मिथुनं मेषकन्यालितौलिनः ।
धनुः कर्को मृगः सिंहश्चैत्रादौ शून्यराशयः ॥ १६ ॥

शून्यराशि कहते हैं--कि चैत्रमें कुम्भ, वैशाखमें मीन, ज्येष्ठमें वृष, आषाढमें मिथुन, श्रावण में मेष, भाद्रपदमें कन्या, आश्विनमें वृश्चिक; कार्तिकमें तुला, मार्गशीर्षमें धन, पौषमें कर्क; माघमें मकर. फाल्गनमें सिंहराशि शून्य होती हैं, इनका भी वही फल है ॥ १६ ॥ (अनुष्टुप्)

मासेषु शून्यसंज्ञकाः ।

शून्य	चै.	वै.	ज्ये.	आ.	श्रा.	भा.	आ.	क.	मा.	पौ.	मा.	फा.
तिथयः	९|८ उभ. पक्ष	१२ उभ. पक्ष	कृ.१४ शु.१३	कृ. ६ शु. ७	३|२ उ. प.	१|२ उ. प.	१०|११ उ. प.	कृ. ५ शु. १४	७|८ उ. प.	४|५ उ. प.	कृ. ५ शु. ९	कृ. ४ शु. ३
शून्य नक्ष त्राणि	रोहि. अश्विनी	चित्रा स्वाती	उत्तराषाढा पुष्य	पू.फा. धनि.	उ. षा. श्रव.	शततारा रेवती	पू. भा.	कृत्ति. मघा	चि. वि.	आर्द्रा अश्वि. हस्त	श्रव. मूल	भर. ज्ये.
शून्यराशयः	११	१२	२	३	१	६	८	७	९	४	१०	५

विषमतिथिषु दग्धलग्नानि ।

पक्षादितस्त्वोजतिथौ घटैणौ मृगेन्द्रनक्रौ मिथुनाङ्गने च ।
चापेन्दुभे कर्कहरी हयान्त्यौ गोऽन्त्यौ च नेष्टे तिथिशून्यलग्ने ॥१७॥

(पक्षादि) प्रतिपदासे लेकर विषम तिथियोंमें ये लग्न शून्य होते हैं । जैसे--प्रतिपदामें तुला मकर, तृ० में मकर, सिंह, पं० मिथुन, कन्या, स० धन कर्क, न० सिंह, कर्क, ए० धन, मीन ये शून्यलग्न शुभकार्योंमें वर्ज्य हैं ॥ १७ ॥ (इन्द्रवज्रा)

दुष्टयोगानां शुभकृत्यावश्यकत्वे परिहारः ।

नारदः—तिथयो मासशून्याश्च शून्यलग्नानि यान्यपि ।
मध्यदेशे विवर्ज्यानि न दूष्याणीतरेषु तु ॥ १८ ॥
पङ्ग्वन्धकाणलग्नानि मासशून्याश्च राशयः ।
गौडमालवयोस्त्याज्या अन्यदेशे न गर्हिताः ॥ १९ ॥

जो मासशून्य तिथ्यादि कहे हैं इनके निमित्त विशेषता नारद कहते हैं कि, मासशून्य तिथि तथा जो शून्य लग्न कहे हैं वे भी मध्यदेशहीमें वर्ज्य हैं और देशोंमें इनका दोष नहीं तथा पंगु, अन्ध, काण लग्न (जो विवाह--प्रकरणमें कहे हैं) और मासशून्य राशि गौड-देश (मालव), मलबार (केरल) देशमें वार्जित करने और देशोंमें निंद्य नहीं हैं ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ (अनुष्टुप्)

शुभकार्येषु सिद्धिदानामपि हस्तार्कादियोगानां निन्द्यत्वम् ।

वर्जयेत् सर्वकार्येषु हस्तार्क पंचमीतिथौ ।
भौमाश्विनीं च सप्तम्यां षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं तथा ॥ २० ॥

वार नक्षत्र योगसे जो अमृतसिद्धियोग होते हैं वे किसी तिथिके योगसे अनिष्ट भी हो जाते हैं । जैसे--रविवारका हस्त सिद्धि है परन्तु पंचमीके दिन हो तो विरुद्ध है । ऐसे ही मंगल० वारकी अश्विनी सप्तमीको, सोमवारका मृगशिर षष्ठीको ॥ २० ॥ (अनु०)

बुधानुराधामष्टम्यां दशम्यां भृगुरेवतीम् ।
नवम्यां गुरुपुष्यं चैकादश्यां शनिरोहिणीम् ॥ २१ ॥

बुधवारकी अनुराधा अष्टमीको, शुक्रवारकी रेवती दशमीको, गुरुवारका पुष्य नवमीको, शनिवारकी रोहिणी एकादशीको विरुद्ध होती हैं, ऐसे योग हों तो समस्त शुभकृत्यमें वर्जित करने ॥ २१ ॥ (अनुष्टुप्)

गृहप्रवेशे यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम् ।
भौमाश्विनीं शनौ ब्राह्मं गुरौ पुष्यं तु वर्जयेत् ॥ २२ ॥

उक्त भौमाश्विनी आदि अमृतसिद्धि योग सभी कार्योंमें उक्त हैं तो भी गृहप्रवेशमें भौमाश्विनी, यात्रामें शनिरोहिणी, विवाहमें गुरुपुष्य वर्जित ही करना ॥ २२ ॥ (अनु०)

आनन्दाद्यष्टाविंशतियोगाः ।

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो धाता सौम्यो ध्वाङ्क्षकेतू क्रमेण ।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ ॥ २३ ॥
उत्पातमृत्यू किल काणसिद्धी शुभोऽमृताख्यो मुशलं गदश्च ।
मातङ्गरक्षश्चरसुस्थिराख्यप्रवर्द्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ॥ २४ ॥

आनंदादियोगोंके नाम--आनन्द १ कालदण्ड २ धूम्र ३ प्रजापति ४ सौम्य ५ ध्वांक्ष ६ ध्वज ७ श्रीवत्स ८ वज्र ९ मुद्गर १० छत्र ११ मित्र १२ मानस १३ पद्म १४ लुम्बक १५ उत्पात १६ मृत्यु १७ काण १८ सिद्धि १९ शुभ २० अमृत २१ मुसल २२ गद २३ मातंग २४ राक्षस २५ चर २६ स्थिर २७ वर्द्धमान २८ योग नक्षत्रवारके अनुसार होते हैं जैसे इनके नाम हैं वैसे फल भी देते हैं ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ (शालिनी २३) (उपजाति २४)

आनन्दादियोगचक्रम् ।

	आनंदादि	र.	च.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	फल
१	आनंद	अ.	मृ.	अ.	ह.	अ.	उ.	श.	सिद्धि
२	काल	भ.	आ.	म.	चि.	ज्ये.	अ.	पू.	मृत्यु
३	धूम्र	कृ.	पु.	[illegible]	स्वा.	मू.	श्र.	उ.	असुख
४	धाता	रो.	ति.	उ.	वि.	पू.	ध.	रे.	सौभाग्य
५	सौम्य	मृ.	अ.	ह.	अ.	उ.	श.	अ.	बहुसुख
६	ध्वांक्ष	आ.	म.	चि.	ज्ये.	अ.	पू.	भ.	धनक्षय
७	ध्वज	पु.	पू.	स्वा.	मू.	श्र.	उ.	कृ.	सौभाग्य
८	श्रीवत्स	ति.	उ.	वि.	पू.	ध.	रे.	रो.	सौख्यसंपत्ति
९	वज्र	अ.	ह.	अ.	उ.	श.	अ.	मृ.	क्षय
१०	मुद्गर	भ.	चि.	ज्ये.	अ.	पू.	भ.	आ.	लक्ष्मीक्षय
११	छत्र	पू.	स्वा.	मू.	श्र.	उ.	कृ.	पु.	राजसम्मान
१२	मित्र	उ.	वि.	पू.	ध.	रे.	रो.	ति.	पुष्टि
१३	मान	ह.	अ.	उ.	श.	अ	मृ.	अ.	सौभाग्य
१४	पद्म	चि.	ज्ये.	अ.	पू.	भ.	आ.	म.	धनागम
१५	लुंबक	स्वा.	मू.	श्र.	उ.	कृ.	पु.	पू.	धनक्षय
१६	उत्पात	वि,	पू.	ध.	रे.	रो.	ति.	उ.	प्राणनाश
१७	मृत्यु	अ.	उ.	श.	अ.	मृ.	अ.	ह.	मृत्यु
१८	काण	ज्ये.	अ.	पू.	भ.	आ.	म.	चि.	क्लेश
१९	सिद्धि	मू.	श्र.	उ.	कृ.	पु.	पू.	स्वा.	कार्यसिद्धि
२०	शुभ	पू.	ध.	रे.	रो.	पु.	उ.	वि.	कल्याण
२१	अमृत	उ.	श.	अ.	मृ.	आ.	ह.	अ.	राजसम्मान
२२	मुशल	अ.	पू.	भ.	आ.	म.	चि.	ज्ये.	धनक्षय
२३	गदा	श्र.	उ.	कृ.	पु.	पु.	स्वा.	मू.	अक्षयविद्या
२४	मातंग	ध.	रे.	रो.	ति.	उ.	वि.	पू.	कुलवृद्धि
२५	राक्षस	श.	अ.	मृ.	अ.	ह.	अ.	उ.	महाकष्ट
२६	चर	पू.	भ.	आ.	म.	चि.	ज्ये.	अ.	कार्यसिद्धि
२७	स्थिर	उ.	कृ.	पू.	पू.	स्वा.	मू.	श्र	गृहारम्भ
२८	वर्द्धमान	रे.	रो.	पु.	उ.	त्रि.	पू.	ध.	विवाह

योगपरिज्ञानम् ।

दास्रादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद्भौमे कराद्बुधे ।
मैत्राद्गुरौ भृगौ वैश्वाद्गण्या मन्दे च वारुणात् ॥ २५ ॥

उक्त २८ योगोंके जाननेकी विधि यह है कि, रविवारको अश्विनीसे सोमवारको

मृगशिरसे एवं मं० को आश्लेषासे बु० को हस्तसे बृ० को अनुराधासे शु० को उत्तराषाढासे श० को शतभिषासे गिनना, जितनी संख्यामें वर्तमान दिननक्षत्र हो उतनी संख्याका उक्त योगोंमेंसे योग जानना। जैसे रविवारको अश्विनी, आनन्द, भरणी, कालदंड तथा सोमवार को हस्त, मृगशिरसे गिनकर ९ हुआ तो नवमयोग वज्र हुआ, ऐसे ही अन्य भी जानने, यहां अभिजित् भी गिनना चाहिये तब २८ योग होंगे ॥ २५ ॥ (अनुष्टुप्)

आनन्दादिषु दुष्टयोगानामावश्यककृत्ये परिहारः ।

ध्वाङ्क्षे वज्रे मुद्गरे चेषुनाड्यो वर्ज्या वेदाः पद्मलुम्बे गदेऽश्वाः ।
धूम्रे काणे मौशले भूर्द्वयं द्वे रक्षोमृत्यूत्पातकालाश्च सर्वे ॥ २६ ॥

आवश्यकतामें दुष्टयोगोंकी वर्ज्यघटीसंख्या कहते हैं कि—ध्वांक्ष, वज्र मुद्गरकी ५ घटी, पद्म, लुम्बककी ४ घटी, गदकी ७, धूम्रकी १, काणकी २, मुसलकी २ और राक्षस, मृत्यु, उत्पात, कालदण्डकी समस्त ६० घटी वर्जित हैं, अन्य ग्रन्थोंमें चरयोगकी तीन घटी वर्जित करनी लिखी हैं ॥ २६ ॥ (शालिनी)

दोषापवादभूता रवियोगाः ।

सूर्यभाद्वेदगोतर्कदिग्विश्वनखसम्मिते ।
चन्द्रर्क्षे रवियोगाः स्युर्दोषसंघविनाशकाः ॥ २७ ॥

जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उससे गिनकर (दिननक्षत्र) जिसपर चन्द्रमा है उस पर्यंत ४।९।६।१०।१३।२० इनमेंसे कोई संख्या हो तो रवियोग होता है, यह सभी कार्यमें शुभ होता है, पूर्वोक्त दोषोंके समूहका नाश करता है ॥ २७ ॥

सिद्धियोगाः ।

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं चन्द्रे श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रम् ।
भौमेऽश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं ज्ञब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम् ॥ २८ ॥
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितिज्यधिष्ण्यं शुक्रेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोभम् ।
शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि सर्वार्थसिद्धयै कथितानि पूर्वैः ॥ २९ ॥

सिद्धियोग कहते हैं कि— रविवारको हस्त, मूल, तीनों उत्तरा, पुष्य, अश्विनी। सोमवारको श्रवण, रोहिणी, मृगशिर, तिष्य, अनुराधा. मंगलवारको अश्विनी उत्तरा भाद्रपदा, कृत्तिका, आश्लेषा. बुधवारको अनुराधा, हस्त, कृत्तिका, आश्लेषा. बृहस्पतिवारको रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य. शुक्रवारको रेवती, पूर्वा फाल्गुनी, अश्विनी, पुनर्वसु, श्रवण. शनिवारको श्रवण, रोहिणी, स्वाती, सर्वार्थ सिद्धि होती है यह प्राचीन आचार्योंने कहा है ॥ २८ ॥ २९ ॥ (इन्द्रवज्रा तथा उपजाति)

उत्पात--मृत्यु--काण--सिद्धियोगाः ।

द्वीशात्तोयाद्वासवात्पौष्णभाच्च ब्राह्म्यात्पुष्यादर्यमर्क्षाच्चतुर्भैः ।
स्यादुत्पातो मृत्युकाणौ च सिद्धिर्वारेऽर्काद्येतत्फलं नामतुल्यम् ॥ ३० ॥

रविवारको विशाखासे चार नक्षत्र क्रमशः उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि योग होते हैं । जैसे- रविवारको विशाखा उत्पात, अनुराधा मृत्यु, ज्येष्ठा, काण, मूल सिद्धि होते हैं, ऐसे ही सोमवारको पूर्वाषाढासे, मंगलको धनिष्ठासे, बुधको रेवतीसे, गुरुवारको रोहिणीसे, शुक्रको पुष्यसे, शनिको उत्तराफाल्गुनीसे उक्त ४ योग होते हैं इनके फल भी जैसे नाम वैसे ही हैं ॥ ३० ॥ (शालिनी)

	योग.	सू.	चं	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
१	चरयोग	पू. स्वा.	आर्द्रा	वि.	रो.	पुष्य	भ.	मू.
२	क्रकचयोग	१२ ति.	११	१०	९	८	७	६
३	दग्धयोग	१२ ति.	११	५	३	६	८	९
४	मृत्युयोग	ति. १।६।११	२।७।१२	१।१।६	भ. ९ १४	२।७ १२	३।८ ११	५।१० १५
५	सिद्धियोग	ति०	ति०	३।८ १३	७।२ १२	५।१० १५	१।६ ११	८।९ १४
६	उत्पातयोग	वि.	पू.	ध.	रे.	रो.	पुष्य	उ.
७	मृत्युयोग	अनु.	उ.	श.	अ.	मृ.	आश्ले.	ह.
८	कालयोग	ज्य.	अ.	पू.	भ.	आर्द्रा	म.	चि.
९	सिद्धियोग	मू.	श्र.	उ.	कृ.	पु.	पू.	स्वा.
१०	यमदंष्ट्रयोग	म. ध.	मू. वि.	कृ.भ.	पू. षा. पु.	उ. षा. अ.	रो. अ.	श्र. श.
११	यमघंट	म.	वि.	आ.	मू.	कृ.	रो.	ह.
१२	मुशलवज्र	म.	चि.	उ. षा.	ध.	उ.	ज्ये.	रो.
१३	अमृतसिद्धि	ह.	श्र.	अ.	अनु.	पुष्य	रे.	रो.

दुष्टयोगानां देशभेदेन परिहारः ।

कुयोगास्तिथिवारोत्थास्तिथिभोत्था भवारजाः ।
हूणवंगखशेष्वेव वर्ज्यास्त्रितयजास्तथा ॥ ३१ ॥

दुष्टयोगोंके परिहार कहते हैं-कि जो तिथि वारसे उत्पन्न क्रकच (वारदग्ध) आदि हैं तथा तिथि और वारसे उत्पन्न हैं। जैसे--" अनुराधा द्वितीयायाम्" इत्यादि तथा नक्षत्र वारसे उपन्न हैं जैसे-" याम्यं त्वाष्ट्रं वैश्वदेवं धनिष्ठार्यम्णं ज्येष्ठान्त्यं

रवेर्दग्धभं स्यात्'' इत्यादि और तिथिवार नक्षत्र तीनों हीसे उत्पन्न जैसे-''वर्जयेत् सर्वकार्येषु हस्तार्के पञ्चमीतिथौ'' इत्यादि हैं, ये समस्त दोष हूणदेश (बंग), बंगाला और (खानदेश) उत्तरखंडमें वर्जित हैं और देशोंमें निषिद्ध नहीं हैं ॥ ३१ ॥ (अनुष्टुप्)

समस्तशुभकृत्ये वर्ज्यपदार्थाः।

सर्वस्मिन्विधुपापयुक्तनुलवावर्द्धे निशाह्नोर्घटी-
त्र्यंशं वै कुनवांशकं ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयम् ।
उत्पातग्रहतोऽद्व्यहांश्च शुभदोत्पातैश्च दुष्टं दिनं
षण्मासं ग्रहभिन्नभं त्यज शुभे यौद्धं तथोत्पातभम् ॥ ३२ ॥

समस्त शुभकृत्योंमें वर्जित पदार्थ कहते हैं, कि चन्द्रमा तथा (पापग्रह) सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतुसे युक्त लग्न एवं नवांश भी सभी कार्योंमें त्याज्य हैं तथा मध्याह्न एवम् अर्द्धरात्रिके मध्य १ घटी अभिजित् मुहूर्त उत्तम होता है, परन्तु इसके ठीक मध्यके (घटी-त्र्यंश) २० पला (१० पूर्वकी १० परभागकी) भी त्याज्य हैं, ऐसे ही सूर्य चन्द्रग्रहण से पूर्व तीन और (उत्पात) प्रकृतिसे विरुद्ध होनेको उत्पात कहते हैं। सो तीन प्रकारके हैं-(१) दिव्य--केतुदर्शन, ग्रहनक्षत्रवैकृत, उल्का, निर्घात, परिवेषादि (२) अन्तरिक्ष--गंधर्वनगर, इंद्रधनुषादि (३) भौम--पृथ्वीसंबंधी भूमिकंप, वृक्षवैकृत, पशुवैकृत, अग्निजलवैकृतादि हैं, जिस दिन ऐसा कोई उत्पात हो उससे तथा ग्रहण दिनसे ७ दिन पर्यन्त शुभ कृत्य न करना, ऐसे ही केतु (पुच्छलतारा) के दर्शनमें भी जानना। और मतांतरसे ग्रहणका नियम सर्वग्रासमें ७ दिन, त्रिभागोंमें ६ दिन, अर्द्धग्रासमें ४ दिन, चौथाई ग्रासमें ३ दिन और १।२।३ अंगुल ग्रासमें १ दिन मात्र वर्ज्य है (शुभदोत्पातमें) में १ दिन वर्ज्य। शुभदोत्पात--बिजली गिरना, भूकम्प सन्ध्यासमयमें, निर्घातशब्द, परिवेष, रज बिना अग्निधूम, सूर्यबिम्ब रक्त उदयास्तमें, वृक्षोंमें आसव तेल, गोंद, फल, पुष्प निकलना, वसंतमें गौ तथा पक्षियोंकी मदवृद्धि, तारापतन; उल्कापतन, अग्निज्वलन, चटचटाना, वायुमें धूमरेखा, रक्तकमल, सन्ध्यामें अरुण (गुलाबी रङ्ग), आकाशमें क्षोभ, बिन ग्रीष्म नदी सूखना, अकस्मात् पृथ्वी फट जाना, जल-जीवोंका स्थलमें आना, अकस्मात पहाड़ उड जाना, दिव्य स्त्री, विमान, भूतगंधर्व नगर, अद्भुत दर्शन, दिनमें शुक्ररहित ताराओं का देखना, पर्वतोंमें बिना मनुष्य गीत तथा बाजे सुनना, ठण्ढे वायुमें शर्करा, मृग तथ पक्षियोंका नाचना, यक्ष राक्षसादिकोंका देखना, बिना मनुष्य मनुष्यकी वाणी सुनना, दिशाओं में धूमता, अन्धकार, अकाल हिमपात, आकाशका कृष्णरङ्ग होना, स्त्री तथा गौ पक्षी बक थोडा मृगपक्षियोंके अन्य रूप जीव उत्पन्न होना इत्यादि हैं। पापग्रहवेधित नक्ष

तथा जिस नक्षत्रमें ग्रहयुद्ध हुआ हो और जिस नक्षत्रमें दारुण उत्पात हुआ हो सब छः महीने पर्यन्त वर्ज्य हैं ॥ ३२ ॥ (शा० वि०)

ग्रासभेदेन ग्रहणीयनक्षत्रनिषेधः ।

नेष्टं ग्रहर्क्षं सकलार्द्धपादग्रासे क्रमात्तर्कगुणेन्दुमासान् ।

पूर्वं परास्तादुभयोस्त्रिघस्रा ग्रस्तेऽस्तगे वाभ्युदितेऽर्द्धखण्डे ॥ ३३ ॥

ग्रासपरत्वसे नक्षत्रकी वर्जनीयता कहते हैं कि, सर्वग्रास ग्रहण हो तो ग्रहणनक्षत्र छः महीने, अर्द्धग्रासमें तीन महीने और चौथाई ग्रासमें एक महीने वर्जित करना और ग्रस्तास्त हो तो पहलेके तीन दिन वर्ज्य हैं परके शुभ हैं । यदि ग्रस्तोदय हो तो पीछेके तीन दिन नेष्ट, पूर्वके शुभ हैं, जो अर्द्धग्रास हो तो पूर्व तथा पीछेके भी ३ । ३ दिन । सर्वग्रासमें सात ही दिन हैं ॥ ३३ ॥ (इं० व०)

सामान्यतोऽवश्यवर्ज्यानि पञ्चांगदूषणादीनि ।

जन्मर्क्षमासतिथयो व्यतिपातभाद्रा वैधृत्यमापितृदिनानि तिथिक्षयर्द्धी ।

न्यूनाधिमासकुलिकप्रहरार्धपातविष्कम्भवज्रघटिकात्रयमेव ॥ वर्ज्यम् ३४॥

शुभकृत्योंमें जन्मके नक्षत्र, महीना, तिथि आदि वर्ज्य हैं । मासप्रमाण चान्द्र माससे जन्मतिथिसे ३० दिन पर्यन्तका कहा है, बिष्कम्भादि योगोंमें व्यतीपात तथा वैधृति सर्वकर्ममें वर्जित हैं तथा भद्रा, अमावस्या (पितृदिन) मातापिताका श्राद्धदिन (क्षयतिथि) जो एक वारमें तीन तिथि स्पर्श होती हैं, (वृद्धितिथि) जो एक तिथि तीन वारोंको स्पर्श करती हैं तथा (क्षयमास) जिस चान्द्रमहीनेमें दो अमाओंके बीच सूर्यसंक्राति दो आवें (अधिकमास) जो दो अमावस्याओंके बीच सूर्य संक्रांति न आवे, एवं कुलिक योग, प्रहरार्द्ध (ये आगे कहेंगे) तथा महापात महावैधृति (ये योग गणितसे ज्ञात होते हैं) और विष्कम्भयोग वज्रयोगके आदि कितनी घटिका वर्जित करनी, उक्त दोषोंमें तिथि उपलक्षणसे नक्षत्रयोगोंमें भी क्षयवृद्धिके परिहार ग्रन्थान्तरोंमें हैं, कि बृहस्पति केन्द्रमें हो तो (क्षय) अवमका और बुध केन्द्रमें हो तो (वृद्धि) त्रिस्पृशाका दोष नहीं होता ॥ ३४ ॥ (व० ति०)

पक्षरन्ध्रतिथीनां वर्ज्यघटिकाः ।

परिघार्धं पंच शूले षट् च गण्डातिगण्डयोः ।

व्याघाते नवनाडयश्च वर्ज्याः सर्वेषु कर्मसु ॥ ३५ ॥

परिघयोगका पूर्वार्ध, शूलयोगकी प्रथम पांच घटी, गण्ड एवम् अतिगण्डकी छः घटी, व्याघातकी नौ घटी आदिकी सर्व कर्ममें वर्जित हैं ॥ ३५ ॥ (अनु०)

वेदाङ्गाष्टनवार्केन्द्रपक्षरन्ध्रतिथौ त्यजेत् ।
वस्वंकमनुतत्त्वाशाशरा नाडीः पराः शुभाः ॥ ३६ ॥

चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, चतुर्दशी ये पक्षरन्ध्रतिथि हैं, आवश्यकतामें इनके ८।२।१४।२५।१०।५। इतनी घटिका आदिकी वर्जित हैं जैसे चतुर्थीकी ८ षष्ठीकी ९ अष्टमीकी १४ नवमीकी २५ द्वादशीकी १० चतुर्दशीकी ५ घटी वर्जित करके शेष शुभकृत्यमें ग्राह्य हैं ॥ ३६ ॥ (अनुष्टुप्)

कुलिकादिदोषाः ।

कुलिकः कालवेला च यमघण्टश्च कण्टकः ॥
वाराद्द्विघ्न क्रमान्मन्दे बुधे जीवे कुजे क्षणः ॥ ३७ ॥

वर्तमान वारसे गिनकर जितनी संख्यामें शनि हो उसे दूना कर जो अङ्क हो उस दिन उतना मुहूर्त कुलिक होता है, तथा वर्तमान वारसे जितनेमें बुध हो उसे दूनाकर जो अङ्क हो उतनी संख्याका मुहूर्त कालवेला होता है। ऐसे ही वर्तमान वारसे बृहस्पति जितनी संख्या में हो उसे दूनाकर यमघण्ट मुहूर्त होता है, तथा वर्तमान वारसे मङ्गल जिस संख्यामें हो उसे दूना कर वह कंटक मुहूर्त होता है। उदाहरण जैसे--रविवारके दिन रविसे शनि सातवां है इसे दूना कर १४ हुआ तो रविवारके दिन चौदहवां मुहूर्त कुलिक हुआ तथा रविसे बुध चौथा है द्विगुण ८ हुआ इस दिन आठवां मुहूर्त कालवेला है। तथा इससे बृहस्पति पांचवा २ गुण १० इस दिन दशवां मुहूर्त यमघण्ट है, ऐसे ही रविसे मंगल तीसरा २ गुण ६ रविवारको छठा मुहूर्त कण्टक है, इसी प्रकार सभी वारोंके मुहूर्त जानने। ये मुहूर्त ४।४ घटीके होते हैं, शुभकृत्योंमें वार्जित हैं किन्तु किसी आचार्यका मत ऐसा भी है कि, इन मुहूर्तों का उत्तरार्द्ध निषिद्ध है, पूर्वार्द्ध दूषित नहीं और रात्रिमें इनका दोष नहीं, अर्धयाम सर्वदा त्याज्य है, इसको आगे कहेंगे ॥ ३७ ॥

कुलिक आदि मुहूर्तचक्रम् ।

	रवि.	चन्द्र.	मंगल.	बुध.	बृह.	शुक्र.	शनि.
कुलिक. दुर्मुहूर्त.	१४	१२	१०	८	६	४	२
कालवेला.	८	६	४	२	१४	१२	१०
यमघंट	१०	८	६	४	२	१४	१२
कंटक.	६	४	२	१४	१२	१०	८
अर्द्धयाम.	७	१	३	९	१५	५	९

यामार्धचक्रम् ।

वार	यामार्ध. संख्या.	प्रहर.	तिथि.
र.	४	१२	१
च.	७	२४	२८
मं.	२	४	८
बु.	५	१६	२०
गु.	८	२८	२२
शु.	५	८	१२
श.	६	२०	२४

सूर्यादिवारे दुर्मुहूर्ताः ।

सूर्ये षट्स्वरनागदिङ्मनुतिताश्चन्द्रेऽब्धिषट्कुञ्जरा-
ङ्कार्का विश्वपुरन्दराः क्षितिसुते द्व्यब्ध्यग्नितर्का दिशः ।
सौम्ये द्व्यब्धिगजाङ्कदिङ्मनुमिता जीवे द्विषड्भास्कराः
शक्राख्यास्तिथयः कलाश्च भृगुजे वेदेषुतर्कग्रहाः ॥ ३८ ॥
दिग्भास्करा मनुमिताश्च शनौ शशिद्विनागा दिशोभवदिवाकरसंमिताश्च ।
दुष्टक्षणः कुलिककण्टककालवेलाः स्युश्चार्धयामयमघण्टगताः कलांशाः ॥ ३९ ॥

सुगमतासे दोष जाननेके हेतु दुर्मुहूर्तादि कहते हैं कि, रविवारको ६।७।८।१०।१४ । सोमवारको ४ ।६ । ८ । ९ । १२ । १३ । १४ । मंगलको २ । ४ । ३ । ६ । १० । बुधको २ । ४ । ८ । ९ । १० । १४ । बृहस्पतिवारको २ । ६ । १२ । १४ । १५ । १६। शुक्रको ४ । ५ । ६ । ९ । १० । १२ । १४ । शनिवारको १ । २ । ८ । १० । ११ । १२ । ये मुहूर्त निंद्य अर्थात् दुष्टक्षण, कुलिक, कण्टक, कालवेला अर्धयाम यमघण्ट नामक यथावकाश होते हैं, जैसे--रविवारके दिन १० वां मुहूर्त दुर्मुहूर्त्त, एवं कुलिक भी ६ छठा, कण्टक ७ सातवां ८ आठवां अर्धयाम तथा आठवां कालवेला भी और १० दशम यमघंट संज्ञक होते हैं। ऐसे ही सोमवारादिमें भी उक्त संख्याओंमें उक्त नामक जानने, मुहूर्त २ घटीका होता है परन्तु दिनमान-न्यूनाधिक होनेसे यहां दिनका षोडशांश लिया है, जिस दिन जो दिनमान है उसमें १६ से भाग लेकर जो मिले उतनेका एक मुहूर्त्त जानना ॥३८॥३९॥ (शा० वि० वस० ति०)

विवाहादिशुभकृत्ये होलिकाष्टकनिषेधः।

विपाशेरावतीतीरे शुतुद्र्याश्च त्रिपुष्करे ।
विवाहादिशुभे नेष्टं होलिकाप्राग्दिनाष्टकम् ॥ ४० ॥

विपाशा (व्याशा) एवम् इरावती नदी (पंजाब देशमें हैं] के तीर तथा शुतुद्रु शतलज के तीर और त्रिपुष्कर देशमें [होलाष्टक] फाल्गुन शुद्ध अष्टमीसे फाल्गुन "हुताशनी" पूर्णिमा पर्यंत विवाहादि शुभ कार्य शुभ नहीं, अन्य देशोंमें इनका दोष नहीं ॥ ४० ॥

मृत्युक्रकचादीनामपवादः ।

मृत्युक्रकचदग्धादीनिन्दौ शस्ते शुभां जगुः ।
केचिद्यामोत्तरं चान्ये यात्रायामेव निन्दिताम् ॥ ४१ ॥

आनन्दादि योगोंमें मृत्युयोग, क्रकच, वारदग्ध (दग्धयोग) "सूर्येशपञ्चाग्नीत्यादि" और विषयोग, हुताशन योगादि, पूर्वोक्त दुष्टयोग चन्द्रमाके गोचर प्रकरणोक्त प्रकारसे शुभ होनेमें शुभ अर्थात् उक्त दुष्टफल छोड़कर शुभ फल देनेवाले होते हैं। किसी आचार्यका मत ऐसा भी है कि, उक्त दुष्टयोगोंका एक प्रहरसे उपरान्त दोष नहीं है। और किसी किसीका मत है कि, उक्त योग यात्राहीमें वर्जित हैं और कार्योंमें नहीं ॥ ४१ ॥ (अनु०)

अयोगे सुयोगेऽपि चेत्स्यात्तदानीमयोगं निहत्यैष सिद्धिं तनोति।
परे लग्नशुद्ध्या कुयोगादिनाशं दिनार्द्धोत्तरं विष्टिपूर्वं च शस्तम् ॥४२॥

जिस दिन मृत्यु क्रकचादि कोई दुष्टयोग हो तथा सिद्धि (अमृतसिद्धि) योग भी हो तो दुष्टयोगके फलको नाश करके कार्यसिद्धि देता है। अन्य आचार्योंका मत है कि, (लग्नशुद्धि) लग्न समीचीन बलवान् होनेमें मृत्युक्रकचदग्धादि योगोंका नाश होता है और भद्रा व्यतीपात आदिकोंका दोष मध्याह्नपर्यंत होता है, मध्याह्नोत्तर नहीं है; ऐसे ही भौमवार प्रत्यरि जन्मनक्षत्रका भी है ॥ ४२ ॥ (भुजङ्गप्रयात)

भद्रानिषेधः।

शुक्ले पूर्वार्द्धेऽष्टमीपञ्चदश्योर्भद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्द्धे।
कृष्णेऽन्त्यार्द्धे स्यात् तृतीयादशम्योः पूर्वे भागे सप्तमीशम्भुतिथ्योः ॥४३॥

शुक्लपक्षकी अष्टमी, पूर्णिमाके पूर्वार्ध एवं एकादशी, चतुर्थीके उत्तरार्धमें भद्रा होती है, कृष्णपक्षकी तृतीया दशमीके उत्तरार्धमें तथा सप्तमी, चतुर्दशीके पूर्वभाग (पूर्वार्ध) में भद्रा होती है, यह भद्रा विष्टि करण है। करण गिननेकी रीतिसे उक्त तिथियोंके उक्त दलोंमें यह करण आता है, यह बड़ा दोष समस्त शुभ कृत्योंमें वर्जित है ॥ ४३ ॥ (शालिनी)

भद्राया मुखपुच्छविभागः।

पञ्चद्व्यद्रिकृताष्टरामरसभूयामादिघट्यः शरा
विष्टेरास्यमसद्गजेन्द्ररसरामाद्यश्विबाणाब्धिषु।
यामेष्वन्त्यघटीत्रयं शुभकरं पुच्छं तथा वासरे
विष्टिस्तिथ्यपरार्द्धजा शुभकरी रात्रौ तु पूर्वार्द्धजा ॥ ४४ ॥

भद्राके मुख पुच्छविभाग कहते हैं कि, चतुर्थ्यादि तिथियोंके पञ्चमादि प्रहरोंके आदिकी पांच (५) घटी भद्राका मुख होता है। जैसे—चतुर्थीके पञ्चम प्रहरके

आदिकी ५ घटी, अष्टमीके दूसरे प्रहरकी ५ घटी, एकादशीके सातवें प्रहरकी, पूर्णिमाके चौथे, तृतीयाके आठवें, सप्तमीके तीसरे, चतुर्दशीके पहले प्रहरकी पांच घटी भद्राका मुख होता है। यह अति दोषद है। चतुर्थीके आठवें, अष्टमीके प्रथम, एकादशीके छठे, पूर्णिमाके तीसरे, तृतीयाके सातवें, सप्तमीके दूसरे, दशमीके पांचवें, चतुर्दशीके चौथे प्रहरकी अन्तिम (पिछली) तीन (३) घटी पुच्छसंज्ञक होती हैं। यह पुच्छभद्रा दुष्ट नहीं होती अर्थात् शुभ कार्यमें ग्राह्य है, यहां प्रहरगणना तिथिके आरम्भसे है। तिथिका सर्व भोग्यके आठ भाग ८ प्रहर मानने चाहिये। भद्राके अंगविभाग ग्रन्थान्तरोंमें ऐसे हैं-मुखमें ५, गलेमें १, हृदयमें ११, नाभिमें ४, कटिमें ६, पुच्छमें ३ घटी हैं, इनमेंसे पुच्छकी ३ घटी शुभ हैं ॥ श्रीपत्याचार्य कहते हैं कि, एक समय दैत्योंने देवताओंको जीत लिया तब महादेवजीने क्रोधसे भालनेत्र खोला, खोलते ही क्रोधाग्निका एक कण निकला वह खरमुखी, तीन पैरकी, लांगूल लिये, सात हाथवाली, सिंहसमान गला, कृशोदरी, प्रेतवाहिनी मूर्ति उत्पन्न होकर दैत्योंका संहार करती हुई। तब देवताओंने स्तुति करके इसका नाम भद्रा रक्खा और बवादि करणोंमें स्नान एवं भाग दिया। आवश्यक कृत्यमें भद्राका परिहार कहते हैं कि, तिथि उत्तरार्धकी भद्रा दिनमें तथा तिथि पूर्वार्द्धकी रात्रिमें शुभ होती है और आचार्यान्तरमत ऐसा भी है कि, भद्रा, मंगळवार, व्यतीपात, वैधृति, मृत्युयोग ये मध्याह्नसे ऊपर दोष नहीं देते ॥ ४४ ॥ (शा० वि०)

भद्रानिवासस्तत्फलञ्च।

कुम्भकर्कद्वये मर्त्ये स्वर्गेऽब्जेऽजात्त्रयेऽलिगे।
स्त्रीधनंजूकनक्रेऽधो भद्रा तत्रैव तत्फलम् ॥ ४५ ॥

भद्रावास कहते हैं कि-कुम्भ, मीन, कर्क, सिंहके चन्द्रमामें भद्रा हो तो मृत्युलोकमें तथा मेष, वृष, मिथुन, वृश्चिकमें स्वर्ग लोकमें और कन्या, धन, तुला, मकरमें पाताललोकमें भद्राका निवास है। जिस दिन जिस लोकमें भद्रा रहती है वहीं अपना फल देती है, अन्य लोकोंमें नहीं, यह भी परिहार ही है ॥ ४५ ॥ (अनु०)

कालशुद्धौ गुरुशुक्रास्तादिके निषेध्यवस्तूनि।

वाप्यारामतडागकूपभवनारम्भप्रतिष्ठे व्रता-
रम्भोत्सर्गवधूप्रवेशनमहादानानि सोमाष्टके।
गोदानाग्रयणप्रपाप्रथमकोपाकर्मवेदव्रतं
नीलोद्वाहमथातिपन्नशिशुसंस्कारान्सुरस्थापनम् ॥ ४६ ॥

दीक्षामौञ्जिविवाहमुण्डनमपूर्वं देवतीर्थेक्षणं
संन्यासाग्निपरिग्रहौ नृपतिसंदर्शाभिषेकौ गमम् ।
चातुर्मास्यसमावृती श्रवणयोर्वेधं परीक्षां त्यजेद्
वृद्धत्वास्तशिशुत्व इज्यसितयोर्न्यूनाधिमासे तथा ॥ ४७ ॥

कालशुद्धि कहते हैं कि, नवीन बावडी बनाना, बगीचा, तालाब, कूवाँ, गृह इनका आरम्भ, गृहप्रतिष्ठा (गृहप्रवेश) व्रतोंका आरम्भ, व्रतोंका उद्यापन, तुलादि सोलह महादान, सोमयाग, अष्टकाश्राद्ध, गोदान (केशान्तकर्म), इष्टिसंचयन, जलशाला (प्याऊ), प्रथम उपाकर्म (श्रावणी), वेदव्रत, उपनिषद्व्रत, महानाम्न्यादि व्रत, काम्यवृषोत्सर्ग "न कि ग्यारहवें दिनवाला" तथा बालकोंके जातकर्मादि संस्कार किंतु जिनका मुख्यकाल व्यतीत होगया हो, दीक्षा (मन्त्रग्रहण) चूडाकर्म, अपूर्व देवता एवं तीर्थका दर्शन, अग्निहोत्र, चातुर्मास्ययज्ञ, समावर्त्तन, कर्णवेध तप्तमाषादि परीक्षा (जो दिव्य न्यायविषयमें होती है) नववधूप्रवेश, देवताकी प्रतिष्ठा, व्रतबन्ध, विवाह, संन्यासग्रहण, प्रथम रजोदर्शन, राज्याभिषेक, यात्रा इतने कृत्य बृहस्पति शुक्रके अस्तमें, बालत्वमें, वृद्धत्वमें और अधिमास (मलमास) में क्षयमासमें न करे । इसमें ग्रंथांतरीय निर्णय है कि "सीमन्तजातकादीनि प्राशनान्तानि यानि वै । न दोषो मलमासस्य मौढ्यस्थगुरुशुक्रयोः ॥ १ ॥" "अतीतकालान्यखिलानि तानि कार्याणि सौम्यायनगे दिनेशे । सिते गुरौ चापि हि दृश्यमाने तदुक्तपञ्चाङ्गदिनेऽप्यखण्डे ॥ २ ॥" सीमन्त, जातकर्मसे लेकर अन्नप्राशनपर्यंत जितने शिशुसंस्कार हैं नियत कालपर होनेसे इनके लिये मलमास, क्षयमास, गुर्वस्त, शुक्रास्तका दोष नहीं ! जब उक्त कृत्योंका मुख्यकाल (जैसे नामकर्म ११।१२ दिनमें, अन्नप्राशन छठे महीनेमें नियत है) किसी कारण बीत जाय तो वह कृत्य उत्तरायणमें बृहस्पति शुक्रके उदयमें और उस कृत्यके पञ्चांग अखण्ड (समस्त शुद्ध) में करना ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ (शा० वि०)

सिंहमकरस्थ गुर्वादौ वर्ज्यानि !

अस्ते वर्ज्यं सिंहनक्रस्थजीवे वर्ज्यं केचिद्वक्रगे जातिचारे ।
गुर्वादित्ये विश्वघस्रेऽपि पक्षे प्रोचुस्तद्वद्दन्तरत्नादिभूषाम् ॥ ४८ ॥

जो जो कार्य बृहस्पतिके अस्तमें वर्जित कहे हैं वे ही कार्य सिंह तथा मकरके बृहस्पतिमें भी वार्जित हैं परन्तु आचार्यांतरमतसे गया, गोदावरी यात्रामें दोष नहीं । कितने ही आचार्यों का मत है कि, बृहस्पतिके वक्र एवम् अतिचारमें भी उक्त कृत्य वार्जित है परन्तु २८ दिन

पर्यन्त । और ऐसा भी है कि गोचरसे ५।९।७।२।११ राशिमें बृहस्पति जिसका हो उसको बक्रातिचारमें भी उक्त कृत्योंका दोष नहीं; यह भी मतान्तर है । तथा (गुर्वादित्य) गुरु सूर्यके एकराशिगत होनेमें भी उक्त कृत्य वर्जित हैं। मतान्तरसे (गुर्वादित्य) बृहस्पतिके राशिमें सूर्य; सूर्यके राशिमें बृहस्पति होनेमें कहा है उसमें सब शुभ कर्म वर्जित हैं परन्तु मुख्य पक्ष पूर्वोक्त ही हैं तथा विश्वघस्रपक्ष जिस पक्षमें दो (२) तिथियोंका अवम होकर तेरह (१३) दिनका पक्ष हो इसमें भी उक्त कृत्य वर्जित हैं और हस्तिदन्तादि तथा रत्नादि-संबन्धी भूषणधारण भी उक्त दोष (सिंहे गुरौ आदि) में न करना ॥ ४८ ॥ (शालि०)

सिंहस्थगुरोः प्रकारत्रयेण परिहारः ।

सिंहे गुरौ सिंहलवे विवाहो नेष्टोऽथ गोदोत्तरतश्च यावत् ।
भागीरथीयाम्यतटे हि दोषो नान्यत्र देशे तपनेऽपि मेषे ॥ ४९ ॥

सिंहस्थ गुरुके परिहार तीन प्रकारसे कहते हैं, विवाह तथा मतांतरसे व्रतबन्ध मात्रमें सिंहस्थ गुरुका दोष है अन्य कार्योंमें नहीं है वह भी सिंहराशिके सिंहांशक १३।२० अंशसे १६।४० अंशपर्यन्त समस्त सिंहराशिके गुरुमें नहीं, गोदावरीके उत्तर भागीरथीके दक्षिण अर्थात् गंगा गोदावरी नदियोंके बीच जो देश हैं उनमें उक्त दोष हैं अन्य देशोंमें नहीं और मेषके सूर्य (सौरमान) के वैशाखमें भी उक्त दोष सर्वत्र नहीं है ॥ ४९ ॥ (इ० व०)

पूर्वोक्तवाक्यानां निर्गलितार्थः ।

मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः ।
गङ्गागोदान्तरं हित्वा शषाङ्घ्रिषु न दोषकृत् ॥ ५० ॥
मेषेऽर्के सद्व्रतोद्वाहौ गङ्गागोदान्तरेऽपि च ।
सर्वः सिंहगुरुर्वर्ज्यः कलिङ्गे गौडगुर्जरे ॥ ५१ ॥

पूर्वोक्त मतको पुष्ट करते हैं कि, मघा आदि पांच चरण--मघाके चार (४) पूर्वाफाल्गुनीके (१) प्रथम पर्यन्त बृहस्पति जबतक रहे तबतक सभी देशोंमें निंद्य है, अन्य चरणों (पूर्वाके तीन उ०फा०के प्रथम) में गंगा गोदावरीके मध्यवर्ती देशों ही मात्रमें वर्जित है अन्य देशों में नहीं ॥ ५० ॥ और सिंहके बृहस्पतिमें मेषका हो तो गंगा गोदावरीके मध्यदेशोंमे भी विवाह व्रतबन्ध शुभ होते है। समस्त सिंहका गुरु कलिंग, गौड; गुर्जर देशोंमें वर्ज्य है, अन्यत्र नहीं ॥ ५१ ॥ (अनु०)

मकरस्थिरगुरोः प्रकारद्वयेन परिहारः ।

रेवापूर्वे गण्डकीपश्चिमे च शोणस्योदग्दक्षिणे नीच इज्यः ।
वर्ज्यो नायं कौङ्कणे मागधे च गौडे सिन्धौ वर्जनीयः शुभेषु ॥ ५२ ॥

(नीच) मकरके बृहस्पतिका दोषपरिहार दो प्रकारसे कहते हैं कि, रेवा (नर्मदा) दक्षिण अमरकंटकसे जबलपूर विंध्यके पार्श्व २ होशङ्गावाद, ओंकारनाथ, मण्डलेश्वरमहेसर भडोचके समीप खम्भातकी खाड़ीमें द्वारिकाके समीप पश्चिम समुद्रमें मिली है उसके पूर्व भाग के देशमें तथा (गंडकी) नेपाल जिलाके पश्चिम भाग हिमालय मुक्तिनाथसे पटना हरिहर क्षेत्र पर गंगामें मिली इससे लेकर मानपर्वत व सारस्वतदेश अर्थात् द्वारिकाके उत्तर पश्चिम समुद्रपर्यंत गण्डकीका पश्चिम है, इन देशोंमें तथा शोणनद (अमरकंटकसे विंध्याचल होकर जिला आरा और मनेरके बीच गंगामें मिला) इसके दक्षिण उडेला, सिरगुजा, कोहारदगा, रहता, सगड, विहार आदि एवम् उत्तरमें बुंदेलखण्ड, प्रयागराज (इलाहावाद), अवध, रुहेलखंड, दिल्ली (इन्द्रप्रस्थ) आगरा, मथुरा, नदीनाथ, ज्वालामुखी आदि उत्तर हिमालयपर्वत इन देशोंमें मकरगुरुका दोष नहीं तथा (कोंकण) मुंबईसे १४० मील दक्षिण समुद्रके तीर (गौडदेश) गौड, बंगाला, मालदह, पुरनियाँ (लक्ष्मणावती), जन्नताबाद, (मगधदेश) जिला गया, पटना (सिंधुदेश) अटक और झेलमके बीच जिसको सिंधुसागर कहते हैं इन देशोंमें शुभकार्य वार्जित हैं । इन दोनों ही पक्षोंसे अतिरिक्त देशोंको ग्रन्थांतरीयमतसे ६० दिन वार्जित हैं तथा मकरमें मकरांशमात्र वार्जित है समस्त मकरगुरु तथा सभी देशोंके लिये नहीं * ॥ ५२ ॥ (शालिनी)

लुप्तसंवत्सरदोषापवादः ।

गोऽजान्त्यकुम्भेतरभेऽतिचारगो नो पूर्वराशिं गुरुरेति वक्रितः ।
तदा विलुप्ताब्द इहातिनिन्दितः शुभेषु रेवासुरनिम्नगान्तरे ॥ ५३ ॥

वृष, मेष, मीन, कुम्भ, राशियोंके विना अन्य राशियोंमें बृहस्पति अतिचारसे (दश ग्यारह महीने) दूसरी राशिपर जाकर कुछ दिनोंमें वक्र होकर पुनः पूर्वराशिमें न आवे तो वह संवत्सर लुप्त कहाता है, यह शुभ कृत्योंमें अतिनिंदित है । यदि १ । २ । ११ । १२ राशियोंमें अतिचार करे तो लुप्तसंवत्सरका दोष नही होता । देशभेदसे

*** इस विषयमें संवत १९४६ ईसवी सन् १८९० में कोंन्ही २ मत्सरियोंके उत्तेजनपर मैंने समाचार पत्रोंमें इस विषयकी समालोचना की थी जिसपर काशीवासी ६४ वर्ष विद्वान् शास्त्रियोंकी ओरसे एक निर्णयसम्बन्धी विजयपत्र मिला, जिसमें उपरोक्त अनेक प्रमाणोंसे प्रतिपादित है ।**

परिहार है कि रेवा (नर्मदा) और (गङ्गा) भागीरथीके बीचके देशोंमें लुप्त संवत्सरका दोष है अन्यत्र नहीं, आचार्यांतरमतसे बृहस्पति शुक्रके सम सप्तम (एकसे दूसरी सातवीं राशि) में होनेपर भी उक्त देशोंमें अस्तके तुल्य दोष है ॥ ५३ ॥ (वंशस्थवृ०)

वारप्रवृत्तिः ।

पादोनरेखापरपूर्वयोजनैः पलैर्युतोनास्तिथयो दिनार्धतः ।
ऊनाधिकास्तद्विवरोद्भवैः पलैरूर्ध्वं तथाधोदिनपप्रवेशनम् ॥ ५४ ॥

लंकासे सुमेरुपर्यंत एक समसूत्र बांधकर उसके नीचे जो जो देश आवें वह मध्य रेखा है, जहांसे उस रेखागत कोई देश समीप हो वह जितने योजन (चारकोशका एक) हो वे देशांतर योजन कहाते हैं, उन योजनोंमें चतुर्थांश घटाके पंद्रह, (१५) में (न्यूनाधिक) पर योजन हो तौ जोडना, पूर्व हो तो घटाना, जिसदिन वारप्रवेश देखना है उस दिनके दिनार्द्धमें (न्यूनाधिक) पंद्रहमें न्यून वा अधिक किया गया जो देशांतर है वह (१५) से अधिक हो तो उसमें १५ घटाना, यदि १५ से न्यून हो तो पंद्रहमें उसे घटा देना यह वारप्रवृत्ति होती है. उसमें भी स्मरण चाहिये कि, दिनार्द्ध संस्कार विशिष्ट अंकसे यदि १५ न्यून हो तो सूर्योदयसे पीछे उक्त पलोंमें यदि १५ से न्यून वह गणितागत अंक हो तो सूर्योदयसे प्रथम ही वार प्रवेश जानना. उदाहरण—काशीपुरी प्राक् मध्यरेखा कुरुक्षेत्रसे-६३ योजन है चौथाई घटाया ४७।१५ प्राक्योजना होनेसे १५ में पल ४७ घटाये तो १४ । १३ हुए, दिनार्द्ध १७ । २ से न्यून होनेसे १४ । १३ घटाया २ । ४९ शेष रहा. दिनार्द्धसे न्यून गणितागतअंक होनेसे सूर्योदयसेपीछे २ । ४९ में वारप्रवेश होगा ॥ ५४ ॥ (उपजा०)

वारप्रवृत्तिप्रयोजनपुरस्सरा होराः ।

वारादेर्घटिका द्विघ्नाः स्वाक्षह्रच्छेषवर्जिताः ।
सैकास्तष्टा नगैः कालहोरेशा दिनपात्क्रमात् ॥ ५५ ॥

वारप्रवृत्तिकी इष्ट घटी द्विगुण करके २ जगह स्थापन करना, एक जगे (५) से भाग लेकर लाभ छोड़के शेष द्वितीयस्थान स्थितमें घटा देना शेष जो रहे उसमें १ जोड़ना । सातसे अधिक हो तो (७) से भाग लेकर शेष कालहोरेश दिनके वारसे गिनकर जानना ! ऐसे ही एक दिनमें सभी ग्रहोंकी होरा जाननी. एक होरासे दूसरी होरा उससे छठे ग्रहकी होती है, जैसे रविवार प्रवेश इष्ट घटी ६ में हुआ द्विगुण (१२) दो जगे स्थापन किया एक जगे (५) से भाग लेकर २ पाया दूसरे स्थानके १२ में घटाया १० रहा इसमें ७ से भाग लेकर शेष ३ रहा एक और जोड़ दिया ४ हुए, रविवारके दिनकी होरा देखनी है इसलिये रविसे चौथी

बुधकी होरा हुई। यहां वारप्रवृत्ति केवल कालहोराके निमित्त है और कार्योंमें वार सूर्योदयसे ही माना जाता है यह वसिष्ठसिद्धान्तमें लिखा है ॥ ५५ ॥ (अनु०)

कालहोराप्रयोजनम्।

वारे प्रोक्तं कालहोरासु तस्य धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेऽस्य।
कुर्याद्दिक्शूलादि चिन्त्यं क्षणेषु नैवोल्लंघ्यः परिघश्चापि दण्डः ॥५६॥

कालहोराका प्रयोजन है कि, जो कार्य जिस वारमें करना कहा है वह उसके कालहोरामें हरएक वारमें कर लेना, जैसे रविवारके दिन प्रवेशका निषेध है परन्तु चंद्र बुध गुरु शुक्रके होरामें रविवारके दिन भी आवश्यकमें प्रवेश कर लेना, ऐसे ही जिस नक्षत्रमें जो कार्य नहीं करना कहा है उसमें यदि आवश्यक हो तो उस नक्षत्र में जिस मुहूर्तमें पूर्वोक्त नक्षत्रके स्वामीकी कालहोरा हो उसमें वह कृत्य कर लेना। मुहूर्तके स्वामी विवाहप्रकरणमें कहे हैं. उक्त विषयके मुहूर्तमें इतना अवश्य स्मरण चाहिये कि दिक्शूल तथा परिघदण्डादि विचार लेने, इनका विचार यात्राप्रकरणमें है ॥ ५६ ॥ (शालिनी)

मन्वादियुगादीनां निर्णयस्तन्निषेधश्च।

मन्वाद्यास्त्रितिथौ मधौ तिथिरवी ऊर्ज्जे शुचौ दिक्तिथी-
ज्येष्ठेऽन्त्ये च तिथिस्त्विषे नव तपस्यश्वाः सहस्ये शिवाः।
भाद्रेऽग्निश्च सिते त्वमाष्टनभसः कृष्णे युगाद्याः सिते
गोऽग्नी बाहुलराधयोर्मदनदर्शौ भाद्रमाघासिते ॥ ५७ ॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ प्रथमं शुभाशुभप्रकरणम् ॥ १ ॥

चैत्र शुक्लपक्षकी ३। १५ कार्तिक शुक्लकी १५। १२ आषाढशुक्लकी १०। १५ ज्येष्ठ तथा फाल्गुनकी १५ आश्विन शुक्लकी माघशुक्लकी ७ पौषशुक्लकी ११ भाद्रशुक्लकी ३ श्रावणकृष्णकी ३० (अमा) ८ (अष्टमी) ये मन्वादि हैं और कार्तिकशुक्लकी ९ वैशाखशुक्लकी ३ भाद्रकृष्णकी १३ माघकी ३० (अमा) ये युगादि हैं, इतनी तिथियां पुण्यपर्व हैं, इनमें व्रतबंध विद्यारंभ व्रतोद्यापनमें अनध्याय मानते हैं तथा नित्य पढनेमें भी अनध्याय है और प्रकार तत्कालीन अनध्याय-सन्ध्यागर्जन होनेमें, निर्घातशब्द, भूकम्प, उल्कापतनमें तत्कालमात्र तथा और एक आरण्यक समाप्त करके एक दिनरात तथा पूर्णिमा, चतुर्दशी, अष्टमी, राहुसूतक, ऋतुसन्धिमें, श्राद्धभोजन करके, श्राद्धमें दान लेके, (पशु) मेढक नेवला कुत्ता सर्प बिल्ली चूहा आदिके गुरु शिष्योंके बीचमें आजानेमें एक दिनरात, वज्र

पढनेमें, इन्द्रधनुषमें गधा ऊँट गीध उल्लू कौवाओंके अति दुःखित बडा शब्द करनेमें, प्रेत, शूद्र, चांडाल, श्मशान पतितके समीप जानेमें भोजनोत्तर गीले हाथपर्यंत, अर्द्धरात्रिमें, अति-प्रचण्ड वायु चलनेमें, रजवर्षणमें दिग्दाह, सन्ध्यामें, नीहारमें भयस्थानमें, दौडनेमें, दुर्गन्धमें, श्रेष्ठजनके अपने घर आनेमें, गधा ऊँट हाथी घोडेकी सवारीमें, वृक्षारोहणमें तात्कालिक अनध्याय होते हैं और भी अनध्याय धर्मशास्त्रोक्त सूतकादि भी हैं ॥
॥ ५७ ॥ (शार्दूल वि० वृ०)

इति महीधरकृतायां मुहूर्तचिन्तामणिभाषाटीकायां प्रथमं
शुभाशुभप्रकरणं समाप्तम् ॥ १ ॥

अथ नक्षत्रप्रकरणम् ।

नक्षत्रस्वामिनः ।

नासत्यान्तकवह्निधातृशशभृद्रुद्रादितीज्योरगा
ऋक्षेशाः पितरो भगोऽर्यमरवी त्वष्टा समीरः क्रमात् ।
शक्राग्नी खलु मित्र इन्द्रनिर्ऋतिक्षीराणि विश्वे विधि-
र्गोविन्दो वसुतोयपाजचरणाहिर्बुध्न्यपूषाभिधाः ॥ १ ॥

नक्षत्रोंके स्वामी कहते हैं--अश्विनीके अश्विनीकुमार । भरणीके यम । ऐसे ही कृत्तिकाका अग्नि । रोहिणीका ब्रह्मा । मृगशिराका चन्द्रमा । आर्द्राका शिव । पुनर्वसुका आदिति । पुष्य का बृहस्पति । आश्लेषाका सर्प । मघाका पितर । पूर्वाफाल्गुनीका भग । उत्तराफाल्गुनीका अर्यमा । हस्तका सूर्य । चित्राका विश्वकर्मा । स्वातीका वायु । विशाखाके इन्द्र एवं अग्नि । अनुराधाका मित्र (सूर्य) ज्येष्ठाका इन्द्र । मूलका निर्ऋति । पूर्वाषाढाका जल । उत्तराषाढाका विश्वेदेव । अभिजित्का विधि । श्रवणका विष्णु । धनिष्ठाका वसु । शतभिषाका वरुण । पूर्वाभाद्रपदाका अजचरण । उत्तराभाद्रपदाका अहिर्बुध्न्य । रेवतीका पूषा यह नक्षत्रोंके स्वामी हैं । स्वस्वामिनामसे भी ग्रन्थोंमें प्रसिद्ध रहते हैं, जैसे जहां 'कर' नाम नक्षत्रसम्बन्धमें हो वहां हस्त जानना ॥ १ ॥ (शा० वि०)

जो नक्षत्र जिस कार्यके योग्य है इसका विस्तार ग्रन्थांतरोंसे कहते हैं--अश्विनीमें वस्त्र, उपनयन, क्षौर, सीमंत, भूषण, स्थापना, हाथीका कृत्य, स्त्री, कृषि, विद्या आदि । भरणीमें बावडी, कूवा, तालाब, आदि विशस्त्रादि उग्र एवं दारुण कर्म, रन्ध्रप्रवेश, गणित, धरोहर वा खत्तेमें वस्तु रखना । कृत्तिकामें अग्न्याधान, अस्त्र, शस्त्र, उग्रकर्म, मिलाप, विग्रह, दारुणकर्म, संग्राम, औषधि वादित्र कर्म । रोहिणीमें सीमन्त, विवाह, वस्त्र, भूषण, स्थिरकर्म, हाथी घोडेके कृत्य, अभिषेक, प्रतिष्ठा । मृगशिरमें प्रतिष्ठा,

भूषण, विवाह, सीमंत, क्षौर, वास्तुकृत्य, हाथी घोडे ऊंट सम्बन्धी कृत्य, यात्रा । आर्द्रामें ध्वजा, तोरण, संग्राम, दीवाल, अस्त्र शस्त्रक्रिया, संधि, विग्रह, वैर रसादिकृत्य । पुनर्वसुमें प्रतिष्ठा, सवारी, सीमन्त, वस्त्र, वास्तु, उपनयन, धान्यभक्षण, क्षौर । पुष्यमें विवाह बिना समस्त शुभ कृत्य । आश्लेषामें झूंठ, व्यसन, द्यूत, धातुवाद, औषधि, संग्राम, विवाद, रसक्रिया, व्यापार । मघामें कृषि, व्यापार, गौ, अन्न, रणोपयोगी कृत्य, बिवाह, नृत्य, गीत । तीनों पूर्वामें कलह, विष, शस्त्र, अग्नि, दारुण, उग्र संग्राम, मांसविक्रय । तीनों उत्तराओंमें प्रतिष्ठा, विवाह, सीमंत, अभिषेक, व्रतबन्ध, प्रवेश, स्थापना, वास्तुकर्म । हस्तमें प्रतिष्ठा, विवाह, सीमंत, सवारी, उपनयन, वस्त्र, क्षौर, वास्तु, अभिषेक, भूषण । चित्रामें क्षौर, प्रवेश, वस्त्र, सीमन्त, प्रतिष्ठा, व्रतबन्ध, वास्तु, विद्या भूषण । स्वातीमें प्रतिष्ठा, उपनायन, व्यापार, सीमन्त, भूषण, विवाद, हस्तिकृत्य, कृषि, क्षौर । विशाखामें वस्त्र, भूषण-व्यापार, रसधान्यसंग्रह, नृत्य, गीत, शिल्प, लिखना, आदि । अनुराधामें प्रवेश, स्थापना, विवाह, व्रतबन्ध, अष्ट प्रकारके मंगल, वस्त्र, भूषण, वास्तु, संधि, विग्रह । ज्येष्ठामें क्रूरकर्म, उग्रकर्म, शस्त्र, व्यापार, गौ भैंसका कृत्य, जलकर्म, नृत्य, वादित्र, शिल्प, लोहाके काम, पत्थरका काम, लिखना । मूलमें कृषि, वाणिज्य, उग्र, दारुणसंग्राम, औषधि, नृत्य, शिल्प संधि, विग्रह, लेखन । श्रवणमें, प्रतिष्ठा, क्षौर, सीमंत, यात्रा, उपनयन, औषधि, पुरग्राम गृहका आरम्भ, पट्टाभिषेक । धनिष्ठामें शस्त्र, उपगयन, क्षौर, प्रतिष्ठा, सवारी, भूषण, वास्तु सीमंत, प्रवेश, शतभिषामें प्रवेश, स्थापन, क्षौर, मौंजी, औषधि, अश्वकर्म, सीमन्त, वास्तु-कर्म । रेवतीमें विवाह, व्रतबन्ध, अश्वकर्म, प्रतिष्ठा, सवारी, भूषण, प्रवेश, वस्त्र, सीमन्त क्षौर औषधिके कृत्य करने ॥

नक्षत्राणां ध्रुवादिसंज्ञा तत्कृत्यं च ।

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम् ।
तत्र स्थिरं बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये ॥ २ ॥
स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम् ।
तस्मिन्गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥ ३ ॥
पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा ।
तस्मिन्घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ॥ ४ ॥
विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।
तत्राग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥ ५ ॥

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघु गुरुस्तथा ।
तस्मिन्पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिकम् ॥ ६ ॥
मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं मृदु मैत्रं भृगुस्तथा ।
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम् ॥ ७ ॥
मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुणसंज्ञकम् ।
तत्राभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकम् ॥ ८ ॥

नक्षत्रोंकी संज्ञा तथा कर्म भी कहते हैं:--तीनों उत्तरा, रोहिणी, रविवार, ध्रुव एवं स्थिर-संज्ञक हैं इनमें स्थिरकर्म, बीज बोना, गृहारम्भ, शांतिकर्म बगीचाका कार्य तथा मृदुनक्षत्रोक्त कार्य भी सिद्ध होते हैं ॥ २ ॥ स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा और चन्द्रवार चर एवं चलसंज्ञक हैं, इनमें हाथी घोडे आदि सवारी, बावड़ी, यात्रादि तथा लघु नक्षत्रोक्त कर्म भी सिद्ध होते हैं ॥ ३ ॥ तीनों पूर्वा, भरणी, मघा और भौमवार उग्र एवं क्रूरसंज्ञक हैं, इनमें मारणकृत्य, अग्निकृत्य, विषसंबंधी कृत्य, शस्त्रकर्म अन्य अरिष्टकृत्य, और दारुण नक्षत्रोक्त कृत्य भी सिद्ध होते हैं ॥४॥ विशाखा, कृत्तिका और बुधवार मिश्र एवं साधारणसंज्ञक है, इनमें अग्निहोत्रादि, काम्यवृषोत्सर्गादि और उग्रनक्षत्रोक्त कर्म भी सिद्ध होते हैं ॥ ५ ॥ हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् और गुरुवार क्षिप्र एवं लघुसंज्ञक हैं, इनमें दूकान, स्त्रीसंभोग, शास्त्रादिज्ञानारम्भ, भूषण, शिल्पविद्या, नृत्यादि ६४ कला और चरनक्षत्रोक्त कृत्य भी सिद्ध होते हैं ॥ ६ ॥ मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा और शुक्रवार मृदु एवम् मैत्रसंज्ञक हैं, इनमें गीतकृत्य, वस्त्र, स्त्रीक्रीडा, मित्रसम्बन्धी कृत्य, आभूषण और ध्रुवनक्षत्रोक्त कृत्य भी सिद्ध होते हैं ॥ ७ ॥ मूल ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा और शनिवार तीक्ष्ण एवम् दारुणसंज्ञक हैं, इनमें अभिचार (जादुगरी), मारणादि (भयानक-कर्म) तथा विद्वेषण हाथी घोडे आदि पशुओंका (दमन) शिक्षा वा बन्धन यद्वा उन्हें नपुंसक बनाना और उग्रनक्षत्रोक्त कृत्य भी सिद्ध होते हैं ॥ ८ ॥ (अनु०)

मूलाहिमिश्रोग्रमधोमुखं भवेदूर्ध्वास्यमार्द्रेज्यहरित्रयं ध्रुवम् ।
तिर्यङ्मुखं मैत्रकरानिलादितिज्येष्ठाश्विभानीदृशकृत्यमेषु सत् ॥ ९ ॥

मूल, आश्लेषा, मिश्रनक्षत्र, उग्रनक्षत्र अधोमुखसंज्ञक हैं, इनमें वापी, कूप, खात आदि कृत्य शुभ होते हैं । आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा और ध्रुवनक्षत्र ऊर्ध्वमुख हैं, इनमें राज्याभिषेक, पट्टबंधन, इमारत आदि कृत्य शुभ होते हैं ।

मृदु नक्षत्र हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, अश्विनी (तिर्यङ्मुख) समदृष्टि संज्ञक हैं, इनमें चक्र, रथ, हल, बीज, पशुकृत्यादि सिद्ध होते हैं ॥ ९ ॥ (इं० व०)

प्रवालदन्तशङ्खसुवर्णवस्त्रपरिधानमुहूर्ताः।

पौष्णध्रुवाश्विकरपञ्चकवासवेज्यादित्ये प्रवालरदशंखसुवर्णवस्त्रम्। धार्यं विरिक्तशनिचन्द्रकुजेऽह्नि रक्तं भौमे ध्रुवादिति युगे सुभगा न दध्यात १०

रेवती, ध्रुवनक्षत्र, अश्विनी, हस्तसे अनुराधापर्यंत और पुष्य, पुनर्वसुमें मूंगा, मोती, हाथी दांतके एवं शङ्खके भूषण, चूडी आदि और सुवर्ण वस्त्र धारण करना परन्तु जिस दिन रिक्तितिथि शनि चन्द्र मंगलवार न हो तथा मंगलवारको लालरङ्ग वस्त्र सुवर्ण धारणका दोष नहीं और मंगलवार ध्रुवनक्षत्र पुनर्वसु तिष्यमें सौभाग्यवती उक्त वस्तु धारण न करे ॥ १० ॥ (वसन्ततालिका)

वस्त्रस्य दग्धादिदोषे शुभाशुभफलम्।

वस्त्राणां नवभागकेषु च चतुष्कोणेऽमरा राक्षसा
मध्यत्र्यंशगता नरास्तु सदशे पार्श्वे च मध्यांशयोः।
दग्धे वा स्फुटितेऽम्बरे नवतरे पङ्कादिलिप्ते न स-
द्रक्षोंऽशे नृसुरांशयोः शुभमसत्सर्वांशके प्रान्ततः ॥ ११ ॥

नवीनवस्त्र, उपलक्षणसे शयन, पादुका, छत्र, ध्वजादि भी यदि किसी स्थानमें अग्निसे दग्ध हों वा फटे वा कज्जल पंक आदिसे लिप्त हों तो उसके बराबर नव (९) भाग करनेसे चारों कोणोंमें देवता बीचके ऊर्ध्वाधः त्रिभागमें मनुष्य और पार्श्वके दो भागोंमें राक्षसोंके स्थान हैं, इनमेंसे दग्धादि भाग राक्षसोंका हो तो दुष्ट फल है, उस वस्त्रादिको त्यागके सुवर्णादि दान करना। यदि उक्त भाग मनुष्य वा देवताओंका हो तो शुभ होता है. मतांतर है कि दग्धादिपर यदि श्रीवत्स सर्वतोभद्रादि शुभ चिह्न हों तो राक्षसभागमें भी शुभ होता है। यदि सर्पादि दुष्ट चिह्न शुभ भागोंमें हों तो भी अशुभ ही होता है ॥ ११ ॥ (शा० वि०)

क्वचिद्दुष्टदिनेऽपि वस्त्रपरिधानम्।

विप्राज्ञया तथोद्वाहे राज्ञा प्रीत्यार्पितं च यत्।
निन्द्येऽपि धिष्ण्ये वारादौ वस्त्रं धार्यं जगुर्बुधाः ॥ १२ ॥

ब्राह्मणकी आज्ञासे, विवाहमें और राजा जब प्रसन्नतापूर्वक वस्त्रादि देवे तो बिना उक्त मुहूर्त यद्वा निंद्य नक्षत्रवारादिमें भी धारण कर लेना ॥ १२ ॥ (अनु०)

लतापादपरोपणादिमुहूर्ताः ।

राधामूलमृदुध्रुवर्क्षवरुणक्षिप्रैर्लतापादपा-
रोपोऽथो नृपदर्शनं ध्रुवमृदुक्षिप्रश्रवोवासवैः ।
तीक्ष्णोग्राम्बुपभेषु मद्यमुदितं क्षिप्रान्त्यवह्नीन्द्रभा-
दित्येन्द्राम्बुपवासवेषु हि गवां शस्तः क्रयो विक्रयः ॥ १३ ॥

अनुराधा, मूल, ध्रुव, मृदु, क्षिप्र नक्षत्र, शतभिषा और शुभ वार तिथियोंमे लता, वृक्षा अन्नादिरोपण, बीज वापन करना । ध्रुव, मृदु, क्षिप्र नक्षत्र एवं श्रवण, धनिष्ठामें प्रथम राजदर्शन करना । तीक्ष्ण, उग्र, नक्षत्र और शतभिषामें मद्यका आरम्भ करना । क्षिप्र नक्षत्र, रेवती, कृत्तिका, ज्येष्ठा, मृगशिर पुनर्वसु, शतभिषा, धनिष्ठामें गौ आदि पशुओंका क्रय विक्रय) लेना देना आदि व्यवहार करना ॥ १३ ॥ (शा० वि०)

पशूनां रक्षामुहूर्तः ।

लग्ने शुभे चाष्टमशुद्धिसंयुते रक्षा पशूनां निजयोनिभे चरे ।
रिक्ताष्टमीदर्शकुज श्रवोध्रुवत्वाष्ट्रेषु यानं स्थितिवेशनं न सत् ॥ १४ ॥

(शुभलग्न) शुभग्रहकी राशि लग्न जिससे अष्टमस्थान भी (शुद्ध) ग्रहरहित हो तथा पशुयोनि नक्षत्रोंमें एवं चरनक्षत्रोंमें पशुओंके रक्षासम्बन्धी कार्य करने । पशुओंकी स्थिति एवं प्रवेश न करना ॥ १४ ॥ (इं० व०)

औषधिसूचीकर्मणो मुहूर्तः ।

भैषज्यं सल्लघुमृदुचरे मूलभे द्व्यङ्गलग्ने शुक्रेन्द्वीज्ये विदि च दिवसे
चापि तेषां, रवेश्च । शुद्धे रिःफद्युनमृतिगृहे सत्तिथौ नो जनेर्भे सूचीक-
र्माप्यदितिवसुभे त्वाष्ट्रमित्राश्विपुष्ये ॥ १५ ॥

लघु मृदु, चर नक्षत्र तथा, मूलमें द्विस्वभाव राशि ३ । ६ । ९ । १२ के लग्न जिनसे १२ । ७ । ८ भाव शुद्ध ग्रहरहित हो तथा शुक्र, चन्द्र, बृहस्पति, बुध, रविवारमें (सत्तिथौ) रिक्ता अमारहित तिथियोंमें औषधसेवन करना, परन्तु जन्मनक्षत्र तिथि उस दिन हों तो न करना और पुनर्वसु, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, अश्विनीमें (सूची-कर्म) सिलाई कसीदा आदि काम करना ॥ १५ ॥ (मं० क्रां०)

क्रयविक्रयनक्षत्राणि ।

क्रयर्क्षे विक्रयो नेष्टो विक्रयर्क्षे क्रयोऽपि न ।
पौष्णाम्बुपाश्विनीवातश्रवश्चित्राःक्रये शुभाः ॥ १६ ॥

जिन नक्षत्रोंमें वस्तु मोल लेना कहा है उनमें बेचनेका आरम्भ न करना, जिनमें बेचने का आरंभ कहा है उनमें खरीद न करना, यह नियम साधारण व्यवहारके आरंभ मात्रका है, सर्वदा नहीं। यदि सर्वदा यह नियम माना जाय तो व्यापार ही न हो जैसे किसी किसी दिन खरीदनेका नक्षत्र देखकर कोई खरीदने आया परन्तु बेचनेका नक्षत्र न होनेसे उस दिन न बेचेगा तो केता कहा से उक्त मुहूर्तपर खरीद करेगा? ऐसे ही बेचनेके मुहूर्तपर किसीने बेचना चाहा परन्तु खरीददार उस मुहूर्त पर लेता नहीं तो किसको बेचना? ऐसी शंकामें यह नियम प्रथमारम्भ मात्रका है, जैसे--कोठी, वाले आदि महाजन समय पर बहुत माल खरीदते हैं, पुनः विक्रीके समयपर बेचते हैं ऐसेमें यह मुहूर्त है। नित्यके व्यापारको नहीं, रेवती, शतभिषा, अश्विनी, स्वाती, श्रवण खरीदनेको शुभ हैं ॥ १६ ॥ (अनु०)

विक्रयविपणिमुहूर्तः।

पूर्वाद्वीशकृशानुसार्पयमभे केन्द्रत्रिकोणे शुभैः
षट्त्र्यायेष्वशुभैर्विना घटतनुं सन्विक्रयः सत्तिथौ।
रिक्ताभौमघटान्विना च विपणिर्मित्रध्रुवक्षिप्रभे-
र्लग्ने चन्द्रसिते व्ययाष्टरहितैः पापैः शुभैर्द्व्यायखे ॥ १७ ॥

तीनों पूर्वा, विशाखा, कृत्तिका आश्लेषा, भरणी नक्षत्रमें तथा केन्द्र १।४।७।१०। त्रिकोण ९।५ लग्नमें शुभ ग्रह हों ३।६।११ भावोंमें पापग्रह हों, कुम्भलग्न न हो एवं शुभ तिथियोंमें विक्रय बेचनेका आरम्भ करना और दुकानके आरम्भके लिये रिक्ता तिथि मंगलवार कुम्भलग्न छोडके अनुराधा ध्रुव, क्षिप्र नक्षत्रोंमें तथा लग्नमें चन्द्रमा शुक्र हों, पापग्रह आठवें बारहवें न हों शुभग्रह २।११।१९ भावोंमे हो, ऐसे मुहुर्तमें पण्यारम्भ करना लग्नका चन्द्रमा सर्व कार्योंमे वर्जित हैं परन्तु (वैश्यों) दूकानदारोंके स्वामी होनेसे तथा शुक्र के साथ होनेसे लग्नका चन्द्रमा गुणी कहा है ॥ १७ ॥ (शा० वि०)

अश्वहस्तिक्रयादिमुहूर्तः।

क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येष्वरिक्तारदिने प्रशस्तम् ॥
स्याद्वाजिकृत्यं त्वथ हस्तिकार्यं कुर्यान्मृदुक्षिप्रचरेषु विद्वान् ॥ १८ ॥

क्षिप्र नक्षत्र, रेवती, मृगशिर, स्वाती, शतभिषा, पुनर्वसुमें रिक्तातिथि भौमवार छोडके घोडोंका क्रय विक्रय आदि कृत्य करना; घोड़ोंकी सवारीके लिये ग्रन्थान्तरोंमें चक्र है कि घोडेका आकार बनाके सूर्यके नक्षत्रसे दिन नक्षत्रपर्यंत कन्धेमें ५ नक्षत्र लक्ष्मी। पीठमें १० नक्षत्र अर्थसिद्धि। पुच्छमें २ स्त्रीनाश। पैरोंमें ४ रण भंग। पेटमें ५ घोडानाश। मुखमें २ धनलाभ और विद्वान् मृदु, ध्रुव, क्षिप्र चर नक्षत्रोंमें ऐसे ही हाथीका कृत्य करे तथा शुभ

लग्न अंशक नागमें और शनिवारमें एवं शनिलग्नमें ही हाथीका अंकुशारम्भ करना ॥ १८ ॥ (इन्द्रवज्रा)

भूषाघटनादिमुहूर्तः ।

स्याद्भूषाघटनं त्रिपुष्करचरक्षिप्रध्रुवे रत्नयुक्
तत्तीक्ष्णोग्रविहीनभे रविकुजे मेषालिसिंहेतनौ ।
तन्मुक्तासहितं चरध्रुवमृदुक्षिप्रे शुभे सत्तनौ
तीक्ष्णोग्राश्विमृगे द्विदैवदहने शस्त्रं शुभं घट्टितम् ॥ १९ ॥

त्रिपुष्कर (भद्रातिथिरविजेत्यादिकथित) योग तथा चर क्षिप्र, ध्रुव नक्षत्रोंमें भूषण गढने जो भूषण रत्नसहित (जडाऊ) हो तो तीक्ष्ण, उग्र नक्षत्र वर्जित नक्षत्र तथा रवि मंगलवार मेष वृश्चिक, सिंह लग्नमें करना, यदि मोतियोंका भूषण हो तो चर, ध्रुव मृदु क्षिप्र नक्षत्र चन्द्र, शुक्रवार ४।२।७ लग्नमें करना, यही चांदीके भूषणोंको भी जानना. तीक्ष्ण उग्र नक्षत्र, अश्विनी, मृगशिर, विशाखा, कृत्तिकामें शस्त्र गढ़ना शुभ होता है ॥ १९ ॥ (शार्दूलविक्रीडित)

मुद्रापातनवस्त्रक्षालनमुहूर्तः ।

मुद्राणां पातनं सद् ध्रुवमृदुचरभक्षिप्रभैर्वीन्दुसौरे
वस्त्रे पूर्णाजयाख्ये न च गुरुभृगुजास्ते विलग्ने शुभैः स्यात् ।
वस्त्राणां क्षालनं सद्वसुहयदिनकृत्पञ्चकादित्यपुष्ये
नो रिक्तापर्वषष्ठीपितृदिनरवियज्ञेषु कार्य्यं कदापि ॥ २० ॥

ध्रुव, मृदु, चर क्षिप्र नक्षत्रोंमें सोम, शनिवार रहित पूर्णा, जया तिथियोंमें ५। १०।१५।३।८।१३ में शुभलग्नमें गुरु शुक्रास्तादिदोषरहित समयमें (मुद्रापातन) और धनिष्ठा, अश्विनी, हस्तसे पांच नक्षत्र, पुनर्वसु, पुष्य नक्षत्रोंमें स्वयं वस्त्रक्षालन करना यद्वा (रजक) धोबीको देना हो तो उक्त नक्षत्रोंमें देना, परन्तु रिक्ता तिथि षष्ठी, पर्वदिन, अमावस्या और शनि बुधवारमें वस्त्रप्रक्षालन कदापि न करना ॥ ॥ २० ॥ (स्रग्धरा)

खड्गादिधारणशय्याद्युपभोगमुहूर्तः ।

संधार्याः कुन्तवर्मेष्वसनशरकृपाणासिपुत्र्यो विरिक्ते
शुक्रेज्यार्केऽहिमैत्रध्रुवलघुसहितादित्यशाक्रा द्विदैवे ।
स्युर्लग्नेऽपि स्थिराख्ये शशिनि च शुभदृष्टे शुभैः केन्द्रगैः स्याद्
भोगः शय्यासनादेर्ध्रुवमृदुलघुहर्यन्तकादित्य इष्टः ॥ २१ ॥

रिक्तातिथि रहित शुक्र बृहस्पति रविवार. मैत्र, ध्रुव नक्षत्र तथा पुनर्वसु, ज्येष्ठा, विशाखा में कुन्त (प्रास) गात्रोंसहित तलवार वा खुखरी छुरी (वर्म) कवच, बख्तर धारण करनेपर तथा इस कृत्यमें स्थिर लग्न तथा चन्द्रमापर दृष्टि और शुभग्रह केन्द्रमें आवश्यक हैं. ध्रुव, मृदु, लघु, श्रवण, भरणी, पुनर्वसु नक्षत्रोंमें शय्या (चारपाई) पलंग पीठ मृगचर्म पादुका आदि बैठने तथा सोनेके उपयोगी वस्तु काममें लाना। ॥ २१ ॥

अन्धादिनक्षत्राणि ।

अन्धाक्षं वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिध
मन्दाक्षं रविविश्वमित्रजलपाश्लेषाश्विचान्द्रं भवेत् ।
मध्याक्षं शिवपित्रजैकचरणत्वाष्ट्रेन्द्रविध्यन्तकं
स्वक्षं स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षोभगम् ॥ २२ ॥

रोहिणी, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा, पुष्य, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, रेवती ये अन्धाक्ष सञ्ज्ञक हैं. हस्त, उत्तराषाढा, अनुराधा, शतभिषा, आश्लेषा, अश्विनी, मृगशिर ये मन्दाक्षसंज्ञक हैं. आर्द्रा, मघा, पूर्वाभाद्रपदा, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित्, भरणी ये मध्याक्षसंज्ञक हैं. इनके गिननेकी सुगम रीति यह भी है कि रोहिणीसे ४ । ४ नक्षत्र क्रमसे अन्ध, मन्द, मध्य, सुलोचन होते हैं, जैसे रो० अंध मृ० मन्द आ० मध्य, पु० सुलोचन पुनः तिष्य अन्ध आश्लेषा मंद इत्यादि ॥ २२ ॥ (शा० वि०)

अन्धादिनक्षत्राणां फलम् ।

विनष्टार्थस्य लाभोऽन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नतः ।
स्याद्दूरे श्रवणं मध्ये श्रुत्याप्ती न सुलोचने ॥ २३ ॥

नक्षत्रोंकी उक्त संज्ञाओंका प्रजोजन यह है कि, कोई वस्तु अंधलोचन नक्षत्रमें खो गई हो तो शीघ्र मिले. मन्दलोचनमें यत्न करनेसे मिले, मध्यलोचनमें दूरतर पता मात्र लगे, वस्तु हाथ न आवे; सुलोचनमें मिलना मिलना तो दूर रहा किंतु पता भी सुनायी न देवे, जब वस्तु खो जानेका दिन वा नक्षत्र ज्ञात न हो तो प्रश्नसमय वर्तमान नक्षत्रसे फल कहना ॥२३॥ (अनु०)

धनप्रयोगे निषिद्धनक्षत्राणि ।

तीक्ष्णमिश्रध्रुवोग्रे यद् द्रव्यं दत्तं निवेशितम् ।
प्रयुक्तं च विनष्टं च विष्ट्यां पाते च नाप्यते ॥ २४ ॥

तीक्ष्ण, मिश्र, ध्रुव, उग्र नक्षत्र तथा भद्रा, व्यतीपातमें जो धनादि किसीको पुनः लेनेके हेतु दिया वा चोर ले गया वा खो गया वा कर्जा दिया तो पुनः मिलेगा नहीं ॥२५॥(अनु०)

जलाशयखनननृत्यारंभमुहूर्त्तः ।

मित्रार्कध्रुववासवाम्बुपमघातोयान्त्यपुष्येन्दुभिः
पापैर्हीनबलैस्तनौ सुरगुरौ ज्ञे वा भृगौ खे विधौ ।
आप्ये सर्व जलाशयस्य खननं व्यम्भो मघैः सेन्द्रभै-
स्तैर्नृत्यं हिबुके शुभे तनुगृहे ज्ञेऽब्जे ज्ञराशौ शुभम् ॥ २५ ॥

अनुराधा, हस्त, ध्रुवनक्षत्र, धनिष्ठा, शतभिषा, मघा, पूर्वाषाढा, रेवती, पुष्य, मृगशिरमें तथा पापग्रह हीनबली हों, शुभलग्नमें बुध बृहस्पति शुक्रमेंसे कोई हो, चंद्रमा दशम स्थानमें जलचर राशिका हो ऐसे समयमें बावड़ी कूप तालाब आदि जलाशय खनना वा बनाना । और पूर्वाषाढा-"मघारहित ज्येष्ठासहित उक्त नक्षत्र तथा लग्नसे चौथे शुभग्रह और लग्नमें बुध, बुधकी राशि ३ । ६ के चन्द्रमामें "नृत्यारंभ" नाच खेल नाटिकादिकोंका आरम्भ करना ॥ २५ ॥ (शा० वि०)

सेवकस्य स्वामिसेवायां मुहूर्त्तः ।

क्षिप्रे मैत्रे वित्सितार्केज्यवारे सौम्ये लग्नेऽर्के कुजे वा खलाभे ।
योनेर्मैत्र्यां राशिपोश्चापि मैत्र्यां सेवा कार्या स्वामिनः सेवकेन ॥२६॥

क्षिप्र, मैत्र नक्षत्र, बुध, शुक्र, रवि, गुरुवार तथा शुभग्रहयुक्त लग्नमें और सूर्य वा मंगल दशम वा ग्यारहवां हो ऐसे मुहूर्तमें सेवक (नौकर) स्वामीकी सेवाका आरंभ करे परन्तु स्वामिसेवककी योनियोंकी मैत्री तथा राशिपतियोंकी मैत्री मुख्य विचार्य है, यदि योनि एवं राशिपतियोंकी परस्पर मैत्री हो तो सेवा शुभ होती है ॥ २६ ॥ (शालिनी)

द्रव्यप्रयोगऋणग्रहणमुहूर्त्तः ।

स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे कर्णत्रयाश्वे चरे
लग्ने धर्मसुताष्टशुद्धिसहिते द्रव्यप्रयोगः शुभः ।
नारे ग्राह्यमृणं तु संक्रमदिने वृद्धौ करेऽर्केऽह्नि यत्
तद्वंश्येषु भवेदृणं न च बुधे देयं कदाचिद्धनम् ॥ २७ ॥

स्वाती, पुनर्वसु, मृदुनक्षत्र, विशाखा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शततारा, अश्विनी नक्षत्र तथ चर लग्नमें एवं ९ । ५ स्थानोंमें शुभग्रह हो पापग्रह न हों अष्टम भावमें

कोई ग्रह न हो ऐसे मुहूर्तमें (द्रव्यप्रयोग) धनवृद्धिके लिये ऋणादि देना तथा मंगलवार संक्रांति और रविवारयुक्त हस्तमें ऋण न लेना। यदि ले तो उसके वंशसे भी ऋण न उतरै और बुधवारको कदाचित् भी ऋण न देना ॥ २७ ॥

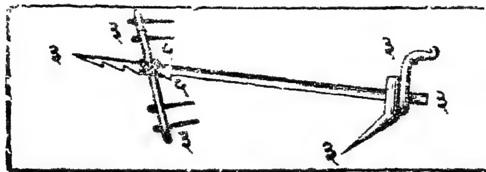
हलप्रवहणमुहूर्त्तः।

मूलद्वीशमघाचरध्रुवमृदुक्षिप्रैर्विनार्कं शनिं
पापैर्हीनबलैर्विधौ जललवे शुक्रे विधौ मांसले।
लग्ने देवगुरौ हलप्रवहणं शस्तं न सिंहे घटे
कर्काजैणधटे तनौ क्षयकरं रिक्तासु षष्ठ्यां तथा ॥ २८ ॥

मूल, विशाखा, चर, ध्रुव, मृदु, क्षिप्र नक्षत्रोंमें रवि शनिरहित वारोंमें तथा पापग्रह हीनबली, चन्द्रमा जलचरराशिके अंश तथा राशिमें हों और शुक्र चन्द्रमा (बलवान्) उदय हो, बृहस्पति लग्नमें हो, सिंह, कुम्भ, कर्क, मेष, मकर, धन लग्न रिक्ता षष्ठी तिथि न हों ऐसे मुहूर्त्तमें जोतना आदि कृषिकर्मका आरम्भ करना, रिक्ता षष्ठी आदि वर्जितोंमें कृषि क्षय होती है ॥ २८ ॥ (शा० वि०)

हलचक्रम्।

हलदण्डिकयूपानां द्विद्विस्थाने त्रिकं त्रिकम्।
योक्त्रयोः पञ्चकं मध्ये गणनाचक्रलाङ्गले ॥
दण्डस्थे च गवां हानिर्यूपस्थे स्वामिनो भयम्।
लक्ष्मीर्लाङ्गलयोक्त्रेषु क्षेत्रारम्भदिनर्क्षके ॥



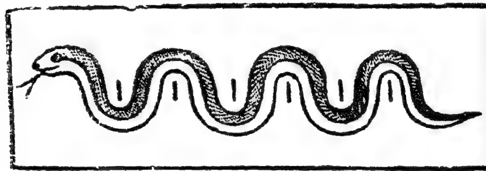
बीजोप्तिमुहूर्तः।

एतेषु श्रुतिवारुणादितिविशाखोडूनि भौमं विना
बीजोप्तिर्गदिता शुभा त्वगभतोऽष्टाग्नीन्दुरामेन्दवः।
रामेन्द्वग्नियुगान्यसच्छुभकराण्युप्तौ हलेऽर्कोज्झिता-
द्धाद्रामाष्टनवाष्टभानि मुनिभिः प्रोक्तान्यसत्सन्ति च ॥ २९ ॥

श्रवण, शतभिषा, पुनर्वसु, विशाखा और मंगलवाररहित पूर्वश्लोकोक्त हलप्रवाह नक्षत्रोंमें बीजवापन करना. जब सूर्य आर्द्राके प्रथम चरणपर जाता है तो उस दिनसे तीन दिन पृथ्वीको रज उत्पन्न होता है. इन दिनोंमें पृथ्वीमें बीज न बोना ॥ बीज वापनमें विशेषविचार फणिचक्रका है कि राहुके नक्षत्रसे ८ नक्षत्र अशुभ, ३ शुभ, १ अशुभ, ३ शुभ, १ अशुभ; ३शुभ, १ अशुभ, ३ शुभ, ४ अशुभ । दिननक्षत्रपर्यंत गिनके जहां आवे ऐसा फल जानना। ऐसे ही हल प्रवाहके (खेती जोतने) लिये हलचक्र है कि सूर्यके भुक्तनक्षत्रसे ३ अशुभ, ८ शुभ, ९ अशुभ, ८ शुभ इसमें २८ नक्षत्र अभिजित् सहित हैं, इन चक्रोंमें पूर्वोक्त नक्षत्र शुभ स्थानमें हों तो लेना, अशुभ स्थानमें हों तो न लेना, अनुक्त नक्षत्र चक्रोंमें शुभ भी हो तो न लेना, ग्रन्थान्तरमतसे चक्र ऐसे हैं ॥ २९ ॥ (शा० वि०)

बीजोप्तिचक्रम् ।

भवेद्भत्रितयं मूर्ध्नि धान्यनाशाय राहुभात् ।
गले त्रयं कज्जलाय वृद्धिर्भद्वादशोदरे ॥
निस्तण्डुलत्वं लाङ्गूले भचतुष्टयमीरितम् ।
नाभौ वह्निपञ्चकं च बीजोप्ताविति यः क्रमात् ॥



शिरामोक्षादिमुहूर्तः ।

त्वाष्ट्रानिलमित्रकभाद्वयेऽम्बुपलघुश्रोत्रे शिरामोक्षणं
भौमार्केज्यदिने विरेकवमनाद्यं स्याद्बुधार्की विना ।
मित्रक्षिप्रचरध्रुवे रविशुभाहे लग्नवर्गे विदो
जीवस्यापि तनौ गुरौ निगदिता धर्मक्रिया तद्बले ॥ ३० ॥

चित्रा, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, रोहिणी, मृगशिर, शतभिषा, श्रवण और लघु नक्षत्रोंमें, मंगल, बृहस्पति, रविवारमें शिरामोक्षण (नसोंद्वारा रुधिर निकालना) तथा उक्त नक्षत्रोंमें बुध शनि विना अन्य वारोंमें वमन विरेक (औषधिसे रद्द दस्त लेने) और मित्र, क्षिप्र, चर ध्रुव नक्षत्रोंमें, रवि, चन्द्र, बुध, बृहस्पतिवार बुध गुरुके (वर्ग) नवांशादि किसी लग्नमें तथा लग्नके बृहस्पति एवं कर्त्ताकी बृहस्पति शुद्धिमें धर्मक्रिया (कोटिहोम रुद्रानुष्ठानादि) करने ॥ ३० ॥ (शार्दू०)

धान्यच्छेदनमुहूर्तः ।

तीक्ष्णाजपादकरवह्निवसुश्रुतीन्दुस्वातीमघोत्तरजलान्तकतक्षपुष्ये ।
मन्दाररिक्तरहिते दिवसेऽतिशस्ता धान्यच्छिदा निगदिता स्थिरभे विलग्ने ३१

तीक्ष्ण नक्षत्र, पूर्वाभाद्रपदा, हस्त, कृत्तिका, धनिष्ठा, श्रवण, मृगशिर, स्वाती, मघा, तीनों उत्तरा, पूर्वाषाढा, भरणी, चित्रा पुष्यमें तथा शनि मंगलवार रिक्ता तिथि रहित और स्थिरराशिके लग्नोंमें (अन्न) पकी खेती काटनी चाहिये ॥ ३१ ॥ (व०)

कणमर्दनसस्यारोपणमुहूर्तः ।

भाग्यार्यमश्रुतिमघेन्द्रविधातृमूलमैत्र्यान्त्यभेषु गदितं कणमर्दनं सत् ।
द्वीशाजपान्निर्ऋतिधातृशतार्यमर्क्षे सस्यस्य रोपणमिहार्किकुजौ विना सत् ३२

पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, श्रवण, मघा, ज्येष्ठा, रोहिणी, मूल, अनुराधा, रेवती नक्षत्रोंमें, शुभ तिथिवारोंमें अन्नमर्दन (चना गेहूँ आदिका) भूसेसे अलग करना। विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा, मूल, रोहिणी, शततारा, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रोंमें शनि मंगलवार वर्जित करके अन्न पौदेसे लेके दूसरे स्थल पानीके खेतमें रोपण करना ॥ ३२ ॥ (व० ति०)

धान्यस्थितिर्धान्यवृद्धिश्च ।

मिश्रोग्ररौद्रभुजगेन्द्रविभिन्नभेषु कर्काजतौलिरहिते च तनौ शुभाहे ।
धान्यस्थितिः शुभकरी गदिता ध्रुवेज्यद्वीशेन्द्रदस्रचरभेषु च धान्यवृद्धिः ३३

मिश्र, उग्र आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठारहित नक्षत्रोंमें कर्क, मेष, तुलारहित लग्नमें, शुभ वारोंमें (अन्नस्थिति) खेतीको ढार आदिमें स्थापन करना, ध्रुव, पुष्य, विशाखा, ज्येष्ठा, अश्विनी और चरनक्षत्रोंमें धान्यवृद्धि (अन्न व्याजपर देना) अर्थात् अन्न उधार देकर कुछ महीनोंमें सवाया या ड्योढा लेते हैं ॥ ३३ ॥ (व० ति०)

शान्तिपौष्टिकादिकृत्यमुहूर्तः ।

क्षिप्रध्रुवान्त्यचरमैत्रमघासु शस्तं स्याच्छान्तिकं सहच मङ्गलपौष्टिकाभ्याम् ।
खेऽर्के विधौ सुखगते तनुगे गुरौ नो मौढ्यादिदुष्टसमयेशुभदं निमित्ते ॥ ३४ ॥

क्षिप्र, ध्रुव, रेवती, चर, मैत्र, मघा नक्षत्रोंमें तथा लग्नसे दशम सूर्य, चतुर्थ चन्द्र, लग्नके गुरु होनेमें मूल गण्डान्तादि वा केतु–उत्पातदर्शनादि शांतिक तथा पौष्टिक कर्म करने, नैमित्तिक शांते, गुर्वस्त, शुक्रास्त बालवृद्धादि दुष्ट समयमें भी शुभ होती है ॥ ३४ ॥ (व० ति०

होमाहुतिमुहूर्त्तः ।

सूर्यभात्त्रित्रिभे चान्द्रे सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः ।
चन्द्रारेज्यागुशिखिनो नेष्टा होमाहुतिः खले ॥ ३५ ॥

होमकी आहुति कहते हैं-शुभग्रहकी आहुतिमें होम करना । पापग्रहकीमें न करना । सूर्यके नक्षत्रसे चन्द्रर्क्षपर्यन्त ३ । ३ गिनके प्रथम ३ में सूर्यकी फिर ३ में बुधकी एवं शुक्र, शनि, चन्द्रमा, मङ्गल, गुरु, राहु, केतुकी क्रमसे आहुति जानो ॥ ३५ ॥ (अ०)

वह्निनिवासस्तत्फलम् ।

सैका तिथिर्वारयुता कृताप्ता शेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः ।
सौख्याय होमे शशियुग्मशेषे प्राणार्थनाशौ दिवि भूतले च॥३६ ॥

वर्तमान तिथिमें १ जोडके वार जोडना, ४ से (शेष) तष्ट करना, जो शेष ० वा ३ रहे तो पृथ्वीमें अग्निका वास जानना, हवन करनेमें सुख होगा. यदि १ । २ शेष रहें तो वह्निवास क्रमसे आकाश और पातालमें है । इसमें होम करनेसे प्राण, धन नष्ट होते हैं ॥ ३६ ॥ (इ० व०)

नवान्नभक्षणमुहूर्तः ।

नवान्नं स्याच्चरक्षिप्रमृदुभे सत्तनौ शुभम् ।
विना नन्दाविषघटी मधुपौषार्किभूमिजान् ॥ ३७ ॥

पौष, चैत्र मास, शनि, मंगलवार नन्दा १ । ६ । ११ तिथि (विषघटी) विवाहप्रकरणोक्त इन सबको छोडकर शुभयुक्त दृष्टलग्नमें तथा चर, क्षिप्र, मृदु, नक्षत्रोंमें (नवान्न) नई फसलका अन्नप्राशन करना ॥ ३७ ॥ (अनु०)

नौकाघट्टनमुहूर्तः ।

याम्यत्रयविशाखेन्द्रसार्पपित्र्येशभिन्नभे ।
भृग्वीज्यार्कदिने नौकाघटनं सत्तनौ शुभम् ॥ ३८ ॥

भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, विशाखा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, आर्द्रारहित नक्षत्रोंमें तथ शुक्र गुरु रविवारमें नौका (नाव डोंगी) आदि गढनी ॥ ३८ ॥ (अनु०)

वीरसाधनादिमुहूर्तः ।

मूलार्द्राभरणीपित्र्यमृगे सौम्यो घटे तनौ ।
सुखे शुक्रेऽष्टमे शुद्धे सिद्धिर्वीराभिचारयोः ॥ ३९ ॥

मूल, आर्द्रा, भरणी, मघा, मृगशिर नक्षत्रोंमें तथा कुम्भलग्नमें बुध अथवा चतुर्थ शुक्र तथा अष्टम शुद्ध हो ऐसे मुहूर्तमें वीरसाधन एवं (अभिचार) मारणादि जादूगरी करनी । यहां लग्नके बुध, चतुर्थ शुक्र कहा यह असम्भव है, इससे अथवा पद लिखा है ॥ ३९ ॥ (अनु०)

रोगनिर्मुक्तिस्नानमुहूर्तः ।

अन्त्यादितिध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये रिक्ते तिथौ चरतनौ विकवीन्दुवारे।
स्नानं रुजा विरहितस्य जनस्य शस्तं हीने विधौ खलखगैर्भवकेन्द्रकोणे४०

जब रोगी रोगसे निर्मुक्त होता है उसके स्नानका मुहूर्त है कि रेवती, पुनर्वसु, ध्रुवनक्षत्र, मघा, स्वाती, आश्लेषारहित अन्य नक्षत्रोंमें तथा रिक्ता तिथि चरलग्नमें शुक्र चन्द्रवाररहित वारोंमें पापग्रह ११ और केन्द्रकोणोंमें हो तथा चन्द्रमा (हीन) जन्मराशिसे ४।८।१२ स्थानमें हो ऐसेमें रोगमुक्त स्नान करना ॥ ४० ॥ (व० ति०)

शिल्पविद्यारम्भमुहूर्तः ।

मृदुध्रुवक्षिप्रचरे ज्ञे गुरौ वा खलग्नगे।
विधौ ज्ञजीववर्गस्थे शिल्पारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥ ४१ ॥

मृदु, ध्रुव, क्षिप्र नक्षत्रोंमें बृहस्पति वा बुध, दशम वा लग्नमें हो और चन्द्रमा बुध वा गुरुके नवांशादि षड्वर्गमेंसे किसीमें हो तो शिल्पविद्या (कारीगरीके) कामका आरम्भ करना ॥ ४१ ॥ (अनु०)

सन्धान (मैत्री) मुहूर्तः ।

सुरेज्यमित्रभाग्येषु चाष्टम्यां तैतिले हरौ ।
शुक्रदृष्टे तनौ सौम्ये वारे सन्धानमिष्यते ॥ ४२ ॥

पुष्य अनुराधा पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र, अष्टमी द्वादशी तिथिमें वा तैतिल करणमें, लग्नमें शुक्र हो वा शुक्रदृष्ट लग्न हो और शुभ वारमें (प्रीति) मैत्री दोस्तानेका आरम्भ करना ॥ ४२ ॥ (अनु०)

परीक्षामुहूर्तः ।

त्यक्त्वाष्टभूतशनिविष्टिकुजाञ्जनुर्भमासौ मृतौ रविविधू अपि भानि नाड्यः ।
द्व्यङ्गे चरे तनुलवे शशिजीवताराशुद्धौ करादितिहरीन्द्रकपे परीक्षा ॥४३॥

अष्टमी, चतुर्दशी तिथि, शनि मंगलवार, भद्रा जन्मनक्षत्र जन्ममास गोचरसे अष्टम सूर्य चन्द्रमा और नाडीनक्षत्र (जन्मनक्षत्रसे १०।१६।१८।२३।२५।१ नाडी- संज्ञक हैं,) इतने छोड़के द्विस्वभाव चर लग्न नवांशकोंमें चन्द्र गुरु ताराशुद्धिमें और हस्त पुनर्वसु श्रवण ज्येष्ठा शतभिषामें (परीक्षा) दिव्यादि करना ॥ ४३ ॥ (व० ति०)

सामान्यतो लग्नशुद्धिः ।

व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते ।
चन्द्रे त्रिषड्दशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥ ४४ ॥

लग्नसे १२।८ भाव शुद्ध ग्रहरहित तथा तत्काल लग्न जन्म राशिसे उपचय (३।६।१०। ११) और १ में शुभग्रह हों या उनकी दृष्टि हों तथा चन्द्रमा ३।६।१०।११। में हो ऐसी लग्नशुद्धिमें समस्त शुभ कार्योंका आरम्भ सिद्ध होता है ॥ ४४ ॥ (अनु०)

ज्वरोत्पत्तौ नक्षत्रानुसारेण फलविचारः ।

स्वातीन्द्रपूर्वाशिवसार्पभे मृतिर्ज्वरेऽन्त्यमैत्रे स्थिरता भवेद्रुजः ।
याम्यश्रवोवारुणतक्षभे शिवा वस्रा हि पक्षो द्व्यधिपार्कवासवे ॥ ४५ ॥
मूलाग्निदास्रे नव पित्र्यभे नखा बुध्न्यार्यमेज्यादितिधातृभे नगाः ।
मासोऽब्जवैश्वेऽथ यमाहिमूलभे मिश्रेशपित्र्ये फणिदंशने मृतिः ॥ ४६ ॥

स्वाती ज्येष्ठा तीन पूर्वा आश्लेषामें ज्वरादिरोग उत्पन्न हो तो मृत्यु हो, रेवती अनुराधामें रोग (स्थिर) बहुत दिन रहे, भरणी श्रवण शततारा चित्रामें ११ दिन पर्यन्त, विशाखा हस्त धनिष्ठामें १५ दिन, मूल कृत्तिका अश्विनीमें ९ दिन, मघामें २० दिन, उत्तराभाद्रपदा उत्तराफाल्गुनी पुष्य पुनर्वसु रोहिणीमें ७ दिन, मृगशिर उत्तराषाढामें ३० दिन रोग रहता है भरणी आश्लेषा मूल मिश्र (कृत्तिका विशाखा) मघा आर्द्रामें सर्प काटे तो मृत्यु हो ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ (उप०, तथा उपे०)

शीघ्ररोगिमरणे विशिष्टयोगाः ।

रौद्राहिशाक्राम्बुपयाम्यपूर्वाद्विदैववस्वग्निषु पापवारे ।
रिक्ताहरिस्कन्ददिने च रोगे शीघ्रं भवेद्रोगिजनस्य मृत्युः ॥ ४७ ॥

आर्द्रा आश्लेषा ज्येष्ठा शततारा भरणी तीन पूर्वा, विशाखा धनिष्ठा कृत्तिका नक्षत्र तथा पापवारमें, रिक्ता ४ । ९ । १४ द्वादशी षष्ठि तिथिमें जो रोगी हो तो शीघ्र मृत्यु पावे, चन्द्रमा गोचरसे ४।८।१२ होनेमें विशेष है ॥ ४७ ॥ (उ० जा०)

प्रेतदाहमुहूर्तः ।

क्षिप्राहिमूलेन्दुहरीशवायुभे प्रेतक्रिया स्याज्झषकुम्भगे विधौ ।
प्रेतस्य दाहं यमदिग्गमं त्यजेच्छय्यावितानं गृहगोपनादि च ॥ ४८ ॥

अश्विनी पुष्य हस्त आश्लेषा मूल मृग ज्येष्ठा श्रवण आर्द्रा स्वाती नक्षत्रोंमें (प्रेतक्रिया) और्ध्वदैहिक क्रिया करनी । तथा मीन कुम्भके चन्द्रमामें पञ्चक होते हैं इनमें प्रेतका दाह, दक्षिणदिशागमन, (शय्या) बिस्तरका कृत्य, चांदनी, चन्दोया और घरकी लिपाई पोताई आदि मरम्मत उपलक्षणसे तृणकाष्ठादि संग्रह न करना, प्रेतदाह आवश्यकमें कुश तथा रुईकी ५ मूर्ति बनाकर प्रेतके साथ दाह करते हैं, पञ्चकशांति भी करते हैं ॥ ४८ ॥ (इ० व०)

काष्ठादिसंग्रहः ।

सूर्यर्क्षाद्रसभैरधः स्थलगतैः पाको रसैस्संयुतः शीर्षे युग्मगतैः शवस्य दहनं मध्ये युगैः सर्पभीः । प्रागाशादिषु वेदभैः स्वसुहृदां स्यात्सङ्गमो रोगभीः क्काथादेः करणं सुखं च गदितं काष्ठादिसंस्थापने ॥४९॥

सूर्यके नक्षत्रसे वर्तमान नक्षत्रतक गिने और यथाक्रमसे स्थापित करे, जैसे-कि,प्रथम ६ नक्षत्र अधः (नीचे) स्थापित करे उसका फल रससंयुक्त पाक (भोजन) मिलता है और शीर्षपर२ उसमें शवका दहन अर्थात् निकृष्ट है तथा मध्यमें ४, उसमें सर्पसे भय होता है और पूर्वदिशामें ४, जिसमें मित्रोंका समागम होता है, दक्षिणमें ४, उसमें रोगका भय, पश्चिममें ४, उसमें क्काथ करण अर्थात् उत्तम नहीं है और उत्तरमें ४, उसमें सुख होता है, इस प्रकार काष्ठादि संग्रहमें फल समझना चाहिये ॥ ४९ ॥ (शा० वि०)

काष्ठादिसंग्रहचक्र ।

स्थान	अधः	शीर्ष	मध्य	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
संख्या	६	२	४	४	४	४	५
फल	पाकरस युक्त	शवदाह	सर्पसे भय	मित्र संगम	रोगभय	क्वाथ करण	सुख

त्रिपुष्करयोगस्तत्फलं च ।

भद्रातिथीरविजभूतनयार्कवारे द्वीशार्यमाजचरणादितिवह्निवैश्वे ।
त्रैपुष्करो भवति मृत्युविनाशवृद्धौ त्रैगुण्यदो द्विगुणकृद्वसुतक्षचान्द्रे ॥५०॥

भद्रा २ । ७ । १२ तिथि, शनि मंगल रविवार, विशाखा उत्तराफाल्गुनी पूर्वाभाद्रपदा पुनर्वसु कृत्तिका उत्तराषाढा इतने तिथि वार नक्षत्रोंमें एक ही समय होनेमें त्रिपुष्करयोग होता है; इसमें कोई मरे तो उस घरमें दो और मरें,कुछ वस्तु खोजाय तो दो और खो जावें, कुछ वस्तु मिले वा बढे तो दो और मिलें; नक्षत्रके स्थानमें धनिष्ठा चित्रा वा मृगशिर हो तो उक्त फल द्विगुण होते हैं, यह द्विपुष्कर योग है ॥ ५० ॥ (व० ति०)

शवप्रतिकृतिदाहे निषिद्धकालादिः ।

शुक्रारार्किषु दर्शभूतमदने नन्दासु तीक्ष्णोग्रभे
पौष्णे वारुणभे त्रिपुष्करदिने न्यूनाधिमासेऽयने ।
याम्येऽब्दात्परतश्च पातपरिघे देवेज्यशुक्रास्तके
भद्रावैधृतयोः शवप्रतिकृतेर्दाहो न पक्षे सिते ॥ ५१ ॥
जन्मप्रत्यरितारयोर्मृतिसुखान्त्येऽब्जे च कर्तुर्नस-
न्मध्यो मैत्रभगादितिध्रुवविशाखाद्वयङ्घ्रिभे ज्ञेऽपि च ।
श्रेष्ठोऽर्कज्यविधोर्दिने श्रुतिकरस्वात्यश्विपुष्ये तथा
त्वाशौचात्परतो विचार्यमखिलं मध्ये यथासम्भवम् ॥५२ ॥

जब किसी मरेका प्रेत नहीं मिले तो (प्रतिकृति) पर्णशर करनेका मुहूर्त कहते हैं कि, शुक्र मंगल शनिवारमें चतुर्दशी अमावास्या त्रयोदशी नंदा । १ । ६ । ११ में तीक्ष्ण उग्र रेवती शततारा त्रिपुष्करयोगमें मलमास क्षयमासमें कर्क मकर संक्रांतिमें एक वर्षसे अधिक मरेको होगया हो तो दक्षिणायनमें भी तथा व्यतीपात परिघ योगमें शुक्रास्त गुर्वस्तमें भद्रा वैधृतिमें शुक्लपक्षमें पर्णशरका दाह न करना ॥ ५१ ॥ क्रिया करनेवालेका उस दिन जन्म प्रत्यरि तारा, चौथा आठवां बारहवां चंद्रमा जन्मराशिसे न हो और अनुराधा पूर्वाफाल्गुनी पुनर्वसु ध्रुवनक्षत्र विशाखा मृगशिर चित्रा धनिष्ठा बुधवारमें उक्त कृत्य मध्यम कहा है तथा रवि गुरु चंद्र वार, श्रवण हस्त स्वाती पुष्य अश्विनी नक्षत्र शुभ होते हैं, (इतने विचार अशौचसे उपरांत) यदि किसी कारण आशौचमें प्रेत क्रिया न हुई हो तो तब हैं, आशौचमें उक्त विचार कुछ नहीं ॥ ५२ ॥ शा० वि०)

अभुक्तमूलस्वरूपम् ।

अभुक्तमूलं घटिकाचतुष्टयं ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं हि नारदः ।
वसिष्ठ एकद्विघटीमितं जगौ बृहस्पतिस्त्वेकघटीप्रमाणकम् ॥ ५३ ॥

अभुक्त मूलका प्रमाण नारदमतसे ज्येष्ठाके अंत्यकी ४ घटी और मूलके आदिकी ४ घटी मिलकै ८ घटी अभुक्त मूल होता है । वसिष्ठ ज्येष्ठान्त्यकी एक, मूलादिकी दो कहता है । बृहस्पति एक ही घटी कहता है ॥ ५३ ॥ (उ० जा०)

मूलाश्लेषोत्पन्नस्य शुभाशुभफलम्।

अथोचुरन्ये प्रथमाष्टघट्यो मूलस्य शक्रान्तिमपञ्च नाड्यः।
जातं शिशुं तत्र परित्यजेद्वा मुखं पितास्याष्ट समा न पश्येत ॥ ५४ ॥

अन्य आचार्य कहते हैं कि, मूलादिकी ८ घटी ज्येष्ठान्त्यकी ५ घटी अभुक्त मूल है, यहां बहुमत होनेसे आचार्यने नारदमत ही प्रमाण किया है। इस अभुक्त मूलमें जो बालक उत्पन्न हो तो उसे त्याग करना अथवा पिता उस बालकका मुख आठ वर्ष पर्यंत न देखे तब शांति करके देखे। उपलक्षणसे आश्लेषांत्य मघादिमें भी ऐसा ही विचार है ॥ ५४ ॥ (उ० जा०)

आद्ये पिता नाशमुपैति मूलपादे द्वितीये जननी तृतीये।
धनं चतुर्थोऽस्य शुभोऽथ शान्त्या सर्वत्र सत्स्यादहिभे विलोमम् ॥५५॥

कन्या वा पुत्र मूलके प्रथम चरणमें उत्पन्न हो तो पिता नष्ट हो, दूसरेमें हो तो माता मरे, तीसरेमें हो तो धननाश हो, चौथे चरणमें हो तो शांति करके शुभ हो, किसीको दोष नहीं, आश्लेषामें यही विचारविपरीत है. जैसे—चतुर्थ चरणमें पिता, तीसरेमें माता, दूसरेमें धननाश, प्रथम चरण शांति करके शुभ होता है. प्रकारांतर है कि १ वर्षमें पिताका २ वर्षमें माताका ३ वर्षमें धनका ९ वर्षमें श्वशुरका ६ वर्षमें भाईका ८ वर्षमें साले वा मामाका अन्य अनुक्त बांधवादिकोंका ७ वर्षमें नाश करता है, तस्मात् शांति करनी योग्य है, प्रकारांतरसे मूल तथा आश्लेषाका वृक्ष वा लतारूपसे चक्रन्यासपूर्वक विशेष विचार चक्रमें लिखा है ॥ ५५ ॥ (उपजा०)

मूलवृक्षचक्रं	मूलपुरुषचक्रं	कन्याजन्मानमूलचक्रम्	अश्लेषाचक्रम्	सार्पवृक्षचक्रम्
मूले ७ मूलनाशः	मूर्ध्नि ५ राजा	शीर्षे ४ पशुनाशः	शिरसि ५ पुत्रादि	फले १० धनं
स्तंभे ८ वंशनाशः	मुखे ७ पितृमृत्यु	मुखे ६ धनहानिः	मुखे ७ पितृक्षयः	पुष्पे ५ धनं
त्वचि १० मातृक्लेश	स्कंधे ४ बली	कंठ ५ धनागमः	नेत्रे २ मातृनाशः	दले ९ राजभयं
शाखा ११ मातुला	बाहौ ८ बली	हृदये ५ कुटिलताः	ग्रीवा ३ स्त्रीलंपट	शाखा ७ हानिः
क्लेश—पत्रे ५ मंत्रिपदं	हस्ते ३ दानी	बाहौ ५ धनागमः	स्कंधे ४ गुरुभक्तः	त्वचा १३ मातृहा
फले ४ विपुलाल०	हृदये ९ मंत्री	हस्ते ४ दयाधर्मी	हस्ते ८ बली	लता १२ पितृहा
शिखा ३ अल्पजीवी	नाभौ २ ज्ञानी	गुह्ये ४ कामिनी	हृदये ११ आत्महा	स्कंध ४ अल्पायुः
	गुह्ये १० कामी	जंघे ४ मातुलघ्नी	नाभौ ६ भ्रमः	
	जानु ६ मतिमान्	जानु ४ भ्रातृनाशः	गुदे ८ तपस्वी	
	पादे ६ मतिमान्	पादे १० वैधव्यं	पादे ५ धनहा	

मूलनिवासस्तत्फलं च।

स्वर्गे शुचिप्रौष्ठपदेषमाघे भूमौ नभःकार्तिकचैत्रपौषे।
मूलं ह्यधस्तात्तु तपस्यमार्गवैशाखशुक्रेष्वशुभं च तत्र ॥ ५६ ॥

आषाढ़ भाद्रपद आश्विन माघ महीना में मूलका वास स्वर्गमें, श्रावण कार्तिक चैत्र पौषमें पृथ्वीमें, फाल्गुन मार्गशीर्ष वैशाख ज्येष्ठमें पातालमें रहता है, जिस महीनेमें जहां रहता है वहां ही अशुभ फल करता है अन्य लोगोंमें दोष नहीं ॥ ५६ ॥ (इं० व०)

दुष्टगण्डान्तादीनां परिहारः ।

गण्डान्तेन्द्रभशूलपातपरिघव्याघातगण्डावमे संक्रान्तिव्यतिपातवै-
धृतिसिनीवालीकुहूदर्शके । वज्रे कृष्णचतुर्दशीषु यमघण्टे दग्धयोगे
मृतौ विष्टौ सोदरभे जनिर्न पितृभे शस्ता शुभा शान्तितः ॥ ५७॥

गंडांत, ज्येष्ठा, शूल, पात, परिघ, व्याघात, अतिगण्ड, क्षयतिथि, संक्रांति, व्यतीपात, वैधृति, (सिनीवाली) शुक्लप्रतिपदाका पूर्वदल, (कुहू) कृष्णचतुर्दशीका उत्तरदल, (दर्श) अमावस्या, वज्रयोग, कृष्णचतुर्दशी, यमघंट, दग्धयोग, मृत्युयोग, भद्रा, सहोदर, भाई तथा मातापिताके जन्मनक्षत्र, इतनेमें पुत्रकन्याजन्म अनिष्ट होता है, इनकी शांतिसे शुभ है, उपलक्षणसे ग्रहणजन्म, (त्रिक) तीन पुत्रोंके पीछे कन्या, तीन कन्याओंके पीछे पुत्रजन्म आदि भी ऐसे ही हैं ॥ ५७ ॥ (शा० वि०)

अश्विन्यादिताराणां स्वरूपादिविचारः ।

त्रित्र्यङ्कपञ्चाग्निकुवेदवह्नयःशरेषुनेत्राश्विशरेन्दुभूकृताः ।
वेदाग्निरुद्राश्वियमाग्निवह्नयोऽब्धयःशतं द्विद्विरदाभतारकाः ॥ ५८॥

अश्विन्यादि नक्षत्रोंके तारा कहते हैं कि, अश्विनीके ३ भरणीके ३ एवं कृ० ६ रो० ५ मृ० ३ आ० १ पु० ४ पु० ३ आ० ५ म० ५ पू० २ उ० २ ह० ५ चि० १ स्वा० १ वि० ४ अ० ४ ज्ये० ३ मू० ११ पू० २ उ० २ अभि० ३ श्र० ३ ध० ४ श० १०० पू० २ उ० २ रेवतीके ३२ इन ताराओंकी गणना तथा वक्ष्यमाण रूपोंसे तारा पहिचाने जाते हैं ॥ ५८ ॥ (उ० जा०)

अश्व्यादिरूपं तुरगास्ययोनी क्षुरोऽनएणास्यमणीगृहं च ।
पृषत्कचक्रे भवनं च मञ्चः शय्या करो मौक्तिकविद्रुमं च ॥ ५९ ॥
तोरणं बलिनिभं च कुण्डलं सिंहपुच्छगजदन्तमञ्चकाः ।
त्र्यस्रिचत्रिचरणाभमर्दलौ वृत्तमञ्चयमलाभमर्दलाः ॥ ६० ॥

अश्विन्यादिकोंके रूप--अश्विनी घोडाकासा मुख, भरणी भग, कृ० (क्षुर) उस्तरा रो० गाडी, मृ० हरिणमुख, आ० मणि, पु० मकान, पु० बाण, आ० चक्र, म० मकान, पू० मञ्च, उ० विस्तर, ह० हाथ, चि० मोती, स्वा० मूंगा, वि० तोरण, अ० भातका पुंज, ज्ये० कुण्डल, मू० शेरकी मूंछ, पू० हाथीदांत, उ० मञ्च, अ०

त्रिकोण, श्र० वामन, ध० मृदंग, श० वृत्त, पू० मञ्चा, उ० यमल खेती मृदंग-स्वरूप हैं ॥ ५९ ॥ ६० ॥ (उ० जा०) (रथोद्धता ६०)

नक्षत्रचक्रम्

नक्षत्र	तारा	रूप	देवता	अवकहडाचक्र	गण	योनि	नाडी
अ.	३	घोडा	अश्विनी कुमार	चूचेचोला	दे.	अश्व	१
भ.	३	भग	यम	लीलूलेलो	म.	गज	२
कृ.	६	छुरी	अग्नि	आईऊए	रा.	छाग	३
रो.	५	गाडी	ब्रह्मा	ओवावीवु	म.	नाग	३
मृ.	३	हरिण	चंद्र	वेवोकाकी	दे.	नाग	२
आ.	१	मणि	शिव	कूघंङछ	म.	श्वान	१
पु.	४	मकान	अदिति	केकोहाही	दे.	मार्जार	१
ति.	३	बाण	अंगिरा	हूहेहोडा	दे.	छाग	२
आ.	५	चक्र	सर्प	डीडूडेडो	रा.	मार्जार	३
म.	५	घर	पिता	मामीमूमे	रा.	मूषक	३
पू.	२	मंजा	भग	मोटाटीटू	म.	मूषक	२
उ.	२	बिस्तर	अर्यमा	टेटोपापी	म.	गौ	१
ह.	५	हात	सूर्य	पूषाणाठा	दे.	महिषी	१
चि.	१	मोती	त्वष्टा	पेपोरारी	रा.	व्याघ्र	२
स्वा.	१	मूंगा	वायु	रूरेरोता	दे.	महिषी	३
वि.	४	तोरण	इंद्राग्नी	तीतूतेतो	रा.	व्याघ्र	३
अ.	४	भातपुं	मित्र	नानीनूने	दे.	मृग	२
ज्ये.	३	कुंडल	इन्द्र	नोयायीयू	रा.	मृग	१
मू.	११	सिंहपु	राक्षस	येयोभाभी	रा.	श्वान	१
पू.	२	हा. दां	जल	भूधाफाढा	म.	कर्कट	२
उ.	२:	मंजा	विश्वेदेव	भेभोजाजी	म.	नेवला	१
अ.	३	त्रिको	विधि	जूजेजोखा	दे.	नेवला	३
श्र.	३	वामन	विष्णु	खीखूखेखो	दे.	मर्कट	३
ध.	४	मृदंग	वसु	गागीगूगे	रा.	सिंह	२
श.	१००	वृत्त	वरुण	गोसासीसू	रा.	अश्व	१
पू.	२	मंजा	अजपाद्	सेसोदादी	म.	सिंह	१
उ.	२	यमल	अहिर्बु०	दूथझञ	म.	गौ	२
रे.	३२	मृदंग	पूषा	देदोचाची	दे.	गज	३

जलाशयादिप्रतिष्ठामुहूर्तः ।

जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा सौम्यायने जीवशशाङ्कशुक्रे ।
दृश्ये मृदुक्षिप्रचरध्रुवे स्यात्पक्षे सिते स्वर्क्षतिथिक्षणे वा ॥ ६१ ॥

जलस्थान, बगीचा और देवता आदि प्रतिष्ठाका मुहूर्त कहते हैं कि, उत्तरायणमें बृहस्पति, चन्द्रमा, शुक्रके उदयमें मृदु, ध्रुव, क्षिप्र, चर नक्षत्रमें, शुक्लपक्षमें शुभ नक्षत्र तिथि वार मुहूर्तमें तथा जिस देवताकी प्रतिष्ठा हो उसीके नक्षत्रमें जैसे विष्णुकी श्रवणमें, शिवकी आर्द्रामें, जलाशयकी पूर्वाषाढा शततारामें तथा रिक्ता तिथि मंगल वार रहितमें उक्त कृत्य करना (इसमें अगले श्लोकके प्रथम चरणका अर्थ भी आ गया) ॥ ६१ ॥ (उ० जा०)

देवप्रतिष्ठायां लग्नशुद्धिः ।

रिक्तारवर्ज दिवसेऽतिशस्ता शशाङ्कपापैस्त्रिभवाङ्गसंस्थैः ।
व्यन्त्याष्टगैः सत्खचरैर्मृगेन्द्रे सूर्यो घटे को युवतौ च विष्णुः ॥६२॥
शिवो नृयुग्मे द्वितनौ च देव्यः क्षुद्राश्चरे सर्व इमे स्थिरर्क्षे ।
पुष्ये ग्रहा विघ्नपयक्षसर्पभूतादयोऽन्त्ये श्रवणे जिनश्च ॥ ६३ ॥
इति श्रीदैव०रामविर०मुहूर्तचिन्ता०द्वि० नक्षत्र प्र० समाप्तम् ॥ २ ॥

प्रथम पादका अर्थ पूर्व कहा गया, शेषका यह है कि, जलाशय एवं बगीचाकी प्रतिष्ठामें शुभलग्नमात्र विचार्य है, ग्रहयोगकी विशेषता नहीं, देवप्रतिष्ठामें चन्द्रमा तथा पापग्रह ३ । ६ । ११ में शुभ ग्रह ८ । १२ भावरहित स्थानोंमें शुभ होते हैं, विशेषता यह है कि, सूर्यकी प्रतिष्ठा सिंहलग्नमें, ब्रह्माकी कुम्भमें, विष्णुकी कन्यामें, शिवकी मिथुनमें, देवीकी मिथुन कन्या धन मीनमें तथा दक्षिणामूर्त्यादिकोंको चरलग्नोंमें (क्षुद्र) चतुःषष्टियोगिनी आदिकोंकी (अनुक्त) इन्द्रादिकी स्थिरलग्नोंमें स्थापना करनी तथा चन्द्रादि ग्रह पुष्य नक्षत्रमें, उपलक्षणमें सूर्य हस्तमें, शिव ब्रह्मा पुष्य श्रवण अभिजित्में, कुबेर स्कन्द अनुराधामें, दुर्गा आदि मूलमें सप्तर्षि व्यास वाल्मीकि आदि जिन नक्षत्रोंमें सप्तर्षि देखे जाते हैं अथवा पुष्यमें । गणेश, यक्ष, नाग, भूत, विद्याधर अप्सरा, राक्षस, गन्धर्व, किन्नर, पिशाच, गुह्यक, सिद्धादि रेवतीमें । (जिन) बुद्ध श्रवणमें । इन्द्र कुबेर वर्जित लोकपाल धनिष्ठामें, शेष देवता तीनों उत्तरा रोहिणीमें प्रतिष्ठायुक्त करने चाहिये ॥ ६२-६३ ॥ (उ० जा०)

इति श्रीदैवज्ञानन्तसुतरामविरचिते मुहूर्तचिन्तामणौ महीधरकृतायां माहीधर्य्यां भाषाटीकायां द्वितीयं नक्षत्रप्रकरणं समाप्तम् ॥ २ ॥

अथ संक्रान्तिप्रकरणम् ३ ।

संक्रान्तिसंज्ञा फलं च ।

घोरार्कसङ्क्रमणमुग्ररवौ हि शूद्रान्ध्वाङ्क्षी विशोलघुविधौ च चरर्क्षभौमे ।
चौरान्महोदरयुता नृपतीञ्ज्ञमैत्रे मन्दाकिनी स्थिरगुरौ सुखयेच्च मन्दा ॥१॥
विप्रांश्च मिश्रभभगौ तु पशूंश्च मिश्रा तीक्ष्णार्कजेऽन्त्यजमुखान्खलु राक्षसी च ।

ग्रहोंकी एकराशिसे दूसरी राशिमें जाना संक्रान्ति कहाती है, यह (१) मध्यमसे (२) स्पष्टसे है; यहां मध्यसंक्रमण छोड़कर स्पष्ट संक्रांति कहते हैं, इसके भी सायन निरयन दो प्रकार हैं. अन्य ग्रहोंकी संक्रांति घटी विवाहप्रकरणमें " देवद्व्यङ्कर्तव " इत्यादि कहेंगे, यहां मुख्यता सूर्यकी वारनक्षत्र भेदसे कहते हैं कि सूर्यकी निरयनांश संक्रांति यदि (उग्रनक्षत्र) तीनों पूर्वा भरणी मघामें तथा रविवारमें हो तो घोरा नामकी शूद्रोंको प्रसन्न करनेवाली होती है, लघुनक्षत्र चन्द्रवारमें हो तो ध्वांक्षी नामकी वैश्योंको सुख देती है. चरनक्षत्र मंगलवारमें हो तो महोदरानामकी चोरोंको सुख करती है. मैत्रनक्षत्र बुधवारमें हो तो मन्दाकिनी नाम्नी राजाओंको सुख देती है, स्थिरनक्षत्र गुरुवारमें हो तो मन्दानामकी ब्राह्मणोंको सुख देती है । मिश्रनक्षत्र शुक्रवारमें हो तो मिश्रानामकी पशुओंको सुख करती है, तीक्ष्ण नक्षत्र शनिवारमें हो तो राक्षसीनामकी चाण्डालोंको सुख देती है ॥ १ ॥ (व० ति०)

दिवारात्रिविभागेन संक्रान्तिफलम् ।

त्र्यंशे दिनस्य नृपतीन्प्रथमे निहन्ति मध्ये द्विजानपि विशोऽपरके च शूद्रान् ॥ २ ॥ अस्ते निशाप्रहरकेषु पिशाचकादीन्नक्तञ्चरानपि नटान्पशुपालकांश्च । सूर्योदये सकललिङ्गिजनं च सौम्य-याम्यायनं मकरकर्कटयोर्निरुक्तम् ॥ ३ ॥

दिनमानमें ३ से भाग लेके अंश होता है, यदि संक्रांति दिनके प्रथम अंशमें हो तो राजाओंको, (द्वितीय) मध्यत्र्यंशमें हो तो ब्राह्मणोंको, तीसरेमें हो तो वैश्योंको, अस्तसमयमें हो तो शूद्रोंको (अनिष्ट) नाश फल कहा है, रात्रिके प्रथम प्रहरमें हो तो पिशाच भूतादिकोंको, दूसरेमें रात्रिचरोंको, तीसरेमें नाचनेवालोंको, चौथेमें पशुपालनेवालोंको और सूर्योदयसमयमें (लिंगिजन) पाखण्डी वा कृत्रिमवेषधारियोंको नाश फल करती है और मकरसंक्रमणसे (सौम्य) उत्तरायण कर्क संक्रमणसे दक्षिणायन होता है । अन्यान्तर मत है—मेष संक्रांति भरण्यादि ४ नक्षत्रमें हो तो अन्नवृद्धि, मघादि १० में हानि, अन्य नक्षत्रोंमें सौख्य होता है, जन्मनक्षत्रमें

संक्रांति राजाओंको शुभ औरको क्लेश, धनक्षय करती है. संक्रांति वर्षका फल १ । ६ । १२ । ४ में.हो तो सुख, सुभिक्ष, ११ । ९ । ५ । ३ में रोग, युद्ध, २ । ८ १० रोग, चोर, अग्निभय होता है ॥ २ ॥ ३ ॥

षडशीतिमुखादिसंज्ञाः ।

षडशीत्याननं चापनृयुक्कन्याझषे भवेत् ।
तुलाजौ विषुवद्विष्णुपदं सिंहालिगोघटे ॥ ४ ॥

धन, मिथुन, कन्या, मीनकी संक्रांति षडशीतिमुखा नामकी तुला मेषकी विषुवती, सिंह, वृश्चिक, वृष, कुंभकी विष्णुपदा होती हैं. इनका प्रयोजन है कि दक्षिणायन विष्णुपदके आद्यकी ७ । ८ के मध्यकी, षडशीत्यानन और मकरकी पीछेकी घटी अतिपुण्यदेनेवाली है ॥ ४ ॥ (अनु०)

संक्रान्तिपुण्यकालः ।

संक्रान्तिकालादुभयत्र नाडिकाः पुण्या मताः षोडश षोडशोष्णगोः ।
निशीथतोऽर्वागपरत्र संक्रमे पूर्वापराहान्तिमपूर्वभागयोः ॥ ५ ॥

संक्रांतिसमयसे १६ घटी पूर्व, १६ घटी परकी पुण्यकाल होता है, यदि संक्रमण रात्रिमें हो तो अर्द्धरात्रिके पूर्व होनेमें पूर्वदिनका उत्तरार्द्ध तथा अर्द्धरात्रिके उत्तर संक्रम होनेमें दूसरे दिनका पूर्वार्द्ध पुण्यकाल होता है ॥ ५ ॥ (उ० जा०)

पूर्णे निशीथे यदि संक्रमः स्याद्दिनद्वयं पुण्यमथोदयास्तात् ।
पूर्वं परस्ताद्यदि याम्यसौम्यायने दिने पूर्वपरे तु पुण्ये ॥ ६ ॥

यदि मध्यरात्रिमें संक्रमण हो तो पूर्व एवं परके दोनों ही दिन पुण्यकाल होता है. कर्कसंक्रांति उदयसे पूर्व हो तो पूर्व दिन और मकरसंक्रांति सूर्यास्तसे ऊपर हो तो दूसरे दिन पुण्यकाल होता है ॥ ६ ॥ (उप०)

संध्या त्रिनाडीप्रमितार्कबिम्बादर्धोदितास्तादध ऊर्ध्वमत्र ।
चेद्याम्यसौम्ये अयने क्रमात्स्तः पुण्यौ तदानीं परपूर्वघस्रौ ॥ ७ ॥

सूर्योदयसे पूर्वकी तथा सूर्यास्तसे ऊपरकी ३ । ३ । घटी संध्यासमय होता है इसी हेतु कर्क मकर संक्रांतिके पूर्वपर दिन पुण्यकाल कहे हैं, सूर्योदय संध्यामें दक्षिणायन हो तो पूर्व दिन तथा सायं संध्यामें उत्तरायण हो तो उत्तर दिन पुण्यकाल स्नान दानादि योग्य होता है ॥ ७ ॥ (इंद्र० व०)

याम्यायने विष्णुपदे चाद्या मध्यास्तुलाजयोः ।
षडशीत्यानने सौम्ये परा नाड्योऽतिपुण्यदाः ॥ ८ ॥

याम्यायन विष्णुपद ४ । २ । ५ । ८ । ११ की संक्रांतियोंके पूर्वकी १६ घटी तुला मेषके मध्यकी षडशीत्यानन ३ । ६ । ९ । १२ के तथा मकर संक्रांतिके आगेकी १६ घटी अतिपुण्य देनेवाली होती है ॥ ८ ॥ (अनु०)

सायनसंक्रान्तिस्तत्फलं च ।

तथायनांशाः खरसाहताश्च स्पष्टार्कगत्या विहृता दिनाद्यैः ।
मेषादितः प्राक्चलसंक्रमाः स्युर्दाने जपादौ बहुपुण्यदास्ते ॥ ९ ॥

ऊपर निरयन संक्रांति कही, अब सायन संक्रांति कहते हैं कि, अयनांश ६० गुणा कर सूर्यस्पष्टगतिसे भागलेकर दिनघटी पलात्मक ३ लब्धि लेना. मेषादि संक्रांतिकालसे पहिले उतने दिनादि चलसंक्रम होता है, दानजपादिमें बहुत पुण्यदेनेवाला होता है ॥९॥(उ०जा०)

जघन्यबृहत्समनक्षत्राणि ।

समं मृदुक्षिप्रवसुश्रवोऽग्निमघात्रिपूर्वास्रपभं बृहत्स्यात् ।
ध्रुवद्विदैवादितिभञ्जघन्यं सार्पाम्बुपार्द्रानिलशाक्रयाम्यम् ॥ १० ॥

मृदु, क्षिप्र, धनिष्ठा, श्रवण, कृत्तिका, मघा, तीनों पूर्वा और मूल ये १५ नक्षत्र समसंज्ञक हैं, ध्रुव, विशाखा,पुनर्वसु ये ३ नक्षत्र बृहत्संज्ञक और आश्लेषा, शततारा, आर्द्रा, स्वाती, ज्येष्ठा, भरणी ६ नक्षत्र जघन्यसंज्ञक हैं ॥ १० ॥ (उ० जा०)

संज्ञाप्रयोजनम् ।

जघन्यभे संक्रमणे मुहूर्त्ताः शरेन्दवो बाणकृता बृहत्सु ।
खरामसंख्यासमभे महर्घं समर्घसाम्यं विधुदर्शनेऽपि ॥ ११ ॥

जघन्य नक्षत्रोंमें संक्रम हो तो १५ मुहूर्त, बृहत्‌में ४५, सम नक्षत्रोंमें ३० मुहूर्त जाने, जो १५ मुहूर्तवाली संक्रांति होतो (महर्घ) अन्नभाव तेज हो, ४५ मुहूर्तकी हो तो (सुलभ) सस्ता हो, ३० मुहूर्तवाली हो तो (सम) न तेज न मन्दा, सामान्य रहे; ऐसा ही विचार चन्द्रोदयमें भी जानना ॥ ११ ॥ (उ० जा०)

कर्कसंक्रान्तावब्दविंशोपकाः ।

अर्कादिवारे सङ्क्रांतौ कर्कस्याब्दविंशोपकाः ।
दिशो नखा गजाः सूर्या धृत्योऽष्टादश सायकाः ॥ १२ ॥

कर्कसंक्रांति रविवारको हो तो १० सोमवारको २० मंगलको ८ बुधको १२ बृहस्पतिको १८ शुक्रको १८ शनिको ५ अन्द विनाशक होती हैं ॥ १२ ॥ (अनु०)

स्यात्तैतिले नागचतुष्पदे रविःसुप्तो निविष्टस्तु गरादिपञ्चके ।
किंस्तुघ्न ऊर्ध्वःशकुनौ सकौलवे नेष्टः समः श्रेष्ठ इहार्घवर्षणे ॥ १३ ॥

तैतिल नाग चतुष्पद करणोंमें रवि सोकर संक्रम करते हैं वह अन्नके भाव (मूल्य) वर्षाके लिये अनिष्ट होता है, (गरादि पांच) गर वणिज विष्टि बव बालवमें बैठकर संक्रम करते हैं वह मध्यम होता है किंस्तुघ्न शकुनि और कौलवमें खडे होकर संक्रांति करते हैं वह श्रेष्ठ होता है इसको आगे प्रगट कहेंगे ॥ १३ ॥ (इं० व०)

संक्रांतिवाहनादिः ।

सिंहव्याघ्रवराहरासभगजा वाहद्विषड्घोटकाः
श्वाजौ गौश्चरणायुधश्च बवतो वाहा रवेः संक्रमे ।
वस्त्रं श्वेतसुपीतहारितकपाण्डवारक्तकालासितं
चित्रं कम्बलदिग्धनाभमथ शस्त्रं स्याद्भुशुण्डी गदा ॥ १४ ॥
खड्गो दण्डशरासितोमरमथो कुन्तश्च पाशोऽङ्कुशो-
ऽस्त्रं बाणस्त्वथ भक्ष्यमन्नपरमान्नं भैक्षपक्वान्नकम् ।
दुग्धं दध्यपि चित्रितान्नगुडमध्वाज्यं तथा शर्करा-
ऽथो लेपो मृगनाभिकुङ्कुममथो पाटीरभूद्रोचनम् ॥ १५ ॥
यावश्चोतुमदो निशाञ्जनमथो कालागुरुश्चन्द्रको
जातिर्दैवतभूतसर्पविहगाः पश्विणविप्रास्ततः ।
क्षत्ता वैश्यकशूद्रसंकरभवाः पुष्पं च पुन्नागकं
जातीबाकुलकेतकानि च तथा बिल्वार्कदूर्वाम्बुजम् ॥ १६ ॥
स्यान्मल्लिका पाटलिका जपा च संक्रान्तिवस्त्राशनवाहनादेः ।
नाशश्च तद्वृत्तिजीविनां च स्थितोपविष्टस्वपतां च नाशः ॥ १७ ॥

बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि ये ७ करण चर और शकुनि किंस्तुघ्न, नाग, चतुष्पद ये ४ स्थिर करण है, इनमें संक्रांति होनेसे क्रमसे वाहनादि कहते हैं कि, बव १ में सिंह । बालव २ में व्याघ्र । कौलव ३ में सूकर । तैतिल४ में गदहा । गर ५ में हाथी । वणिज ६ में महिष । विष्टि ७ में घोडा । शकुनि

८ में कुत्ता । चतुष्पद ९ में मेंढा । नाग १० में बैल । किंस्तुघ्न ११ में मुर्गा । बवादि क्रमसे वस्त्र—१ में श्वेत २ पीत ३ नीला ४ गुलाबी ५ लाल ६ कृष्ण ७ स्याह ८ चित्र ९ कंबल १० नङ्गा ११ मेघवर्ण । एवं क्रमसे शस्त्र-१ (भुशुण्डी) दण्डविशेष २ गदा ३ खड्ग ४ लाठी ५ धनुष ६ बाण ७ मुद्गर ८ कुन्त ९ पाश १० अंकुश ११ बाण । भोजन--१ अन्न २ पायस ३ भिक्षा ४ पक्कान्न ५ दूध ६ दही ७ खिचडी ८ गुड ९ मध्वन्न १० घी ११ शर्करा । लेप--१ कस्तूरी २ कुंकुम ३ सुर्खचन्दन ४ मिट्टी ५ गोरोचन ६ हरिद्रा ७ (यावक) जौखार ८ (ओतु) बिरालमद ९ सुर्मा १० अगरु ११ कर्पूर । जाति--१ देवता २ भूत ३ सर्प ४ पक्षी ५ पशु ६ मृग ७ ब्राह्मण ८ क्षत्रिय ९ वैश्य १० शूद्र ११ (मिश्र) संकर । पुष्प १ (नागकेशर) पुन्नाग २ जाती ३ बकुल ४ केतकी ५ बिल्व ६ आक ७ दूर्वा ८ कमल ९ बेला १० गुलाब ११ जपा (ओंड्र) । अवस्था—१ शिशु २ कुमार ३ गतालका ४ युवा ५ प्रौढा ६ प्रगल्भा ७ वृद्धा ८ वन्ध्या ९ अतिवन्ध्या १० सुतार्थिनी ११ प्रव्राजिका । १ पांथ । २ भोग ३ रति ४ हास्य ५ दुर्मुखी ६ जरा ७ भुक्ता ८ कम्पा ९ ध्याना १० कर्कशा ११ वृद्धा । इतने जो वाहनादि कहे हैं इनका प्रयोजन यह है कि, उन महीनोंमें उन वस्तुओंका अथवा उन वस्तुओंसे आजीवन करनेवालोंका (जो कोई खडे, बैठे सोयेमें जैसे आजीवन करते हों) नाश होता है ॥ १४--१७ ॥ (शा० वि० ॥ १४--१७ ॥) (इ० व० १७)

संक्रान्तिचक्रम् ।

करण	वाहन	वस्त्र	शस्त्र	भोजन	लेपन	जाति	पुष्प	वय	अवस्था
बव	सिंह	श्वेत	भुशुंडी	अन्न	कस्तूरी	देवता	नाकेशर	शिशु	पंथा
बालव	व्याघ्र	पीत	गदा	पायस	कुंकुम	भूत	जाती	कुमार	भोग
कौलव	वराह	नील	खड्ग	भिक्षा	सुर्खचंदन	सर्प	बकुल अशोक	गतालका	रति
तैतिल	गदहा	गुलाबी	लठ्ठी	पक्कान्न	मिट्टी	पक्षी	केतकी	युवा	हास्य
गर	हाथी	लाल	धनुष	दूध	गोरोचन	पशु	बिल्व	प्रौढ	दुर्मुखी
वणिज	महिष	कृष्ण	बाण	दही	हरिद्रा	मृग	आक	प्रगल्भा	जरा
विष्टि	घोड़ा	श्याम	मुद्गर	खिचरी	जौखार	ब्राह्मण	दूर्वा	वृद्धा	भुक्ता
शकुनि	कुत्ता	चित्र	कुंत	गुड़	बिडालमद	क्षत्रिय	कमल	वंध्या	कंपा
किंस्तुघ्न	मेंढा	कंबल	पाश	मध्वन्न	सुर्मा	वैश्य	बेला	वंध्या	ध्यान
नाग	बैल	नंगा	अंकुश	घी	अगरु	शूद्र	गुलाब	सुतार्थिनी	कर्कशा
चतुष्पद	मुर्गा	बादल रंग	बाण	शक्कर	कपूर	संकर	ओंड्र	परिव्राजिका	वृद्धा

संक्रान्तिवशेन शुभाशुभफलम् ।

संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतस्त्रिभे स्वभे निरुक्तं गमनं ततोऽङ्गभे ।
सुखं त्रिभे पीडनमङ्गभेंऽशुकं त्रिभेऽथ हानी रसभे धनागमः ॥ १८ ॥

संक्रांति जिस नक्षत्रमें हो उसको पहिले नक्षत्रसे अपने जन्मनक्षत्रपर्यन्त गिनना ३ के भीतर हो तो उस महीनेमें गमन हो, पर ६ हो तो सुख एवं ३ पीडन ६ वस्त्रादिलाभ ३ धनहानि ६ धनागम होता है ॥ १८ ॥ (उ० जा०)

कार्यविशेषे ग्रहबलम् ।

नृपेक्षणं सर्वकृतिश्च सङ्गरः शास्त्रं विवाहो गमदीक्षणे रवेः ।
वीर्येऽथ ताराबलतः शुभो विधुर्विधोर्बलेऽर्कोऽर्कबले कुजादयः ॥ १९ ॥

सूर्यका बल देखके अथवा रविवारको राजदर्शन, एवं चन्द्रको समस्त शुभ कृत्य, मंगलको संग्राम, बुधको शास्त्र पढाना पढना, बृहस्पतिको विवाह, शुक्रको यात्रा, शनिको यज्ञदीक्षा शुभ होती हैं तथा ताराबलसे चन्द्रमा शुभ जानना, चन्द्रसंक्रमणमें तारा शुभ हो तो अनिष्ट चन्द्र भी शुभ होता है, ऐसे ही चन्द्रबलसे रविसंक्रम शुभ होता है, अन्य भौमादि ग्रहसंक्रमणमें सूर्यके (बल) उपचयादि होनेमें शुभ होते हैं ॥ १९ ॥ (उ० जा०)

अधिमासक्षयमासनिर्णयः ।

स्पष्टार्कसंक्रान्तिविहीन उक्तो मासोऽधिमासः क्षयमासकस्तु ।
द्विसंक्रमस्तत्र विभागयोस्ता तथेर्हि मासौ प्रथमान्त्यसंज्ञौ ॥ २० ॥
इति श्रीदैवज्ञानन्तसुतरामविरचिते मुहूर्त० संक्रान्तिप्रकरणम् ॥ ३ ॥

शुक्लप्रतिपदासे अमावास्यापर्यन्त चान्द्रमास है, यदि यह मास सूर्यकी स्पष्ट संक्रांतिसे रहित हो तो (अधिमास) मलमास वा लौंद कहते हैं, ऐसे ही उक्त मासमें सूर्यकी स्पष्टसंक्रांति दो आवें तो क्षयमास होता है. उक्त मासकी शुक्ल कृष्ण भेदसे (शुक्लान्त मास, कृष्णांत मास) क्षयमासमें जन्म वा मरणमें तिथिका पूर्वभाग हो तो पूर्वमास, उत्तरार्द्ध हो तो परमास वर्षापनादिकोंके लिये मानते हैं ॥ २० ॥ (उप०)

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ महीधरकृतायां भाषाटीकायां तृतीयं प्रकरणं समाप्तम् ॥ ३ ॥

अथ गोचरप्रकरणम् ४ ।

रव्यादीनां गोचरफलम् ।

सूर्यो रसान्त्ये खयुगेऽग्निनन्दे शिवाक्षयोर्भौमशनी तमश्च ।
रसाङ्कयोर्लाभशरे गुणान्त्ये चन्द्रोऽम्बराब्धौ गुणनन्दयोश्च ॥ १ ॥
लाभाष्टमे चाद्यशरे रसान्त्ये नगद्वये ज्ञो द्विशरेऽब्धिरामे ।
रसाङ्कयोर्नागविधौ खनागे लाभव्यये देवगुरुः शराब्धौ ॥ २ ॥
द्व्यन्त्ये नवांशेऽद्रिगुणे शिवाहौ शुक्रः कुनागे द्विनगेऽग्निरूपे ।
वेदाम्बरे पञ्चनिधौ गजेषौ नन्देशयोर्भानुरसे शिवाग्नौ ॥ ३ ॥
क्रमाच्छुभो विद्ध इति ग्रहः स्यात्पितुः सुतस्यात्र न वेधमाहुः ।
दुष्टोऽपि खेटो विपरीतवेधाच्छुभो द्विकोणे शुभदः सितेऽब्जः ॥ ४ ॥

जन्मराशिसे ग्रह-- भाव--फलको गोचर कहते हैं--सूर्य जन्मराशिसे ६ । १२ तथा १०।४ तथा ३ । ९ तथा ११ । ५ । स्थानोंमें शुभ तथा विद्ध भी होता है । जैसे छठा सूर्य है बारहवां कोई ग्रह हो तो वेध हुआ । ऐसे ही दशमपर चतुर्थसे, ३ पर ९से, ११ पर ५से वेध होता है, परंतु पितापुत्रका वेध नहीं होता । जैसे- सू० श० चं० बु० का परस्पर वेध नहीं होता तथा मंगल शनि राहु ६ । ९ । ११ । ५ । ३ । १२ । में चन्द्रमा १० । ४ । ३ । ९ । ११ । ८ । १ । ५ । ६ । १२ । ७ । २ स्थानोंमें पूर्वोक्त क्रमसे शुभ तथा विद्ध भी होता है। बुध २ । ५ आदिमें गुरु ५। ४ । २ । १२ । ९ । १० । ७। ३ । ११ ।८। शुक्र १ । ८ । २ । ७ । ३ । १ । ४ । १० । ५ । ९ । ८ । ५ । ९ । ११ । १२ ।६। ११ । ३ । ये ग्रह इन स्थानोंमें शुभ तथा विद्ध भी होते हैं, विना वेधके शुभ वेधसहित अशुभ होते हैं अनुक्त स्थानोंमें अशुभ ही जानना, यह क्रमवेध कहा गया, इससे विपरीत वामवेध होता है । जैसे,- छठे सूर्यपर बारहवें ग्रहका क्रमवेध है, जो सूर्य बारहवां छठे ग्रहसे विद्ध हो तो यह वामवेध है, जो ग्रह दुष्टस्थानोंमें भी हों और उसपर वामवेध हो तो शुभ होता है और चन्द्रमा शुक्लपक्षमें २ । ९ । ५ स्थानमें यदि ६ । ८ । ४ स्थानस्थित ग्रहोंसे विद्ध न हो तो शुभ होता है ॥१–४॥ (उप० १-२, ई० ३ उ० ४)

द्विविधवेधे मतद्वयम् ।

स्वजन्मराशेरिह वेदमाहुरन्ये ग्रहाधिष्ठितराशितः सः ।
हिमाद्रिविन्ध्यान्तर एव वेधो न सर्वदेशेष्विति काश्यपोक्तिः ॥ ५ ॥

वेधचक्रम् ।

रवेः				मं. श. रा.				चं.					बुधस्य.			
६	१०	३	११	६	११	३	१०	३	११	१	६	७	२	४	६	
१२	४	९	५	९	५	१२	४	९	८	५	१२	२	५	३	९	
गुरोः								शुक्रस्य								
८	१०	११	५	२	९	७	११	१	२	३	४	५	८	९	१२	११
१	८	१२	४	१२	१०	३	८	८	७	१	१०	९	५	११	६	३

एक जन्मराशिसे, दूसरा ग्रहाधिष्ठित राशिसे वेध दो प्रकारका किसीके मतसे है । काश्यपादि आचार्योंने जन्मराशिसे ही दो भेद कहे हैं । जैसे--छठा सूर्य स्वराशिसे द्वादशस्थ ग्रहसे विद्ध न हो तो शुभ है १ तथा सूर्य जन्मराशिसे द्वादश नेष्ट है परन्तु स्वाक्रान्तराशिसे छठे भावगत ग्रहोंसे विद्ध (वामवेध) हो तो शुभ होता है यह दो प्रकारका वेध हिमालय और विंध्याचलके मध्य (आर्यावर्त्त) देशमें माना जाता है, सभी देशोंमें नहीं ॥ ५ ॥ (उ० जा०)

जन्मराशेः सकाशात् ग्रहणफलम् ।

जन्मर्क्षे निधनं ग्रहे जनिभतो घातः क्षतिः श्रीर्व्यथा
चिन्तासौख्यकलत्रदौस्थ्यमृतयः स्युर्माननाशः सुखम् ।
लाभोऽपाय इति क्रमात्तदशुभध्वस्त्यै जपः स्वर्णगो-
दानं शान्तिरथो ग्रहं त्वशुभदं नो वीक्ष्यमाहुः परे ॥ ६ ॥

ग्रहणका फल कहते हैं कि, जन्मनक्षत्रमें मरण, जन्मराशिपर शरीर पीडा, दूसरा हानि ३ धन ४ रोग ५ पुत्रकष्ट ६ सौख्य ७ स्त्री कष्ट ८ मृत्यु ९ माननाश १० सुख ११ लाभ १२ नाश ये फल छः महीनेपर्यन्त होते हैं । अशुभ फल दूर करनेके लिये गायत्र्यादि मन्त्रोंका जप, गोदान; भूमि, सुवर्ण आदि यथाशक्ति दान और कल्पोक्त शांति करनी । किसीका मत है कि, अनिष्टफलसूचक ग्रहण देखना नहीं, यह भी उपाय है ॥ ६ ॥ (शा० वि०)

चन्द्रबले विशेषः ।

पापान्तः पापयुग्द्यूने पापाच्चन्द्रः शुभोऽप्यसन् ।
शुभांशे चाधिमित्रांशे गुरुदृष्टोऽशुभोऽपि सन् ॥ ७ ॥

शुभफल देनेवाला (शुभावस्थ) चन्द्रमा भी पापग्रहोंके बीच तथा पापयुक्त और पापग्रहोंसे सप्तम भावमें हो तो अशुभ फल देता है, यदि शुभग्रह वा अधिमित्रांशकमें हो और गुरुदृष्ट हो तो अशुभ भी शुभ फल देता है ॥ ७ ॥ (अनु०)

सितासितादौ सद्दृष्टे चन्द्रे पक्षौ शुभाशुभौ ।
व्यत्यासे चाशुभौ प्रोक्तौ संकटेऽब्जबलं त्विदम् ॥ ८ ॥

शुक्लपक्षकी प्रतिपदामें यदि चन्द्रमा गोचरसे शुभ हो तो सारा शुक्लपक्ष शुभ और कृष्णपक्षकी प्रतिपदामें अनिष्ट हो तो सारा कृष्णपक्ष शुभ होता है. विपरीतमें विपरीत जानना अर्थात् शुक्ल. १ में चन्द्र अनिष्ट हो तो वह पक्ष अनिष्ट;. कृष्ण प्रतिपदामें शुभ हो तो वह भी पक्ष अनिष्ट हो ॥ ८ ॥ (अनुष्टुप्)

ग्रहदानचक्रम् ।

ग्रह	दा.	०	०	०	०	०	०	०	०	जप
रवि	माणिक	गेहूं	सवत्सागौ	रक्तवस्त्र	गुड	सोना	तांबा	रक्तचंदन	मजल	७०००
चंद्र	घृतकलश	श्वेतवस्त्र	दही	शंख	मोती	सोना	चांदी	०	०	११०००
मंगल	मूंगा	गेहूं	मसुरी	बैललाल	कनेरफूल	रक्तवस्त्र	गुड	सोना	तांबा	१००००
बुध	नीलवस्त्र	मूंग	सोना	दासी	पन्ना	रलस	घृत	कांसी	हाथिदांत	८०१०
गुरु	पीतवस्त्र	घोडा	सहत	पीलाअन्न	नोंन	पुष्पराज	चीनी	हरिद्रा	सोना	१९०००
शुक्र	चित्रवस्त्र	चावल	घृत	सोना	चांदी	हीरा	सुगंध	शुभ्रधेनु	यक्षकर्दम	११०००
शनि	उडद	तेल	नीलम	तिल	कुलथी	भैंस	लोह	कृष्णगौ	भैंसी	२३०००
राहु	गोमेद	घोडा	नीलम	कंबल	तिल	उडद	लोहा	भेड	सोना	१८०००
केतु	वैडूर्य	रत्न	कस्तूरी	कंबल	शस्त्र	गेहूं	नोंन	धूम्रवस्त्र	बकरा	७०००

दुष्टग्रहपरिहाराय रत्नधारणम् ।

वज्रं शुक्रेऽब्जे सुमुक्ताप्रवालं भौमेऽगौगोमेदमार्कौ सुनीलम् ।
केतौ वैडूर्यं गुरौ पुष्पकं ज्ञे पाचिः प्राङ्माणिक्यमर्के तु मध्ये ॥९ ॥

ग्रहोंके दुष्टफलपरिहारको प्रत्येकके मणि तथा उनके नवरत्न धारणकी विधि है कि, शुक्रका हीरा अँगूठी वा बाजूके पूर्व किनारेपर, चन्द्रमाका मोती आग्नेयमें, मंगलका मूंगा दक्षिणमें, राहुका गोमेद नैर्ऋत्यमें, शनिका नीलम पश्चिममें, केतुका वैडूर्य वायव्यमें, बृहस्पतिका पुखराज उत्तरमें, बुधका पाचि (पन्ना) ईशानमें, सूर्यकी (माणिक्य) चुन्नी मध्यमें रखना अथवा एक एक ग्रहके प्रीत्यर्थ उक्त एक एकका धारण वा दान करना ॥ ९ ॥ (शालि०)

माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि गारुत्मकं पुष्पकवज्रनीलम् ।
गोमेदवैडूर्यकमर्कतः स्यू रत्नान्यथो ज्ञस्य मुदे सुवर्णम् ॥१० ॥

धारण योग्य माणिक्य ये हैं कि रत्न, सूर्यका चुन्नी, चं० मोती०, मं० मूंगा, बु० पन्ना, बृ० पुखराज, शु० हीरा, श० नीलम, रा० वैडूर्य, के० मरकत और बुधके प्रीत्यर्थ सुवर्ण धारण भी कहा है ॥ १० ॥ (इ० व०)

बहुमूल्यरत्नधारणासामर्थ्ये प्रतिनिधिरत्नानि ।

धार्यं लाजावर्तकं राहुकेत्वो रौप्यं शुक्रेन्द्वोश्च मुक्ता गुरोस्तु ।
लोहं मन्दस्यारभान्वोः प्रवालं तारा जन्मर्क्षात्त्रिरावृत्तितः स्यात्॥११॥

बहुमूल्य मणि धारणकी शक्ति न हो तो--बुधका सुवर्ण धारण करे. इस अर्थका प्रथम श्लोकसे अन्वय है. तथा राहु केतुका (लाजावर्त्त) चं० शु० की चांदी, बृ० मोती, श० लोहा, सू० मं० मूंगा । ग्रन्थांतरोंमें जड़ी-धारण भी कहे हैं; सू० बेलकी, चं० दूधिया, मं० गोजिह्वा, बुधका विधारा, बृ० भारंगी, शु० सिंहपुच्छ, श० बिछली, रा० चन्दन, के० असगंध और जन्मनक्षत्रसे दिन नक्षत्रपर्यंत ९।९ करके ३ आवृत्ति गिननी जितनी हो उतनी तारा जाननी ॥ ११ ॥ (शालि०)

ताराबलम् ।

जन्माख्यसम्पद्विपदः क्षेमप्रत्यरिसाधकाः ।
वधमैत्रातिमैत्रा स्युस्तारा नामसदृक्फलाः ॥ १२ ॥

पूर्वश्लोकोक्त क्रमसे गिनके क्रमसे ये तारा होती हैं, जन्म १ संपत् २ विपत् ३ क्षेम ४ प्रत्यरि ५ साधक ६ वध ७ मित्र ८ परममित्र ९ जैसे इनके नाम हैं, वैसे ही फल भी हैं इनमेंसे ३ । ५ । ७ तारा अनिष्ट हैं ॥ १२ ॥ (अनुष्टुप्)

आवश्यककृत्ये दुष्टताराणां परिहारः ।

मृत्यौ स्वर्णतिलान्विपद्यपि गुडं शाकं त्रिजन्मस्वथो
दद्यात्प्रत्यरितारकासु लवणं सर्वो विपत्प्रत्यरिः ।
मृत्युश्चादिमपर्यये न शुभदोऽथैषां द्वितीयेंऽशका-
नादिप्रान्त्यतृतीयका अथ शुभाः सर्वे तृतीये स्मृताः ॥ १३ ॥

आवश्यकतामें दुष्ट ताराओंका परिहार है कि, वध ७ तारामें तिल, सुवर्ण, विपत् ३ में (गुड) चीनी आदि, जन्म तारामें (शाक) भाजी, प्रत्यरि ५ में लवण दान करना, दूसरे प्रकार परिहार है कि, पहिली आवृत्तिमें ३ । ५ । ७ तारा पूरी ६० घटी पर्यन्त नेष्ट हैं, दूसरी आवृत्तिमें विपत्की आदिकी २० घटी, प्रत्यरिके मध्यकी २० घटी, बधके अंत्यकी २० घटी छोडनी, तीसरी आवृत्तिमें सभी शुभ हैं, दोष नहीं करती ॥ १३ ॥ (शार्दू०)

चन्द्रावस्थागणनोपायः ।

षष्टिघ्नं गतभं भुक्तघटीयुक्तं युगाहतम् ।
शराब्धिहल्लब्धतोऽर्कशेषेऽवस्थाः क्रियाद्विधोः ॥ १४ ॥

प्रत्येक राशियोंमें चन्द्रमाकी १२ अवस्था होती हैं, नामसदृश फल समस्त कार्या-रंभमें देती हैं, अश्विनीसे लेकर जितने नक्षत्र हों उस संख्याको ६० से गुना कर वर्त्तमान नक्षत्रकी भुक्तघटी जोड़ देनी, ४ से गुनाकर ४५ से भाग लेना जो लाभ हुआ वह गत अवस्था, शेष वर्त्तमान अवस्था होती हैं । ४५ के भाग देनेसे लब्धि १२ से अधिक होते तो १२ से भाग लेकर शेष गत अवस्था जाननी, उसके आगेकी वर्त्तमान अवस्था होती है, मेषके चन्द्रमा प्रवासादि, वृषमें नाशादि. मिथुनमें मरणादि ऐसे ही सबका क्रम जानना, प्रकारांतरसे इन अवस्थाओंके गिरनेका क्रम चक्रमें लिखा है ॥ [चक्र-५५-५७ में देखो] ॥ १४ ॥ (अनु०)

अवस्थानामानि ।

प्रवासनाशौ मरणं जयश्च हास्यारतिक्रीडितसुप्तभुक्ताः ।
ज्वराख्यकम्पस्थिरता अवस्था मेषात्क्रमान्नामसदृक्फलाःस्युः ॥ १५ ॥

अवस्थाओंके नाम--प्रवास १ नाश २ मरण ३ जय ४ हास्य ५ अरति ६ क्रीडित ७ सुप्त ८ भुक्त ९ ज्वर १० कम्प ११ स्थिर १२ जैसे इनके नाम वैसे ही फल हैं ॥ १५ ॥ (उ० जा०)

ग्रहवैकृतपरिहारोपायः ।

लाजाकुष्ठबलाप्रियङ्गुघनसिद्धार्थनिशादारुभिः
पुंखालोध्रयुतजलैर्निगदितं स्नानं ग्रहोत्थापहृत् ।
धेनुः कम्बुररुणो वृषश्च कनकं पीताम्बरं घोटकः
श्वेतो गौरसिता महासिरज इत्येता रवेर्दक्षिणाः ॥ १६ ॥

दुष्ट ग्रहोंके परिहारार्थ स्नानकी औषधी (लाजा) खील अथवा लज्जावती, कूठ (बला) भीमली, मालकांगनी, मुस्ता, सर्षप, देवदारु, हरिद्रा, शरपुंखा, लोध इतने जलमें मिलाके स्नान करनेसे ग्रहोंका अरिष्ट दूर होता है । दक्षिणा कहते हैं कि, सूर्यके प्रीत्यर्थ गौ, चं० शंख, मं० रक्त वृषभ, बु० सुवर्ण, बृ० पीतांबर, शु० घोडा, श० कृष्ण गौ, रा० खड्ग, केतुको बकरा दक्षिणामें देना ॥ १६ ॥ (शा०)

नं० १ चक्र,

चन्द्रावस्थाचक्रम् ।

अ.	११। प्रवास	२२॥ नाश	३३॥। मरण	४५ जय	५६। हास्य	६० रति
भ.	७॥ रति	१८॥। क्रीडित	३० सुप्त	४१। भुक्ति	५२॥ ज्वर	६० कंप
कृ.	३॥। कंप	१५ स्थिर	२६। प्रवास	३७॥ नाश	४८॥। मरण	६० जय
रो.	११। हास्य	२२॥ रति	३३॥। क्रीडा	४५ सुप्ति	५६। भुक्ति	६० ज्वर
मृगशि.	७॥ ज्वर	१८॥। कंप	३० स्थिर	४१। प्रवास	५२॥ नाश	६० मरण
आर्द्रा.	३॥। मृति	१५ जय	२६। हास्य	३७॥ रति	४८॥। क्रीडा	६० सुप्ति
पुन.	११। भुक्त	२२॥ ज्वर	३३॥। कंप	४५ स्थिरता	५६। प्रवास	६० नाश
तिष्य.	७॥ नाश	१८॥। मरण	३० जय	४१। हास्य	५२॥ रति	६० क्रीडा
आश्ले.	॥। क्रीडा	१५ सुप्ति	२६। भक्ति	३७॥ ज्वर	४८॥। कंप	६० स्थिर
मघा.	११। प्रवास	२२॥ नाश	३३॥। मरण	४५ जय	५६। हास्य	६० रति

चन्द्रावस्थाचक्रम् नम्बर २.

पूर्वाफा.	७॥ रति	१८॥। क्रीडा	३० सुप्ति	४१। भुक्ति	५२॥ ज्वर	६० कंप
उ. फा.	३॥। रूप	१५ स्थिर	२६। प्रवास	३७॥ नाश	४८॥। मरण	६० जय
हस्त.	११। हास्य	२२॥ रति	३३॥। क्रीडित	४५ सुप्ति	५६। भुक्ति	६० ज्वर
चि.	७॥ ज्वर	१८॥। कंप	३० स्थिर	४१। प्रवास	५२॥ नाश	६० मरण
स्वा.	३॥। मृति	१५ जय	२६। हास्य	३७॥ स्थिर	४८॥। क्रीडा	६० सुप्ति
वि.	११। भुक्ति	२२॥ ज्वर	३३॥। कम्प	४५ स्थिर	५६। प्रवास	६० नाश
अ.	७॥ नाश	१८॥। मृति	३० जय	४१। हास्य	५२॥ रति	६० क्रीडा
ज्ये.	३॥। क्रीडा	१५ सुप्ति	२६। भुक्ति	३७॥ ज्वर	४८॥। कंप	६० स्थिर
मू.	११। प्रवास	२२॥ नाश	३३॥ मृति	४५ जय	५६। हास्य	६० रति
पूर्वा.	७॥ रति	१८॥। क्रीडा	३० सुप्ति	४१। भुक्ति	५२॥ ज्वर	६० कंप
उत्तरा.	३॥। कंप	१५ स्थिर	२६। प्रवास	३७॥ नाश	४८॥। मरण	६० जय
श्रव.	११। हास्य	२२॥ रति	३३॥। क्रीडित	४५ सुप्ति	५६। भुक्ति	६० ज्वर
धनि.	७॥ ज्वर	१८॥। कंप	३० स्थिर	४१। प्रवास	५२॥ नाश	६० मरण
शत.	३॥। मृति	१५ जय	२६। हास्य	३७॥ रति	४८॥। क्रीडा	६० सुप्ति
पूर्वा.	११। भुक्ति	२२॥ ज्वर	३३॥। कंप	४५ स्थिर	५६। प्रवास	६० नाश
उ.भा.	७॥ नाश	१८॥। मृति	३० जय	४१। हास्य	५२॥ रति	६० क्रीडा
रेवती.	३॥। क्रीडा	१५ सुप्ति	२६। भुक्ति	३७॥ ज्वर	४८॥। कंप	६० स्थिर

ग्रहाणां गन्तव्यराशेः फलदानकालः।

सूर्यारसौम्यास्फुजितीक्षनागसप्ताद्रिवस्त्रान्विधुरग्निनाडीः।
तमोयमेज्याश्विरसाश्विमासान्गन्तव्यराशेः फलदाः पुरस्तात् ॥ १७ ॥

सूर्य जिस राशिपर जानेवाला है उसका फल ५ दिन पहलेसे ही देता है तथा मंगल ८ दिनसे, बुध ७ दिनसे, शु० ७ दिनसे, चं० ३ घटी, राहु ३ महीने, शनि ६ महीने, बृ० २ महीने अर्थात् २७ अंशसे ऊपर स्पष्ट जब हो तो सभीसे अग्रिम राशिका फल देता है॥१७॥ (उ० जा०)

तिथ्यादिदोषे दानम्।

दुष्टे योगे हेम चन्द्रे च शंखं धान्यं तिथ्यर्द्धे तिथौ तण्डुलांश्च।
वारे रत्नं भे च गां हेम नाड्यां दद्यात्सिन्धूत्थं च तारासु राजा ॥१८॥

आवश्यक कृत्यमें दुष्ट योगोंका दान कहते हैं, यहां राजा उपलक्षण है। व्यतिपातादिमें सुवर्ण, चन्द्रदुष्टमें शंख, तिथिमें तण्डुल. वारमें उक्त रत्न, राशिमें गौ, दुर्मुहूर्तमें सुवर्ण तारामें लवण देना ॥ १८ ॥ (शालिनी)

ग्रहाणां राश्यन्तरागमफलम्।

राश्यादिगौ रविकुजौ फलदौ सितेज्यौ मध्ये सदा शशिसुतश्चरमेऽब्जमन्दौ।
अध्वान्नवह्निभयसन्मतिवस्त्रसौख्यदुःखानि मासि जनिभे रविवासरादौ ॥ १९॥

इति श्रीदैवज्ञानन्तसुतराम विरचिते मुहूर्त्तचिन्तामणौ चतुर्थं गोचरप्रकरणं समाप्तम् ॥ ४ ॥

सूर्य मंगल राश्यादि १० अंशमें अपना फल पूर्ण देते हैं,अन्य अंशोंमें थोड़ा थोड़ा देते हैं, एवं शुक्र बृहस्पति मध्यके१०अंशमें बुध पूरे ३० ही अंशोंमें चंद्रमा शनि अंत्य१० अंशमें पूरा फल देते हैं, जिस महीनेमें जन्मनक्षत्र रविवारको हो तो सफर, चन्द्रवारको हो तो भोजन पदार्थ मिले, एवं मंगलको अग्निभय, बु० धर्मबुद्धि बृ० वस्त्रप्राप्ति, शु० सौख्य, श० दुःख होता है ॥ १९ ॥ (व० ति०)

इति महीधरकृतायां मुहूर्तचिन्तामणिभाषाटीकायां चतुर्थं गोचरप्रकरणं समाप्तम् ॥ ४ ॥

अथ संस्कारप्रकरणम् ५।

प्रथमरजोदर्शने मासादि।

आद्यं रजः शुभं माघमार्गराधेयफाल्गुने।
ज्येष्ठश्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा ॥ १ ॥
श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे।
मध्यं च मूलादितिभे पितृमिश्रे परेष्वसत् ॥ २ ॥

संस्कार ४८ हैं, इनमें गर्भाधानोपयोगी रजोदर्शन मुख्य है. यह प्रथम ऋतु (रजोदर्शन) माघ मार्गशीर्ष वैशाख आश्विन फाल्गुन ज्येष्ठ श्रावण महीनोंमें, शुक्लपक्षमें, शुभग्रहोंके वारमें शुभलग्न तथा दिनमें और श्रवण, धनिष्ठा, शततारा, मृदु, क्षिप्र, ध्रुव, स्वाती नक्षत्रोंमें शुभ होता है, मूल पुनर्वसु मघा विशाखा कृत्तिकामें मध्यम, अन्य नक्षत्रोंमें अशुभ होता है, तथा उस समय श्वेत वस्त्र शुभ होता है ॥ १ ॥ २ ॥ (अनु०)

रजोदर्शने निन्द्यकालः।

भद्रानिद्रासङ्क्रमे दर्शरिक्तासन्ध्याषष्ठीद्वादशीवैधृतेषु।
रोगेऽष्टम्यां चन्द्रसूर्योपरागे पाते चाद्यं नो रजोदर्शनं सत् ॥ ३ ॥

प्रथम रजोदर्शन भद्रामें, सोयेमें संक्रांतिदिन, अमावस्या, रिक्तातिथि, संध्यासमय, षष्ठी, द्वादशी, वैधृतिमें तथा ज्वरादि रोगमें, अष्टमीमें, सूर्यचंद्रग्रहणमें, व्यतीपातमें शुभ नहीं होता, नेष्ट फल है ॥ ३ ॥ (शालिनी)

प्रथमरजस्वलास्नानमुहूर्तः।

हस्तानिलाश्विमृगमैत्रवसुध्रुवाख्यैः शक्रान्वितैः शुभतिथौ शुभवासरे च।
स्नायादथार्तववती मृगपौष्णवायुहस्ताश्विधातृभिररं लभते च गर्भम् ॥ ४ ॥

हस्त स्वाती अश्विनी मृगशिर अनुराधा धनिष्ठा ध्रुव ज्येष्ठा नक्षत्र, (शुभतिथि) पूर्वोक्त भद्रादिरहित, शुभग्रहोंके वारमें प्रथम रजोवती स्नान करे और मृगशिर रेवती स्वाती हस्त अश्विनी रोहिणीमें स्नान करनेसे शीघ्र ही गर्भ धारण करती है ॥ ४ ॥ (व० ति०)

गर्भाधानमुहूर्तः।

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेन्निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं
दास्रं पौष्णमथोपरागदिवसं पातं तथा वैधृतिम्।

पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्धं स्वपत्नीगमे
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम् ॥ ५ ॥

गर्भाधानका मुहूर्त कहते हैं-नक्षत्र तिथि लग्नगंडांत, जन्मनक्षत्र मूल भरणी अश्विनी रेवती मघा ग्रहणदिन व्यतीपात वैधृति मातापिताका श्राद्धदिन, दिनमें, परिघार्द्ध, दिव्य अन्तरिक्ष भूमिका उत्पात, जन्मलग्न जन्मराशिमें, अष्टम लग्न, पापयुक्त नक्षत्र लग्न इतने प्रथमऋतुस्नाता (अपनी पत्नीके गमन) गर्भाधानमें वर्जित करे ॥ ५ ॥ (शार्दू०)

भद्राषष्ठीपर्वरिक्ताश्च सन्ध्या भौमार्कार्कीनाद्यरात्रीश्चतस्रः ।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्राह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे सत् ॥ ६ ॥

भद्रा षष्ठी पर्वदिन रिक्तातिथि सन्ध्यासमय मंगल रवि शनिवार और रजोदर्शनसे लेकर ४ रात्रिवर्जित करके तीनों उत्तरा मृगशिर हस्त अनुराधा रोहिणी स्वाती श्रवण धनिष्ठा शतभिषामें गर्भाधान करना ॥ ६ ॥ (शालिनी)

केन्द्रत्रिकोणेषु शुभश्च पापैस्त्र्यायारिगः पुंग्रहदृष्टलग्ने ।
ओजांशगेऽब्जपि च युग्मरात्रौ चित्रादितीज्याश्विषु मध्यमं स्यात् ॥ ७॥

केंद्र १ । ४ । ७ । त्रिकोण ९ । ५ में शुभग्रह, ३ । ६ । ११ भावोंमें पापग्रह हों तथा पुरुषग्रह (सू० मं० बृ०) लग्नको देखें, चन्द्रमा विषमराशिके अंशकमें हो ऐसे लग्नमें तथा समरात्रिमें गर्भाधान करना, स्त्रीग्रह बली चन्द्रमांशकमें तथा विशमराशिमें आधान होतो कन्या होती है, पुंग्रह बली तथा समरात्रिमें पुत्र होता है, मिश्रयोगोंमें नपुंसक होता है और चित्रा पुनर्वसु पुष्य अश्विनी नक्षत्र गर्भाधानको मध्यम हैं, पूर्वोक्तोंके न मिलनेमें इनमें भी करते हैं ॥ ७ ॥ (इ० व०)

सीमन्तोन्नयनमुहूर्तः ।

जीवार्कारदिने मृगेज्यनिर्ऋतिश्रोत्रादितिब्रध्नभे-
रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिर्मासाधिपे पीवरे ।
सीमन्तोऽष्टमषष्ठमासि शुभदैः केन्द्रत्रिकोणे खलै-
र्लाभारित्रिषु वा ध्रुवान्त्यसदहे लग्ने च पुम्भांशके ॥ ८ ॥

गर्भके :निश्चय हुएमें सीमन्तोन्नयन मुहूर्त कहते हैं कि, बृहस्पति मंगल सूर्यवार । हस्त मृगशिर पुष्य मूल श्रवण पुनर्वसुमें सीमन्त संस्कार करना. रिक्ता ४ । ९ ।

१४ अमा द्वादशी षष्ठी अष्टमी तिथि छोड़के छठे आठवें महीनेमें, जिसमें मासेश बलवान् हों तथा शुभग्रह केन्द्र त्रिकोणोंमें, पापग्रह ३ । ६ । ११ भावोंमें हों, लग्नसे पुरुषराशिका अंशक हो. शुभवारके दिन, नक्षत्र विकल्पसे कहते हैं कि, ध्रुवनक्षत्र एवं रेवतीमें सीमन्त संस्कार करना ॥८॥ (शार्दू०)

मासेश्वराः, स्त्रीणां चन्द्रबलं च ।

मासेश्वराः सितकुजेज्यरवीन्दुसौरिचन्द्रात्मजास्तनुपचन्द्रदिवाकराः स्युः ।
स्त्रीणां विधोर्बलमुशन्ति विवाहगर्भसंस्कारयोरितरकर्मसु भर्तुरेव ॥ ९ ॥

गर्भ रहेमें प्रथम मासका स्वामी शुक्र, २ का मंगल, ३ का बृहस्पति, ४ का सूर्य, ५ का चन्द्रमा, ६ का शनि, ७ का बुध, ८का लग्नेश, ९ का चन्द्रमा, १०का सूर्य है, इनके बलवान् होनेमें गर्भ पुष्ट, निर्बलतासे अपने मासमें क्षीणादि करता है । विवाहमें एवं गर्भसंस्कार गर्भाधानादिकोंमें स्त्रियोंकी पृथक् (चन्द्रबल) चन्द्रशुद्धि आवश्यक है, अन्य समस्त कृत्योंमें सौभाग्यवतीको भर्त्ताकी चन्द्रशुद्धि देखी जाती है स्त्रियोंकी पृथक् नहीं ॥ ९ ॥ (व०ति०)

पुंसवनमुहूर्तः ।

पूर्वोदितैः पुंसवनं विधेयं मासे तृतीये त्वथ विष्णुपूजा ।
मासेऽष्टमे विष्णुविधातृजीवैर्लग्ने शुभे मृत्युगृहे च शुद्धे ॥ १० ॥

सीमन्तोक्त तिथि वार नक्षत्रोंमें तीसरे वा चौथे महीनेमें गर्भका पुंसवन संस्कार करना तथा पुंवार पुरुषलग्न और पुरुषनाम नक्षत्रोंमें पुंसवन करते हैं, एवं तीसरे महीनेमें विष्णुपूजा, आठवेंमें विष्णु ब्रह्मा बृहस्पतिका पूजन करना, जितने गर्भसंस्कार कहे हैं इन सभीमें शुभ लग्न तथा अष्टम भाव शुद्ध चाहिये ॥१०॥ (इं०व०)

जातकर्मनामकरणयोर्मुहूर्तः ।

तज्जातकर्मादि शिशोर्विधेयं पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि ।
एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात् ॥ ११ ॥

पुत्र उत्पन्न होते ही नालच्छेदनके पहले जातकर्म करना, यदि वह समय किसी प्रकार व्यतीत हो जाय तो नामकर्मके साथ ही करना, इसलिये जातकर्मादिकोंका एक ही मुहूर्त कहते हैं कि, रिक्तातिथि पर्वदिन छोड़के शुभ वारमें ग्यारहवें अथवा बारहवें दिन मृदु ध्रुव क्षिप्र चर नक्षत्रोंमें करना शुभ है । ब्राह्मणका ११ दिनमें,क्षत्रियोंका १३ में, वैश्योंका १६ में, सूत्रधारका सूतकान्तमें करना, शूद्रोंका महीनेमें, मुख्य काल व्यतीत हुएमें उत्तरायणादि समयकी पूर्वोक्त अपेक्षा है, मुख्यकालमें विशेष विचार नहीं ॥११॥ (उप०)

सूतिकास्नानमुहूर्तः ।

पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु सूतीस्नानं समित्रभरवीज्यकुजेषु शस्तम् ।
नार्द्रात्रयश्रुतिमघान्तकमिश्रमूलत्वाष्ट्रे ज्ञसौरिवसुषड्विरिक्ततिथ्याम् ॥१२॥

रेवती ध्रुव नक्षत्र मृगशिर हस्त स्वाती अश्विनीमें सूतिका स्नान करना । आर्द्रासे तीन श्रवण मघा भरणी मिश्रसंज्ञक एवं मूल चित्रा नक्षत्र बुध शनिवार ८ । ६ । १२ । ४ । ९ । १४ । तिथि सूतिकाके स्नानमें न लेना ॥ १२ ॥

प्रथमादिमासोत्पन्नदन्तफलम् ।

मासे चेत्प्रथमे भवेत्सदशनो बालो विनश्येत्स्वयं
हन्यात्स क्रमतोऽनुजातभगिनीमात्रग्रजान्द्व्यादिके ।
षष्ठादौ लभते हि भोगमतुलं तातात्सुखं पुष्टतां ।
लक्ष्मीं सौख्यमथो जनौ सदशनो वोर्ध्वे स्वपित्रादिहा ॥ १३ ॥

बालकके पहिले महीनेमें दांत उगें तो स्वयं नष्ट हो, दूसरेमें कनिष्ठ भाईको एवं ३ में भगिनी ४ में माता ५ में ज्येष्ठ भ्राताको नष्ट करे, छठेमें बहुत भोग ७ में पितासे सुख, ८ में पुष्टता ९ में धन १० में सौख्य ११ में सुख हो, यदि जन्म ही दन्तसहित हो अथवा ऊपरकी पंक्तिके दाँत आवें तो पित्रादिकोंका नाश करता है ॥१३॥ (शार्दू०)

दोलाचक्रम् ।

दोलारोहेऽर्कभात्पञ्चशरपञ्चेषुसप्तभैः ।
नैरुज्यं मरणं कार्श्यं व्याधिः सौख्य क्रमाच्छिशोः ॥ १४ ॥

बालकको (दोला) पालनेमें झुलानेके लिये दोलाचक्र है कि सूर्यके नक्षत्रसे ५ नक्षत्रमें निरोगी, उपरान्त ५ में मरण, फिर ५ में कृशता, ५ में रोगी, ७ में सौख्य होता है ॥ १४ ॥ (अनु०)

दोलारोहण--निष्क्रमणमुहूर्तौ ।

दन्तार्कभूपधृतिदिङ्मितवासरे स्याद्वारे शुभे मृदुलघुध्रुवभैः शिशूनाम् ।
दोलाधिरूढिरथ निष्क्रमणं चतुर्थमासे गमोक्तसमयेऽर्कमितेऽह्नि वा स्यात् १५

दोलारोहणका उक्त चक्रमें मुहूर्त है कि, ३२ । १२ । १६ । १८ । १० वें दिनोंमें शुभ वारमें मृदु लघु ध्रुव नक्षत्रोंमें बालकोंको दोलारोहण कराना और चौथे महीनेमें तथा यात्रोक्त तिथि वार नक्षत्रोंमें निष्क्रमण कराना ॥ १५ ॥ (व० ति०)

प्रसूतिकायाः जलपूजामुहूर्त्तः।

कवीज्यारतचैत्राधिमासे न पौषे जलं पूजयेत्सुतिका मासपूर्तौ।
बुधेन्द्विज्यवारे विरिक्ते तिथौ हि श्रुतीज्यादितीन्द्वर्कनैर्ऋत्यमैत्रे ॥ १६ ॥

शुक्रास्त, गुर्वस्त, चैत्र, पौष मास, रिक्ता तिथि, मलमास छोडके प्रसूतिसे एक मास पूरे हुएमें बुध चन्द्र बृहस्पति वारमें श्रवण, पुष्य, पुनर्वसु, मृगशिर, हस्त, मूल, अनुराधा नक्षत्रोंमें सूतिका जलपूजन करै ॥ १६ ॥ (भुज०)

अन्नप्राशनमुहूर्त्तः।

रिक्तानन्दाष्टदर्शं हरिदिवसमथो सौरिभौमार्कवारौँ-
ल्लग्नं जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृहलवगं मीनमेषाऽलिकं च।
हित्वा षष्ठात्समे मास्यथ च मृगदृशां पञ्चमादोजमासे
नक्षत्रैः स्यात्स्थिराख्यैः समृदुलघुचरैर्बालकान्नाशनं सत् ॥ १७ ॥

निष्क्रमणसे उपरांत पुत्रका छठे आदि सम मास ६। ८। १०। १२ में तथा कन्याका पांचवें आदि विषम ५। ७। ९। ११। मासमें अन्नप्राशन करना इसमें रिक्ता ४। ९। १४ नन्दा १। ६। ११ अष्ट ८ दर्श ३० हरि १२ तिथि, शनि मंगल सूर्यवार जन्मराशिसे अष्टम लग्न एवं नवांशक और १२। १। ८ लग्न छोडके स्थिर मृदु लघु चर नक्षत्र लेने ॥ १७ ॥ (स्रग्धरा)

केन्द्रत्रिकोणसहजेषु शुभः खशुद्धे लग्ने त्रिलाभरिपुगैश्च वदन्ति पापैः।
लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं प्रशस्तं मैत्राम्बुपानिलजनुर्भमसच्च केचित् ॥ १८ ॥

अन्नप्राशनमें लग्नशुद्धि कहते हैं कि, केन्द्र १।४।७।१० त्रिकोण ५।९ सहज ३ भावमें शुभग्रह, ३। ११। ६ भावोंमें पापग्रह हों, दशम १० भाव (शुद्धि) ग्रहरहित हो, चन्द्रमा १। ८। ६ स्थानोंसे अन्य भावमें हो ऐसे लग्नमें अन्नप्राशन शुभ है तथा अनुराधा शततारा स्वाती और जन्मनक्षत्रको कोई अशुभ कहते हैं ॥ १८ ॥ (व० ति०)

अन्नप्राशनग्रहभावफलम्।

क्षीणेन्दुपूर्णचन्द्रेज्यज्ञभौमार्कार्किभार्गवैः।
त्रिकोणव्ययकेन्द्राष्टस्थितैरुक्तं फलं ग्रहैः ॥ १९ ॥
भिक्षाशी यज्ञकृद्दीर्घजीवी ज्ञानी च पित्तरुक्।
कुष्ठी चान्नक्लेशवातव्याधिमान्भोगभागिति ॥ २० ॥

अन्नप्राशनमें ग्रहभावका फल है कि, त्रिकोण ९ । ५ व्यय १२ केन्द्र १ । ४ । ७ । १० अष्ट ८ वें भावोंमेंसे किसीमें क्षीण चन्द्रमा हो तो भिक्षाका अन्न खानेवाला हो एवं पूर्णचंद्रसे यज्ञ करनेवाला, बृहस्पतिसे दीर्घायु, बुधसे ज्ञानी, मंगलसे पित्तरोगी, सूर्यसे (कुष्ठी) रुधिर संबंधी रोगी, शनिसे (अन्नक्लेश) अन्न पचे नहीं वा अन्न मिलना कठिन हो तथा वातरोगी भी हो, शुक्रसे (भोगी) सुख भोगनेवाला वह बालक हो ॥ १९ ॥ २० ॥

भूम्युपवेशनमुहूर्तः ।

पृथ्वीं वराहमभिपूज्य कुजे विशुद्धे रिक्ते तिथौ व्रजति पञ्चममासि बालम् ।
बद्ध्वा शुभेऽह्नि कटिसूत्रमथ ध्रुवेन्दुज्येष्ठर्क्षमैत्रलघुभैरुपवेशयेत्कौ ॥ २१ ॥

पंचम मासमें (वा अन्नप्राशनसमयमें) भूम्युपवेशन संस्कार कहते हैं कि, पृथ्वी और वराहकी पूजा करके मंगलकी शुद्धिमें रिक्ता । ४ । ९ । १४ तिथियोंको छोडके चर लग्नमें ध्रुव, मैत्र, मृगशिर, ज्येष्ठा, लघुनक्षत्रोंमें बालकके (कटिसूत्र) तागडी "कन्धनी" बांधके उसे पृथ्वीमें बिठलाना ॥ २१ ॥ (व० ति०)

जीविकापरीक्षा ।

तस्मिन्काले स्थापयेत्तत्पुरस्ताद्वस्त्रं शस्त्रं पुस्तकं लेखनीं च ।
स्वर्णं रौप्यं यच्च गृह्णाति बालस्तैराजीवैस्तस्य वृत्तिः प्रदिष्टा ॥ २२ ॥

भूम्युपवेशन समयमें आजीविकाकी परीक्षा है कि, बालकके आगे वस्त्र, शस्त्र, पुस्तक कलम, सोना, चांदी और आजीवनोपयोगी वस्तु रखनी, बालक जिस वस्तुको प्रथम ग्रहण करे उस वस्तुसंबंधी कृत्यसे आजीवन हो, उसी वृत्तिसे प्रतिष्ठा पावे ॥ २२ ॥ (शालि०)

ताम्बूलभक्षणमुहूर्तः ।

वारे भौमार्किहीने ध्रुवमृदुलघुभैर्विष्णुमूलादितीन्द्र-
स्वातीवस्वभ्युपेतैर्मिथुनमृगसुताकुम्भगोमीनलग्ने ।
सौम्यैः केन्द्रत्रिकोणैरशुभगगनगैः शत्रुलाभत्रिसंस्थै-
स्ताम्बूलं सार्धमासद्वयमितसमये प्रोक्तमन्नाशने वा ॥ २३ ॥

मंगल शनिरहित वारमें, श्रवण मूल पुनर्वसु ज्येष्ठा स्वाती धनिष्ठा ध्रुव मृदु नक्षत्रोंमें, मिथुन मकर कन्या कुंभ वृष मीन लग्नोंमें, केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०) त्रिकोण (९ । ५) के शुभग्रह ३ । ६ । ११ के पापग्रहोंमें बालकको पान सुपारी खिलाना, यह कर्म ढाई महीनेमें अथवा अन्नप्राशनके दिन करना ॥ २३ ॥

कर्णवेधमुहूर्तः ।

हित्वैतांश्चैत्रपौषावमहरिशयनं जन्ममासं च रिक्तां
युग्माब्दं जन्मतारामृतुमुनिवसुभिः सम्मिते मास्यथो वा ।
जन्माहात्सूर्यभूपैः परिमितदिवसे ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे-
ऽथौजाब्दे विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः ॥ २४ ॥

कर्णवेधका मुहूर्त–चैत्र पौष महीना सौर मानसे तथा क्षयतिथि (जन्ममास) जन्मदिनसे ३० दिन, रिक्ता ४ । ९ । १४ तिथि, युग्म २ । ४ । ६ । ८ । १० । १२ वर्ष, जन्मतारा, १ । १० । १२ वें नक्षत्र, जन्मनक्षत्रसे इतने वर्जित करके ६ । ७ । ८ वें महीने अथवा जन्मदिनसे १२ । १६ वें दिनमें, इनसे उपरांत विषम वर्षमें । बुध बृहस्पति शुक्र चन्द्रवार एवं श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृदु, लघु नक्षत्रोंमें कर्णवेध शुभ होता है ॥ २४ (स्रग्धरा)

संशुद्धे मृतिभवने त्रिकोणकेन्द्रत्र्यायस्थः शुभखचरैः कवीज्यलग्ने ।
पापाख्यैररिसहजायगेहसंस्थैर्लग्नस्थे त्रिदशगुरौ शुभावहः स्यात् ॥ २५ ॥

कर्णवेधमें लग्नशुद्धि–अष्टमस्थान ग्रहरहित हो, त्रिकोण (९ । ५) केन्द्र (१ । ४ । ७ १०) तथा ३ । ११ स्थानोंमें शुभग्रह, बृहस्पति शुक्रके लग्नों २ । ७ । ९ । १२ में तथा बृहस्पति लग्नमें हो ऐसे लग्नमें कर्णवेध शुभ होता है और जन्मोत्सव कृत्य सौरवर्ष पूर्ण हुएमें "जिस दिन सूर्य जन्मके राश्यादिमें आवे" करते हैं, दाक्षिणात्य जन्मतिथि भी मानते हैं ॥ २५ ॥ (प्रहर्षि०)

चूडाकर्मादीनां निषेधकालः ।

गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठापरिणयदहनाधानगेहप्रवेशा-
श्चौलं राजाभिषेको व्रतमपि शुभदं नैव याम्यायने स्यात् ।
नो वा बाल्यास्तवार्धे सुरगुरुसितयोर्नैवकेतूदये स्यात्
पक्षे वार्धं च केचिज्जहति तमपरे यावदीक्षां तदुग्रे ॥ २६ ॥

देवमन्दिर एवं जलाश्रयकी प्रतिष्ठा, विवाह, अग्न्याधान, गृहप्रवेश, चूडाकर्म, राज्याभिषेक, व्रतबन्ध, दक्षिणायनमें तथा बृहस्पति शुक्रके बाल्य वृद्धत्व अस्तमें (केतु) पुच्छलताराके उदयमें न करने, जब केतु अस्त हो जावे तो १५ वा ७ दिन और भी छोडने । किसीका मत है कि (उग्र) द्विशिख तामस त्रिशिख कीलकादि संज्ञक धूम्रकेतु जबतक देखे जावें तबतक दोष है, उपरांत नहीं ॥ २६ ॥ (स्र०)

गुरुशुक्रयोर्बाल्यवार्द्धकविचारः ।

पुरः पश्चाद् भृगोर्बाल्यं त्रिदशाहं च वार्द्धकम् ।
पक्षं पञ्चदिनं ते द्वे गुरोः पक्षमुदाहृते ॥ २७ ॥
ते दशाहं द्वयोः प्रोक्ते कैश्चित्सप्तदिनं परैः ।
त्र्यहं त्वात्ययिकेऽप्यन्यैरर्धाहं च त्र्यहं विधोः ॥ २८ ॥

शुक्रके पूर्व उदय होनेमें तीन दिन, पश्चिमोदयमें १० दिन बालत्व रहता है तथा पूर्वास्तमें १५ दिन पश्चिमास्तमें ५ दिन वृद्धत्व होता है. बृहस्पति १५ दिन बाल, १५ दिन वृद्ध होता है ॥ किसीके मतसे बृहस्पति शुक्रके उदय तथा अस्तमें बाल्य वार्द्धकके १० । १० दिन हैं, किसीने ७ ही दिन कहे हैं और किसीका मत है कि आत्ययिकमें (यदि कर्तव्य कृत्यकी फिर दिनशुद्ध्यादि न मिले, समय निकल जाता हो तथा उस समयके इस कार्यके न करनेसे पुनः वह कार्य नाश होता हो तो) तीन ही दिन छोडने और चन्द्रमाका वृद्धत्व ३ दिन, बालत्वका आधा दिन छोडना ॥ २७ ॥ २८ ॥ (अनु०)

चौलमुहूर्तः ।

चूडा वर्षात्तृतीयात्प्रभवति विषमेऽष्टार्करिक्ताद्यषष्ठी-
पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम् ।
वारे लग्नांशयोश्चास्वभनिधनतनौ नैधने शुद्धियुक्ते
शाक्रोपेतैर्विमैत्रैर्मृदुचरलघुभैरायषट्त्रिस्थपापैः ॥ २९ ॥
क्षीणचन्द्रकुजसौरिभास्करैर्मृत्युशस्त्रमृतिपङ्गुताज्वराः ।
स्युः क्रमेण बुधजीवभार्गवैः केन्द्रगैश्च शुभमिष्टतारया ॥ ३० ॥

व्रतबंधसे पृथक् चूडाकर्म करना हो तो मुहूर्त है कि, तीसरे वर्षसे विषम ३ । ५ । ७ वर्षोंमें, रिक्ता ४ । ९ । १४ आद्य १ षष्ठी ६ पर्वदिन, चैत्रमास छोडके उत्तरायणमें, बुध बृहस्पति शुक्र चन्द्रवारमें, जन्मराशिलग्नसे अष्टम लग्न न हो, अष्टमस्थानमें शुक्रसे अन्य कोई ग्रह न हो, जन्ममास छोडके और ज्येष्ठासहित अनुराधारहित मृदु चर लघु नक्षत्रोंमें, लग्नसे ११ । ६ । ३ भावोंमें पापग्रह, केन्द्रकोणोंमें शुभग्रह होनेमें चूडाकर्म करना ॥ लग्नसे केन्द्रों (१ । ४ । ७ । १०) में क्षीण चंद्रमा हो तो मृत्यु, मंगल हो तो शस्त्राघात, शनिसे (पंगुता) लंगडा, सूर्यसे ज्वर तथा बुध बृहस्पति शुक्रसे शुभ फल होता है, परन्तु इसमें ताराशुद्धि आवश्यक है, जन्म विपत् प्रत्यरि वध तारा न लेनी. यह विचार (वैदिक मुण्डन) चौल (अवैदिक मुंडन) सुखार्थ क्षौरमें तुल्य है ॥ २९ ॥ ३० ॥ (स्रग्धरा २९ रथो० ३०)

मातरि सगर्भायां चौलमुहूर्तः ।

पञ्चमासाधिके मातुर्गर्भे चौलं शिशोर्न सत् ।
पञ्चवर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि ॥ ३१ ॥

चौलवाले बालककी माताका गर्भ पांचमहीनेसे ऊपरका हो तो पांच वर्षके भीतर अवस्था-वालेका चूडाकर्म न करना, यदि बालक पांच वर्षसे अधिक हो तो पांच महीनेसे अधिक गर्भवती माता होनेमें भी दोष नहीं ॥ ३१ ॥ (अनु०)

चौले दुष्टतारापवादः ।

तारादौष्ट्येऽब्जे त्रिकोणोच्चगे वा क्षौरं सत्स्यात्सौम्यमित्रस्ववर्गे ।
सौम्ये भेऽब्जे शोभने दुष्टतारा शस्ता ज्ञेया क्षौरयात्रादिकृत्ये ॥ ३२ ॥

यदि चन्द्रमा त्रिकोण (५।९) वा उच्च राशिमें हो अथवा रवि बुध गुरु शुक्रके वा अपने षड्वर्गमें तथा गोचरसे शुभस्थानमें हो तो शुभ नक्षत्रमें क्षौर एवं यात्रादि कृत्य दुष्ट तारामें भी कर लेना ॥ ३२ ॥ (शार्दूलवि०)

चौलादिकृत्ये निषिद्धकालः ।

ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोश्चौलादि नाचरेत् ।
ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कैश्चिन्मार्गेऽपि नेष्यते ॥ ३३ ॥

बालककी माता रजोवती अथवा प्रसूता हो तो (चौलादि) चूडा व्रतबन्धन विवाह न करै और आद्यगर्भ कन्या पुत्रके चौलव्रत विवाह ज्येष्ठके महीनेमें न करना । कोई मार्गशीर्षमें भी न करना कहते हैं ॥ ३३ ॥ (अनुष्टुप्)

दन्तक्षौरनखक्रियात्र विहिता चौलोदिते वारभे
पातङ्ग्यारकरवीन्विहाय नवमं षष्ठं च सन्ध्यां तथा ।
रिक्तां पर्व निशां निरासनरणग्रामप्रयाणोद्यतः
स्नाताभ्यक्तकृताशनैर्नहि पुनः कार्य्या हितप्रेप्सुभिः ॥ ३४ ॥

सामान्य क्षौर, दंत, के[illegible] भी चौलोक्त नक्षत्र वारादिकोंमें करना परन्तु शनि, मंगल, सूर्यवारमें तथा एक[illegible] दिनमें तथा सन्ध्याकालमें रिक्तातिथि, पर्वदिन, रात्रि-समयमें न करना और निरा[illegible] अथवा ग्रामांतरकी तैयारीमें न्हायके नित्य नैमित्तिक कर्म करके तेल उबटन लगायके भो[illegible] शृंगार भूषण वस्त्रादि पहनके अपने शुभ चाहनेवाले क्षौर न करें ॥ ३४ ॥ (शार्दू०)

क्षौरस्य विधिनिषेधौ ।

क्रतुपाणिपीडमृतिबन्धमोक्षणे क्षुरकर्म च द्विजनृपाज्ञया चरेत् ।
शववाहतीर्थगमसिन्धुमज्जनक्षुरमाचरेन्न खलु गर्भिणीपतिः ॥ ३५॥

यज्ञमें, विवाहमें, गोदानसंस्कारमें, मातापिताके मरणमें, कैदसे छूटनेमें, ब्राह्मणकी तथा राजाकी आज्ञासे क्षौर अनुक्तदिनमें भी करलेना और गर्भिणी स्त्रीका पति प्रेतके साथ न जाय, तीर्थयात्रा, समुद्रस्नान और क्षौर न करे ॥ ३५ ॥ (मञ्जुभाषिणी)

नृपाणां हितं क्षौरभे श्मश्रुकर्म दिने पंचमे पञ्चमेऽस्योदये वा ।
षडग्निस्त्रिभैत्रोऽष्टकः पञ्चपित्र्योऽब्दतोऽध्यर्यमाक्षौरकृन्मृत्युमेति ॥ ३६॥

श्मश्रुकर्म--शृंगारार्थ क्षौर राजा क्षौरोक्त नक्षत्रमें अथवा पांचवें २ दिन करे, वा क्षौरन-क्षत्रमें जैसे मेष लग्नमें १३ । २० अंश पर्यंत अश्विनीका उदय २६ । ४०.पर्यन्त भरणीका, ३० पर्यंत कृत्तिकाका उदय होता है, जो कार्य क्षौरादि अश्विनीमें उक्त हैं वे मेषलग्नके १३ । २० अंशके भीतर करलेना, ऐसे भी नक्षत्र जानना और छः आवृत्ति कृत्तिकामें, ३ अनुराधामें, ८ रोहिणीमें, ५ मघामें, ४ उत्तराफाल्गुनीमें, मतांतरसे ४ आवृत्ति सभी उत्तराओंमें, जो एक ही वर्षमें क्षौर करे तो मृत्यु पावे ॥३६॥ (मु० प्र०)

अक्षरारम्भमुहूर्तः ।

गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य पञ्चमाब्दके तिथौ शिवार्कदिग्द्विषट्-
शरत्रिके रवावुदक् । लघुश्रवोऽनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे चरो-
नसत्तनौ शिशोर्लिपिग्रहः सतां दिने ॥ ३७ ॥

बालकके पांचमें वर्षमें गणेश, विष्णु, सरस्वती, लक्ष्मीका पूजन करके ११ । १२ । १० । २ । ६ । ५ । ३ तिथियोंमें, सूर्यके उत्तरायणमें, लघु नक्षत्र श्रवण स्वाती रेवती पुनर्वसु आर्द्रा चित्रा अनुराधा नक्षत्रोंमें, चंद्र बुध गुरु शुक्रवारमें, चर । १ । ४ । ७ । १० रहित शुभ लग्नमें अक्षरारंभ करना ॥ ३७ ॥ (पञ्चचामर)

मृगात्कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये गुरुद्वयेऽर्कजीववित्सितेऽह्नि
षट्शरत्रिके । शिवार्कदिग्द्विके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परैः शुभैरधी-
तिरुत्तमा त्रिकोणकेन्द्रगैः स्मृता ॥ ३८ ॥

मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शततारा, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा, पुष्य, आश्लेषा नक्षत्र, रवि गुरु बुध शुक्र वार एवं । ६ । ५ । ३ । ११ । १२ । १० । २ तिथियोंमें तथा शुभग्रह केंद्र (१ । ४ । ७ । १०) त्रिको- (९ । ५) में

हों ऐसे मुहूर्तमें विद्या पढ़नेका आरम्भ करना, कोई ध्रुव, रेवती, अनुराधामें भी कहते हैं। तथा अनध्याय भी विद्यारम्भमें न लेने ॥ ३८ ॥ (पञ्चचामर)

व्रतबन्धकालः ।

विप्राणां व्रतबन्धनं निगदितं गर्भाज्जनेर्वाष्टमे
वर्षे वाप्यथ पञ्चमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे ।
वैश्यानां पुनरष्टमेऽप्यथ पुनः स्याद्वादशे वत्सरे
कालेऽथ द्विगुणे गते निगदिते गौणं तदाहुर्बुधाः ॥ ३९ ॥

व्रतबन्धनके लिये मुख्य काल नित्य एवं (काम्य) ब्रह्मवर्चसादिके लिये दो प्रकारके हैं। गर्भसे अथवा जन्मसे सौरवर्षप्रमाणसे ब्राह्मणका ८ वर्षमें, क्षत्रियका ११ । वैश्यका १२ में मुख्य काल नित्यसंज्ञक है तथा ब्राह्मणका ५ वर्षमें, क्षत्रियका ६ में, वैश्यका ८ में काम्यसंज्ञक मुख्य काल है,तथा गर्भ वा जन्मसे नित्यसंज्ञक मुख्य काल द्विगुण पयत गौण काल होता है, जैसे ब्राह्मणके १६, क्षत्रियके २२, वैश्यके २४ वर्षपर्यन्त गौणकाल है, इनसे ऊपर अतिकाल है ॥ ३९ ॥ (शार्दू०)

व्रतबन्धमुहूर्तः ।

क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वारौद्रेऽर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने व्रतं सत् ।
द्वित्रीषुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ च कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि न चापराह्णे ॥ ४० ॥

क्षिप्र, ध्रुव. चर, मृदु, आश्लेषा, मूल, तीनों पूर्वा, आर्द्रा नक्षत्रोंमें तथा सूर्य बुध गुरु शुक्र चंद्र वारोंमें, २ । ३ । ५ । ११ । १२ । १० तिथियोंमें तथा कृष्णपक्षके पूर्व त्रिभागमें व्रतबंध शुभ होता है, परंतु अपराह्णमें नहीं, महीनोंमें उत्तरायणके छः महीने उक्त हैं. इसमें भी चैत्रका तो बडा ही माहात्म्य है ॥ ४० ॥ (वसं०)

कवीज्यचन्द्रलग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमाः ।
व्ययेऽब्जभार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः ॥ ४१ ॥

व्रतबंधकी लग्नशुद्धि--शुक्र, बृहस्पति, चंद्रमा और लग्नेश छठे आठवें स्थानोंमें अधम होते हैं, चंद्रमा, शुक्र बारहवें स्थानमें ऐसे ही फल देते हैं तथा लग्न पंचम अष्टम भावमें पापग्रह भी अधम हैं ॥ ४१ ॥ (प्रमाणिका)

व्रतबन्धेऽष्टषड्रिःफवर्जिताः शोभनाः शुभाः ।
त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थो विधुस्तनौ ॥ ४२ ॥

व्रतबंधमें शुभग्रह–८ । ६ । १२ स्थानोंमें अशुभ, अन्योंमें शुभ तथा ३ । ६ । ११ स्थानोंमें पापग्रह शुभ और वृष २ कर्क ४ राशियोंका चंद्रमा यदि पूर्ण हो तो लग्नमें शुभ होता है ॥ ४२ ॥ (अनु०)

वर्णाधीशाः शाखेशाश्च ।

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ राजन्यानामोषधीशो विशाञ्च ।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्याच्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः ॥४३॥

ब्राह्मणोंके स्वामी शुक्र, बृहस्पति, क्षत्रियोंके मंगल सूर्य, वैश्योंका चंद्रमा, शूद्रोंका बुध, चांडालोंका शनि स्वामी है. तथा ऋग्वेदका बृहस्पति, यजुर्वेदका शुक्र, सामवेदका मंगल, अथर्वका बुध शाखेश हैं ॥ ४३ ॥ (शालिनी०)

शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं सत् ।
जीवे भृगौ रिपुगृहे विजिते च नीचे स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितो व्रतेन॥४४॥

व्रतबंधमें शाखेश (वेदेश) का वार तथा लग्न और (गोचरोक्त) बल भी अतिउत्तम होता है. तथा शाखेश, सूर्य, चंद्रमा, बृहस्पतिका बल व्रतबंधमें मुख्य है, इनके शुभ होनेमें शुभ, अशुभमें अशुभ होता है । यदि बृहस्पति शुक्र शत्रुराशि नीच राशिमें हो तथा (विजित) ग्रहयुद्धमें पराजित हों तो व्रतबंधवाला वेद, शास्त्र और नित्य नैमित्तिक श्रौत स्मार्त कर्मोंसे रहित होवे, उपलक्षणसे इनके नीचांशकादिकोंका भी यही फल है ॥ ४४ ॥ (वसं०)

जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिको व्रती ।
आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनामनादिमे ॥ ४५ ॥

व्रतबंधमें जन्मनक्षत्र जन्ममास जन्मलग्नादिकोंका दोष ब्राह्मणके आद्यगर्भ तथा द्वितीयादि गर्भको और क्षत्रिय वैश्यके द्वितीयादि गर्भको नहीं है, केवल क्षत्रियादिकोंको आद्यगर्भमात्रको दोष है. द्वितीयादिकोंको किसीको भी दोष नहीं ॥ ४५ ॥ (अनु०)

गुरुबलविचारः ।

बटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः ।
श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजयान्यत्र निन्दितः ॥ ४६ ॥

बालकके व्रतबंधमें, कन्याके विवाहमें जन्मराशिसे ५ । ९ । ११ । २ । ७ स्थानमें गोचरसे बृहस्पति श्रेष्ठ होता है, १० । ६ । ३ । १ में (पूजा) शांति करके लेना, अन्य ४ । ८ । १२ में निंदित है ॥ ४६ ॥ (अनु०)

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे व स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः ।
रिःफाष्टतुर्यगोऽपीष्टो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसत् ॥ ४७ ॥

बृहस्पति अपने उच्च ४ स्वभवन ९ । १२ स्वमैत्र १ । ८ स्वांश ९ । १२ के और वर्गोत्तमांशमें अथवा इन उच्चादि अंशकोंमें हो तो गोचरसे ४ । ८ १२ में भी हो तो भी दोष नहीं और नीच १० और शत्रुराशि नवांशकोंमें गोचरका शुभ भी अशुभ होता है ॥४७॥

व्रतबन्धे वर्ज्याणि ।

कृष्णप्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके ।
प्राक्सन्ध्यागर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलग्रहे ॥ ४८ ॥

कृष्णपक्ष (प्रथम त्रिभाग) प्रतिपदा से पंचमीपर्यन्त छोडके व्रतबंधमें आरोग्य हैं, शुक्ल द्वितीयासे समस्त शुक्लपक्ष तथा कृष्णपंचमीपर्यन्त उक्त है, और जिस दिन प्रदोष हो, अनध्याय शनिवार रात्रिमें (अपराह्ण) दिनके पिछले त्रिभागमें (प्राक्सन्ध्या) पूर्वोक्त लक्षणसे पहिली सन्ध्याके मेघगर्जनमें तथा (गलग्रह) ४ । ७ । ८ । ९ । १३ । १४ । १५ ।१ तिथियोंमें व्रतबन्ध न करना ॥ ४८ ॥ (अनु०)

तत्र रव्याद्यंशफलम् ।

क्रूरो जडो भवेत्पापः पटुः षट्कर्मकृद्वटुः ॥
यज्ञार्थभाक्तथा मूर्खो रव्याद्यंशे तनौ क्रमात् ॥ ४९ ॥

व्रतबन्धके लग्नमें सूर्यका नवांश हो तो बटु क्रूरबुद्धि एवं चन्द्रमाके मूर्ख, मंगलके पापी, बुधके चतुर, बृहस्पतिके (षट्कर्मा) यजन १ याजन २ दान ३ प्रतिग्रह ४ अध्ययन ५ अध्यापन ६ करनेवाला, शुक्रके अंशमें यज्ञ करनेवाला, धनवान्, शनिके अंशमें मूर्ख होवे ॥ ४९ ॥ (अनु०)

विद्यानिरतः शुभराशिलवे पापांशगते हि दरिद्रतरः ।
चन्द्रे स्वलवे बहुदुःखयुतः कर्णादितिभे धनवान्स्वलवे ॥ ५० ॥

व्रतबन्धमें चन्द्रमा शुभराशियोंकेअंशकमें हो तो व्रतबन्धवाला विद्यामें तत्पर रहे, पापग्रह राशियोंके अंशकमें हो तो अतिदरिद्र होवे, यदि कर्कांशकमें हो तो बहुत दुःखोंसे युक्त होवै, परन्तु श्रवण एवं पुनर्वसु नक्षत्रमें स्वांशक धनवान् करता है ॥ ५० ॥ (मोटनक)

राजसेवी वैश्यवृत्तिः शस्त्रवृत्तिश्च पाठकः ।
प्राज्ञोऽथवान्म्लेच्छसेवी केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः ॥ ५१ ॥

केन्द्रमें सूर्य हो तो राजाकी सेवा करनेवाला, चन्द्रमा हो तो (वैश्यवृत्ति) दुकानदार, एवं मंगल० शस्त्रवृत्ति, बुध० पढानेवाला, बृह० (प्राज्ञ) ज्ञानी, शुक्र० धनवान्, शनि० म्लेच्छोंकी सेवा करनेवाला होवे ॥ ५१ ॥ (अनु०)

शुक्रे जीवे तथा चन्द्रे सूर्यभौमार्किसंयुते ।
निर्गुणः क्रूरचेष्टः स्यान्निघृणः सद्युते पटुः ॥ ५२ ॥

शुक्र अथवा बृहस्पति वा चन्द्रमा सूर्य युक्त हो तो व्रती गुणरहित होवे, मङ्गल युक्त हो तो क्रूरचेष्टा और शनियुक्त हो तो हिंसक , शुभयुक्तसे चतुर होवे ॥ ५२ ॥ (अनु०)

विधौ सितांशगे सिते त्रिकोणगे गुरौ तनौ ।
समस्तवेदविद्व्रती यमांशगेऽतिनिर्घृणः ॥ ५३ ॥

यदि चन्द्रमा शुक्रके २ ।७ अंशकमें त्रिकोण (९ । ५) भावमें हो तथा बृहस्पति लग्नमें हो तो व्रती समस्त वेदका जाननेवाला होवे, यदि लग्नके बृहस्पति लग्नमें हो तो व्रती समस्त वेदका जाननेवाला होवे, यदि लग्नके बृहस्पतिमें चन्द्रमा शनिके अंशमें हो तो अतीव निर्लज्ज होवे ॥ ५३ ॥ (प्रमाणिका)

अनध्यायाः ।

शुचिशुक्रपौषतपसां दिगश्विरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः ।
भूतादित्रितयाष्टमी संक्रमणं च व्रतेष्वनध्यायाः ॥ ५४ ॥

अनध्याय–नित्य नैमित्तक दो प्रकारके हैं, आषाढ शुक्ल दशमी ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया पौषशुक्ल एकादशी मन्वादि, माघशुक्ल द्वादशी इतने सोपपद होनेसे अनध्याय हैं, तथा चतुर्दशी पूर्णमासी प्रतिपदा, कृष्णपक्षमें अमा अष्टमी एवं सूर्यका निरयन संक्रांतिदिन और मन्वादि युगादि इतने व्रतबन्धमें अनध्यायत्वसे वर्जित हैं और अनध्याय पूर्व कहे हैं ॥ ५४ ॥ (जघनचपला)

अर्कतर्कत्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमः ।
रात्र्यर्धसार्द्धप्रहरयाममध्यस्थितैः क्रमात् ॥ ५५ ॥

द्वादशीके दिन अर्द्धरात्रिसे पूर्व; त्रयोदशी. षष्ठीके दिन डेढप्रहरसे पूर्व, सप्तमी तथा तृतीयाके दिन एक प्रहरसे पूर्व चतुर्थी प्रवृत्त हो तो उस दिन प्रदोष जानना सो व्रतबन्धमें नेष्ट है ॥ ५५ ॥ (अनु०)

प्राग्ब्रह्मौदनपाकाद्व्रतबन्धानन्तरं यदि चेत् ।
उत्पातानध्ययनोत्पत्तावपि शान्तिपूर्वकं तत्स्यात् ॥ ५६ ॥

व्रतबन्धके दिन बह्वृचोंका ब्रह्मौदनसंस्कार होता है, व्रतबन्धसे ऊपर ब्रह्मौदनसे पूर्व यदि मेघगर्जन, भूकंप, उल्का, दिग्दाहादि उत्पात, अनध्याय हो तो शास्त्रोक्त शांति करनी, बह्वृचोंसे अन्योंका उपनयनांग ब्राह्मणभोजन तथा वेदारंभांग ब्राह्मण-भोजनपर्यन्त मानते हैं, (शांति) स्वस्तिवाचन पायसहोम गायत्री तथा बृहस्पतिसूक्त जप, गोदान, ब्राह्मणभोजन है ॥ ५६ ॥ (आर्या)

वेदक्रमाच्छशिशिवाहिकरत्रिमूलपूर्वासु पौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये ।
श्रौवेषु चाश्विवसुपुष्यकरोत्तरेशकर्णे मृगान्त्यलघुमैत्रधनादितौ सत् ॥ ५७ ॥

वेदक्रमसे व्रतबन्ध नक्षत्र--मृगशिर आर्द्रा आश्लेषा हस्त चित्रा स्वाती मूल तीनों पूर्वा ऋग्वेदियोंको; रेवती, हस्त, अनुराधा, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य यजुर्वेदियोंको; अश्विनी, धनिष्ठा, पुष्य, हस्त, उत्तरा, आर्द्रा, श्रवण सामवेदियोंको; मृगशिर, पुष्य अश्विनी, हस्त, अनुराधा, पुनर्वसु अथर्ववेदियोंको उपनयनमें विहित हैं ॥ ५७ ॥ (व० वि०)

वेदपरत्व नक्षत्रम् ।

ऋग्वेद.	यजुर्वेद.	सामवेद.	अथर्ववेद.
मृ.	रे.	अश्वि.	मृ.
आ.	ह.	ध.	रे.
आश्ले.	अनू.	पुष्य	ह.
ह.	मृ.	ह.	अश्वि.
चि.	पु.	उ. ३	पुष्य
स्वा.	पु.	आ.	अनू.
मू.	उ. ३	श्र.	ध.
पू. ३	रो.	०	पुन.

नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे नहि ।
शान्त्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्योऽन्यथा न सत् ॥ ५८ ॥

नांदीश्राद्धसे ऊपर यदि कार्यवालेकी माता रजस्वला हो जाय तो चूडा, व्रतबन्ध, विवाह अन्य लग्नमें करना । यदि और लग्न न मिले तो शांति करके निश्चित लग्नमें करना; (शांति) सुवर्णप्रतिमामें लक्ष्मीका पूजन, श्रीसूक्तपाठ प्रत्यृचा पायसहोम और अभिषेक करना ॥ ५८ ॥ (अनु०)

छुरिकाबन्धनमुहूर्तः ।

विचैत्रव्रतमासादौ विभौमास्ते विभूमिजे ।
छुरिकाबन्धनं शस्तं नृपाणां प्राग्विवाहतः ॥ ५९ ॥

क्षत्रियोंका व्रतबन्धसे ऊपर विवाहके भीतर छुरिकाबन्धन करते हैं, यह चैत्र छोडकर व्रतबन्धोक्त मासादिमें होता है, परन्तु इतना विशेष है कि, मंगल अस्त न हो तथा मंगलवार न हो, यह तलवार बांधनेका मुहूर्त है ॥ ५९ ॥ (अनु०)

केशान्तसमावर्तनमुहूर्तः ।

केशान्तं षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभम् ।
व्रतोक्तदिवसादौ हि समावर्त्तनमिष्यते ॥ ६० ॥

इतिश्री रामदैवज्ञविरचिते मुहूर्तचिन्तामणौ पञ्चमं संस्कारप्रकरणम् ॥ ५ ॥

ब्राह्मणका १६ क्षत्रिय वैश्यका २२ वर्षमें चूडाकर्मोक्त मुहूर्तमें केशांत कर्म करना, १३ वर्षमें महानाम्नी व्रत, १४ में महाव्रत, १५ में उपनिषद्व्रत, १६ में केशांत तथा गोदान व्रतसंस्कार होते हैं, इन सभोंमें चौलोक्त मुहूर्त हैं और वेद तथा विद्या पढके गोदानांत संस्कार करके व्रतबन्धादि उक्त मुहूर्तमें समावर्त्तन संस्कार करना ॥ ६० ॥

इति श्रीदैवज्ञानन्तसुतरामविरचिते मुहूर्तचिन्तामणौ महीधरकृतायां माहीधर्य्यां भाषाटीकायां पञ्चमं संस्कारप्रकरणम् ॥ ५ ॥

अथ विवाहप्रकरणम् ६।

समावर्त्तनानन्तर स्वकुलोद्धारकपुत्रप्राप्त्यर्थ विवाह करना कहा है, यह ८ प्रकारका है, वरको आप बुलायके उसकी कुछ हानि न करके जो कन्या यथाशक्ति अलंकारयुक्त दी जाती है, यह ब्राह्मविवाह है, इसका पुत्र पूर्वापर २१ पुरुषोंका उद्धार करता है. (१), जो यज्ञ करके दक्षिणामें दी जाती है वह दैव है. इसकी सन्तान पूर्वके १४ पश्चात्के ६ पुरुषोंको पवित्र करती है (२), धर्मसहायार्थ जो वरके (याच्ञा करने) मांगनेसे दी जाती है वह प्राजापत्य है, इसका पुत्र पूर्वापर ६ । ७ पुरुषोंको पवित्र करता है (३), जो १ गौ १ वृषभ अथवा गौ यज्ञके लिये अथवा कन्याहीके लिये वरसे लेकर कन्या दी जाती है. परंतु (शुल्क) मूल्यबुद्धिसे न हो तो वह आर्षसंज्ञक है, यह भी दैवके तुल्य है (४), कन्याके पित्रादिकोंको धन देके अथवा कन्याको धनादिसे सन्तुष्ट करके जो विवाह है वह आसुर है (५), प्रथम ही कन्यावरके प्रेम आलिंगनादि हुएमें उनके इच्छानुकूल विवाह होनेमें गांधर्व है (६), संग्राममें जीतके वा बलात्कारसे कन्या हरण करना राक्षस विवाह है (७), अथवा नशा आदिसे बेहोशीमें जो बलात्कारसे कन्याका धर्षण करता है वह अधम, पैशाच विवाह है (८), इनमें प्राजापत्य, ब्राह्म, दैव, आर्ष विवाह उक्त समयपर शुभ फल देते हैं, इनसे जो सन्तान हो वह दैव पित्र्य कर्ममें पवित्र तथा धर्मात्मा ज्ञानी आस्तिक आदि गुणवान् होती है, आर्षविवाह भी विकल्पसे ऐसा ही है, आसुर, गांधर्व, राक्षस, पैशाच कनिष्ठ हैं, इनके सन्तान अधर्मी, पाखंडी, दूषक, नास्तिक आदि होते हैं (संग्राममें कन्याहरण) राक्षस तथा गान्धर्वका अंग स्वयंवर, ये राजाओंके धर्म हैं, अन्यके नहीं, द्रव्य देके जो विवाह (आसुर) होता है वह अतीव निंद्य है, इसको देवपितृकर्मोपयोगी धर्मपत्नी धर्मशास्त्र नहीं कहता, दासीकी गणनामें है, इसकी सन्तान भी शुद्ध नहीं होती, इसके आदि ४ विवाहोंमें कालनियम भी नहीं, जब चाहे तब विवाह करे " विवाहः सार्वकालिकः " यह गृह्यकारवचन भी गांधर्वादि विवाहोंके लिये है ॥

अथ विवाहप्रयोजनम्।

भार्या त्रिवर्गकरणं शुभशीलयुक्ता शीलं शुभं भवति लग्नवशेन तस्याः।
तस्माद्विवाहसमयः परिचिन्त्यते हि तन्निघ्नतामुपगताःसुतशीलधर्माः॥ १ ॥

(शुभशीलयुक्त) भर्त्रादिकोंको अनुकूल जो भार्या है वह धर्मार्थकाम त्रिवर्गके साधन योग्य है, उसका शील लग्नके आधीन है, वह लग्न विवाहसमयके अधीन है, स्त्रियोंका विवाह और पुरुषोंका उपनयन दूसरा जन्म है तस्मात् इन समयोंमें जैसा लग्न हो उसके सदृश संतान, स्वभाव और धर्म होते हैं। देव पित्र्य ऋषि ३ ऋण गृहस्थपर रहते हैं इनका

उद्धार करनेवाली शुभसंतान होती है, यह संतान शुभलक्षण स्त्रीके अधीन हैं, उसके शुभगुणवती होनेके हेतु विवाहमुहूर्त कहते हैं ॥ १ ॥ (व. ति.)

प्रश्नलग्नाद्विवाहयोगज्ञानम् ।

आदौ संपूज्य रत्नादिभिरथ गणकं वेदय स्वस्थचित्तं
कन्योद्वाहं दिगीशानलहयविशिखे प्रश्नलग्नाद्यदीन्दुः ।
दृष्टो जीवेन सद्यः परिणयनकरो गोतुलाकर्कटाख्यं
वा स्यात्प्रश्नस्य लग्नं शुभखचरयुतालोकितं तद्विदध्यात् ॥ २ ॥

यहां अथ शब्द ग्रंथमध्य होनेसे मंगलार्थ है, प्रथम प्रश्न पूछनेके लिये स्वस्थचित्त ज्योतिषीको सुवर्ण वस्त्र फलादिकोंसे सुपूजित करके कन्याके विवाहके लिये पूछे । प्रश्नयोग कहते हैं कि, प्रश्नलग्नसे यदि १० । ११ । ३ । ७ । ५ स्थानमें चन्द्रमा गुरुदृष्ट हो तो शीघ्र विवाह होगा, तथा वृष, तुला, कर्क लग्न प्रश्नमें हो उसे शुभग्रह देखें वा शुभयुक्त हो तो विवाह शीघ्र होवे ॥ २ ॥ (स्रग्धरा)

विषममांशगतौ शशिभार्गवौ तनुगृहं बलिनौ यदि पश्यतः ।
रचयतो वरलाभमिमौ यदा युगलभांशगतौ युवतिप्रदौ ॥ ३ ॥

प्रश्नमें चन्द्रमा शुक्र यदि विषमराशि विषमनवांशकमें हों बली हों तथा लग्नको देखें तो कन्याको वर मिले तथा वही चन्द्रमा शुक्र युग्मराशिके नवांशकमें हों तो वरको कन्या मिले, ये दोनों विवाहयोग एक ही प्रयोजनके हैं ॥ ३ ॥ (द्रुतवि.)

प्रश्नलग्नाद्वैधव्यादियोगज्ञानम् ।

षष्ठाष्टस्थः प्रश्नलग्नाद्यदीन्दुर्लग्ने क्रूरः सप्तमे वा कुजः स्यात् ।
मूर्त्ताविंदुः सप्तमे तस्य भौमो रण्डा सा स्यादष्टसंवत्सरेण ॥ ४ ॥

यदि प्रश्नलग्नसे चन्द्रमा छठा अठवां हो तो वह कन्या आठ वर्षमें विधवा हो (आप भी मरे) १, तथा लग्नमें पापग्रह, सप्तममें मंगल हो तो वही फल २, और लग्नमें चन्द्रमा सप्तममें मंगल हो तो भी वही फल है ३, ये वैधव्ययोग है ॥ ४ ॥ (उ.)

प्रश्नतनोर्यदि पापनभोगः पञ्चमगो रिपुदृष्टशरीरः ।
नीचगतश्च तदा खलु कन्या स्यात्कुलटा त्वथवा मृतवत्सा ॥ ५ ॥

प्रश्नलग्नमें पंचम पापग्रह शत्रुग्रहसे दृष्ट, तथा नीचराशिगत हो तो व्यभिचारिणी (वेश्या) अथवा (मृतवत्सा) मरे पुत्रवाली होवे ॥ ५ ॥ (दोधक)

यदि भवति सितातिरिक्तपक्षे तनुगृहतः समराशिगः शशाङ्कः ।
अशुभखचरवीक्षितोऽरिरन्ध्रे भवति विवाहविनाशकारकोऽयम् ॥ ६ ॥

यदि कृष्णपक्षका चन्द्रमा प्रश्नलग्नसे २ । ४ आदि राशियोंका ६ । ८ भावमें पापदृष्ट हो तो (विवाहका विनाश हो) वह विवाह न होने पावे ॥ ६ ॥ (पुष्पि०)

बालवैधव्ययोगपरिहारः ।

जन्मोत्थं च विलोक्य बालविधवायोगं विधाय व्रतं
सावित्र्या.उत पैप्पलं हि सुतया दद्यादिमां वा रहः ।
सल्लग्नेऽच्युतमूर्तिपिप्पलघटैः कृत्वा विवाहं स्फुटं
दद्यात्तां चिरजीविनेऽत्र न भवेद्दोषः पुनर्भूभवः ॥ ७ ॥

यदि जन्मके बालवैधव्यकारक जातकोक्तादि योग कन्याके देखे जावें तो उसके पित्रादि (रहः) एकांतमें निश्चयतासे सावित्रीव्रत करावे तथा पिप्पलसंबन्धी व्रत करावे अथवा शुभ-लग्न विवाहोक्त सद्गुणसौभाग्यकारक योगोंमें विष्णुप्रतिमा अश्वत्थ और घटके साथ विवाह-विधिसे विवाह करके यह कन्या चिरजीवीवर (जिसके दीर्घायु योग हो) को देना, यह उपाय करनेमें वैधव्यदोष नहीं होता और (पूनर्भू) दो वरोंके साथ विवाहका दोष भी नहीं होता ॥ ७ ॥ (शार्दू०)

पुत्रकन्या प्रश्नविचारः ।

प्रश्नलग्नक्षणे यादृशापत्ययुक्स्वेच्छया कामिनी तत्र चेदाव्रजेत् ।
कन्यका वा सुतो वा तदा पण्डितैस्तादृशापत्यमस्या विनिर्दिश्यते ॥ ८ ॥

प्रश्नसमयमें ज्योतिषीके समीप जैसी स्त्री आवे वैसा उत्तर प्रश्नका कहना, जैसे कोई स्त्री पुत्र लेके आवे तो विवाहवाली कन्याके पुत्र होंगे, कन्या लेके आवे तो कन्या होगी, दोनों हों तो कन्या पुत्र सभी होंगे, उपलक्षणसे उस स्त्रीके जैसे लक्षण सुभगा दुर्भगा पुत्रवती बांझ आदि हों वैसे ही कन्याके कहना ८ ॥(स्रग्वि०)

शङ्खभेरीविपञ्चीरवैर्मङ्गलं जायते वैपरीत्यं तदा लक्षयेत् ।
वायसो वा खरः श्वा शृगालोऽपि वा प्रश्नलग्नक्षणे रौति नादं यदि ॥ ९ ॥

प्रश्नसमयमें शकुन-- शंखभेरी तुरी वीणा आदि शुभ वाद्य सुननेमें देखनेमें आवे तो मङ्गल होगा । ऐसे ही हाथी घोड़े छत्र आदि तथा जिन वस्तुओंके देखनेसे चित्त प्रसन्न हो ऐसे मंगलकारी होते हैं. (वायस) कौवा, गदहा, कुत्ता, स्यार यदि उस समय शब्द करें तो अमंगल जानना, उल्लू भैंसे भी ऐसे ही हैं ॥ ९ ॥ स्रग्वि०)

कन्यावरणमुहूर्तः ।

विश्वस्वातीवैष्णवपूर्वात्रयमैत्रैर्वस्वाग्नेयैर्वा करपीडोचितऋक्षैः ।
वस्त्रालङ्कारादिसमेतैःफलपुष्पैःसन्तोष्यादौ स्यादनु कन्यावरणं हि॥ १० ॥

कन्यावरणमुहूर्त--उत्तराषाढा, स्वाती, श्रवण, तीनों पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा, कृत्तिकामें तथा विवाहोक्त नक्षत्रादिकोंमें वस्त्र, भूषण आदि वस्तुसहित फलपुष्पोंसे विधिपूर्वक कन्यावरण (सगाई) करना ॥ १० ॥ (मत्तम०)

वरवरणमुहूर्तः ।

धरणिदेवोऽथवा कन्यकासोदरः शुभदिने गीतवाद्यादिभिः संयुतः ।
वरवृतिं वस्त्रयज्ञोपवीतादिना ध्रुवयुतैर्वह्निपूर्वात्रयैराचरेत् ॥ ११ ॥

(ब्राह्मण) पुरोहित अथवा कन्याका सहोदरभाई शुभवारादि दिनमें तथा ध्रुवनक्षत्रों सहित कृत्तिका, तीनों पूर्वाओंमें गीत वाद्यादि मंगल पूर्वक वस्त्र भूषण यज्ञोपवीतादिकोंसे वरका वरण (वाग्दान) करे ॥ ११ ॥ (मत्त०)

वधूवरयोः ग्रहशुद्धिः ।

गुरुशुद्धिवशेन कन्यकानां समवर्षेषु षडब्दकोपरिष्टात् ।
रविशुद्धिवशाच्छुभो वराणामुभयोश्चन्द्रविशुद्धितो विवाहः ॥ १२ ॥

कन्याकी गुरुशुद्धि (पूर्वोक्त) वरकी सूर्यशुद्धि तथा दोनोंकी चन्द्रशुद्धिमें कन्याकी अवस्था छः वर्ष ऊपर समवर्षमें, वरके विषम वर्षोंमें विवाह शुभ होता है, यहां आचार्यांतर मत है कि, जन्मसे विषमवर्षके तीन महीने ऊपर ९ महीने तथा समके तीन महीने पर्यंत विवाह शुभ होता है ॥ १२ ॥ (व० मा०)

विवाहयोग्यमासाः ।

मिथुनकुम्भवृषालिमृगाजगे मिथुनगेऽपि रवौ त्रिलवे शुचेः ।
अलिमृगाजगते करपीडनं भवति कार्तिकपौषमधुष्वपि ॥ १३ ॥

मिथुन, कुंभ, वृष, वृश्चिक, मकर, मेष राशियोंके सूर्यमें विवाह शुभ होता है, इनमें आषाढके (त्रिलव) शुक्लप्रतिपदासे दशमीपर्यंत मात्र शुभ है (हरिशयनी) एकादशीसे योग्य नहीं तथा वृश्चिकके सूर्यमें कार्तिक, मकरके सूर्यमें पौष, मेषके सूर्यमें चैत्र भी विवाहमें लेते हैं ॥ १३ ॥ (द्रुतवि०)

जन्ममासादिनिषेधः ।

आद्यगर्भसुतकन्ययोर्द्वयोर्जन्ममासभतिथौ करग्रहः ।
नोचितोऽथ विबुधैः प्रशस्यते चेद्द्वितीयजनुषोः सुतप्रदः ॥ १४ ॥

जन्ममास (जन्मतिथिसे ३० दिन) जन्मनक्षत्र जन्मतिथिमें आद्यगर्भके पुत्र कन्याका विवाह उचित नहीं है द्वितीयादि गर्भवालोंके पुत्र देनेवाले जन्ममासादि विवाहमें होते हैं ॥ १४ ॥ (रथोद्धता)

ज्येष्ठमासविचारः।

ज्येष्ठद्वन्द्वं मध्यमं संप्रदिष्टं त्रिज्येष्ठं चेन्नैव युक्तं कदापि।
केचित्सूर्यं वह्निगं प्रोह्य चाहुर्नैवान्योन्यं ज्येष्ठयोः स्याद्विवाहः ॥ १५ ॥

ज्येष्ठपुत्र ज्येष्ठ मास अथवा ज्येष्ठ कन्या ज्येष्ठ मास यह ज्येष्ठ द्वंद्व मध्यम होता है, ज्येष्ठ पुत्र ज्येष्ठ कन्या और ज्येष्ठ मास विवाहमें यह त्रिज्येष्ठ कदापि योग्य नहीं है. कोई कृत्तिकाके सूर्यपर्यन्त त्रिज्येष्ठ वा द्वंद्वका दोष नहीं ऐसा कहते हैं, और आद्यगर्भके कन्या पुत्रका परस्पर विवाह नहीं होता ॥ १५ ॥ (शालिनी)

मण्डनमुण्डनविचारः।

सुतपरिणयात्षण्मासान्तः सुताकरपीडनं न च निजकुले तद्वद्वा मण्डनादपि मुण्डनम् । न च सहजयोर्देये भ्रात्रोः सहोदरकन्यके न सहजसुतोद्वाहोऽब्दार्धे शुभे न पितृक्रिया ॥ १६ ॥

पुत्रविवाहसे छः महीने पर्यंत कन्याका विवाह न करना. तथा (मण्डन)विवाहसे (मुण्डन) चौल उपनयन और महानाम्न्यादि ४ व्रत छः महीनेपर्यन्त न करनें, यदि बीचमें संवत्सर बदल जावे, जैसे–फाल्गुनमें मङ्गल अथवा पुत्रोद्वाह हुआ तो वैशाखमें मुण्डन अथवा कन्योद्वाह हो सकता है, यह नियम (निजकुल) तीन पुरुष सापिंड्यपर्यन्तका है, तथा मङ्गलसे ६ महीने पर्यन्त (पितृक्रिया) श्राद्धादि न करनी और सहोदर भाइयोंको सहोदरकन्या न देनी, तथा सहोदरोंका विवाह भी ६ महीनेके भीतर एकसे दूसरा न करना, कन्याके विवाहसे ४ दिन पीछे पुत्रका विवाह हो सकता है परन्तु एकोदरप्रसूत कन्या पुत्र वा पुत्र पुत्र वा कन्या कन्याका छः महीने पर्यन्त नहीं होता ॥ १६ ॥ (ह० ति०)

विवाहानन्तरं त्रिपुरुषं चूडादिनिषेधः।

वध्वा वरस्यापि कुले त्रिपूरुषे नाशं व्रजेत्कश्चन निश्चयोत्तरम्।
मासोत्तरं तत्र विवाह इष्यते शान्त्याथवा सूतकनिर्गमे परैः ॥ १७ ॥

यदि विवाहमुहूर्त निश्चय (टिप्पणा) हुएमें वर वा कन्याके (त्रिपुरुष) सापिंड्य तीन पुरुषके भीतर कोई मर जावे तो एक महीने उपर शांति करके विवाह करे

कोई आचार्य कहते हैं कि, सूतकोत्तर शांति करके कर लेना, परन्तु यह विषय तीन पुरुषवालोंका, माता पिताका नहीं जैसे–पिताका अशौच १ वर्ष, माताका ६ महीने स्त्रीका ३ महीने, भ्रातृपुत्रादिकोंका १ महीना होता हैं, यही हेतु है, इसमें और विशेषता है कि दुर्भिक्षमें, राज्यभ्रंशमें, पिताके प्राणसंकटमें तथा (प्रौढ)अतिकालकी कन्याके विवाहमें किसी प्रकारकी प्रतिकूलता नहीं है ॥ १७ ॥ (इन्द्र०)

चूडा व्रतं चापि विवाहतो व्रताच्चूडा च नेष्टा पुरुषत्रयान्तरे ।
वधूप्रवेशाच्च सुताविनिर्गमः षण्मासतो नाब्दविभेदतः शुभः ॥ १८ ॥

तीन पुरुषके भीतरवालोंके विवाहसे ऊपर छः महीनेपर्यन्त वा संवत्सर बदलने पर्यन्त चूडाकर्म व्रतबन्ध तथा अपिशब्दसे महानाम्न्यादि ४ व्रत भी न करने, तथा वधूके प्रवेशसे उतने ही समयपर्यन्त कन्याका (निर्गम) घरसे बाहर देना न करना(त्रिपुरुषी) मूलपुरुषसे तीन पुरुष, पर्यन्त होता है, चौथे पुरुषको दोष नहीं ॥ १८ ॥ (उ० जा०)

मूलाश्लेषाविचारः ।

श्वश्रूविनाशमहिजौ सुतरां विधत्तः कन्यासुतौ निर्ऋतिजौ श्वशुरं हतश्च ।
ज्येष्ठाभजाततनया स्वधवाग्रजं च शक्राग्निजा भवति देवरनाशकर्त्री ॥१९ ॥

आश्लेषाके उत्पन्न कन्या पुत्र साक्षात् सासका नाश करते हैं, नतु सौतिया सासको, तथा मूलके जन्मवाले श्वशुरका नाश करते हैं, तथा ज्येष्ठामें जन्मवाली कन्या अपने पतिके सहोदर जेठे भाई (ज्येष्ठ) को, ऐसे ही विशाखाके जन्मवाली देवर भर्त्ताके सहोदर छोटे भाईका नाश करती हैं ग्रन्थांतरवाक्य ऐसे भी हैं कि, ज्येष्ठावाला पुरुष कन्याके ज्येष्ठ भाईका और विशाखावाला छोटे भाई (शाले) का नाश करता है" पत्न्यग्रजामग्रजं वा हन्ति ज्येष्ठर्क्षजः पुमान् । तथा भार्यास्वसारं वा शालकं वा द्विदैवजः " ॥ इति । यहां ज्येष्ठ कनिष्ठ भाइयोंके स्थानमें बहिन भी कही है,उक्तसे प्रथम वा पीछेके गर्भवाला कन्या वा पुत्र जो हो;यह भावार्थ है ॥ १९ ॥ (व० ति०)

द्वीशाद्यपादत्रयजा कन्या देवरसौख्यदा ।
मूलान्त्यपादसर्पाद्यपादजातौ तयोः शुभौ ॥ २० ॥

पूर्वोक्त दोषोंमें विशेष विचार है कि,विशाखाके प्रथम तीन चरणवाली कन्या देवरको दोष नहीं करती प्रत्युत सुख देनेवाली होती है, केवल चतुर्थचरण निषिद्ध है, ऐसे ही मूलका चतुर्थचरणोत्पन्न वर तथा कन्या श्वशुरको, आश्लेषा प्रथमचरणोत्पन्न सासको शुभ होता है ॥ २० ॥ (अनु०)

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम् ।
गणमैत्रं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः ॥ २१ ॥

विवाहका मेलक विचार कहते हैं कि, वर्णमैत्री हो तो (१) गुण, वश्यमें (२), तारामें (३), योनिमें (४), ग्रहमैत्रीमें (५), गणमैत्रीमें (६), भकूटमैत्रीमें (७), नाडीमें गुण (८) इन सबका योग (३६) गुण होते हैं, अधिकमें मेलक शुभ हीनमें क्रमशः अशुभ होता है, इन प्रत्येकका विचार आगे कहते हैं ॥ २१ ॥ (अनु०)

द्विजा झषालिकर्कटास्ततो नृपा विशोऽङ्घ्रिजाः ।
वरस्य वर्णतोऽधिका वधूर्न शस्यते बुधैः ॥ २२ ॥

वर्ण–मीन, वृश्चिक, कर्कट ब्राह्मण तथा १ । ५ । ९ । क्षत्रिय, २ । ६ । १० वैश्य, ३ । ७ । ११ शूद्रवर्ण हैं, वरसे हीनवर्ण कन्या शुभ, कन्याके वर्णसे हीनवर्ण वर अच्छा नहीं होता, दोनोंका एक वर्ण अतिउत्तम होता है, वर्णाधिक वर होनेमें (१) गुण मिलता है, कन्या अधिकमें नहीं ॥ २२ ॥ (प्रमाणिका)

हित्वा मृगेन्द्रं नरराशिवश्याः सर्वे तथैषां जलजाश्च भक्ष्याः ।
सर्वेऽपि सिंहस्य वशे विनालिं ज्ञेयं नराणां व्यवहारतोऽन्यत् ॥ २३ ॥

वश्यकूट–मनुष्यराशि ३ । ६ । ७ । योंके वशवर्ती सिंह विना सभी राशि हैं, जलचर राशि भी मनुष्योंके भक्ष्य होनेसे इनके वश्य ही हैं तथा सिंहके वश वृश्चिक छोड़के सभी राशि हैं अन्य परस्पर वश्यावश्य मानुष व्यवहारसे जानना; यहां भी वरकी राशिके वश्य कन्याकी राशि होनेमें (२) गुण मिलते हैं, विपरीतमें नहीं ॥ २३ ॥ (इं०व०)

कन्यर्क्षाद्वरभं यावत्कन्याभं वरभादपि ।
गणयेन्नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभमसत्स्मृतम् ॥ २४ ॥

तारा–कन्याके नक्षत्रसे वरके नक्षत्र, वरनक्षत्रसे कन्याके नक्षत्रपर्यंत गिनके जितने हों ९ से भाग ले शेषको तारा जानना, ३ । ५ । ७ शेष रहे तो अशुभ अन्य शुभ होते हैं, शुभसे (३) गुण मिलते हैं ॥ २४ ॥ (अनु०)

अश्विन्यम्बुपयोर्हयो निगदितः स्वात्यर्कयोः कासरः सिंहो वस्वजपा-
द्भयोः समुदितो याम्यान्त्ययोः कुञ्जरः । मेषो देवपुरोहितानलभयोः

कणाम्बुनोर्वानरः स्याद्वैश्वाभिजितोस्तथैव नकुलश्चान्द्राब्जयोन्यो-रहिः ॥ २५ ॥ ज्येष्ठामैत्रभयोः कुरङ्ग उदितो मूलार्द्रयोः श्वा तथा मार्जारोऽदितिसार्पयोरथ मघायोन्योस्तथैवोन्दुरुः । व्याघ्रो द्वीशभचित्रयोरपि च गौरर्यम्णबुध्न्यर्क्षयोर्योनिः पादगयोः परस्परमहावैरं भयोन्योस्त्यजेत् ॥ २६ ॥

योनिकूट–अश्विनी, शततारा की अश्वयोनि । स्वाती, हस्त महिष । धनिष्ठा पूर्वाभाद्रपदा सिंह । भरणी, रेवती हाथी । पुष्य, कृत्तिका मेष (मेढ़ा) । श्रवण, पूर्वाषाढा वानर । उत्तराषाढा, अभिजित् नेवला । रोहिणी, मृगशिर सर्प । ज्येष्ठा अनुराधा हरिण । मूल, आर्द्रा कुत्ता । पुनर्वसु, आश्लेषा बिल्ली । मघा, पूर्वाफा० चूहा । विशाखा, चित्रा व्याघ्र । उत्तराफा०, उत्तराभा० गौयोनि है । एक योनिके वर कन्या उत्तम मित्र; समयोनिके सामान्य और परस्पर योनिवैरमें अशुभ होता है । इनका वैर– गौ व्याघ्रका । गज सिंह । घोड़ा भैंसा । कुत्ता मृग । नेवला सर्प । वानर मेंढा । बिल्ली चूहा इत्यादि लोकव्यवहारमें जानना. योनिमत्री होनेमें (४) गुण मिलते हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥ (शा० वि०)

मित्राणि द्युमणेः कुजेज्यशशिनः शुक्रार्कजौ वैरिणौ सौम्यश्चास्य समो विधोर्बुधरवी मित्रे न चास्य द्विषत् । शेषाश्चास्य समाः कुजस्य सुहृदश्चन्द्रेज्यसूर्या बुधः शत्रुः शुक्रशनी समौ च शशभृत्सूनोः सिताहस्करौ ॥ २७ ॥ मित्रे चास्य रिपुः शशी गुरुशनिक्ष्माजाः समा गीष्पतेर्मित्राण्यर्ककुजेन्दवो बुधसितौ शत्रू समःसूर्यजः। मित्रे सौम्यशनी कवेः शशिरवी शत्रू कुजेज्यौ समौ मित्रे शुक्रबुधौ शनेः शशिरविक्ष्माजा द्विषोऽन्यः समः ॥ २८ ॥

ग्रहकूट–सूर्यके मं० बृ० चं० मित्र, शु० श० शत्रु, बु० सम है । चन्द्रमाके बु० सू० मित्र, अन्य सम; शत्रु कोई नहीं । मंगलके चं० गु० सू० मित्र, बु० शत्रु, शु० श० सम । बुधके शु० सू० मित्र, चं० शत्रु । बृ० श० मं० सम । बृहस्पतिके सू० मं० चं० मित्र, बु० शु० शत्रु, श० सम । शुक्रके बु० श० मित्र, चं० सू० शत्रु, बृ० मं० सम । शनिके शु० बु० मित्र, चं० सू० मं० शत्रु, बु० सम है । वरकन्याके राशीश मित्र तथा एकाधिपत्यके हों तो ५ गुण, एवं सममित्रमें ४; सम सममें ३, मित्र शत्रुमें २, सम शत्रुमें १, शत्रु, शत्रुमें (०) मिलता है शत्रु शत्रुका मेल कहीं नहीं होता, मृत्युषट्काष्टक होता है ॥ २७ ॥ २८ ॥ (शा० वि०)

मित्रामित्रचक्रम् ।

ग्र.	र.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
मित्र.	चं.मं.गु.	र.बु.	गु.चं.र.	र.शु.	र.चं.मं.	बु.श.	बु.शु.
सम.	बु.	मं.गु.शु.श.	शु.श.	मं.गु.श.	श.	मं.गु.	गु.
शत्रु.	शु.श.	०	बु.	चं.	बु.शु.	र.चं.	र.चं.मं.

रक्षोनरामरगणाः क्रमतो मघाहिवस्विन्द्रमूलवरुणानलतक्षराधाः ।
पूर्वोत्तरात्रयविधातृयमेशभानि मैत्रादितीन्दुहरिपौष्णमरुल्लघूनि ॥ २९ ॥

गण—मघा, आश्लेषा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, कृत्तिका, चित्रा, विशाखा राक्षसगण । तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, भरणी, आर्द्रा मनुष्यगण । और अनुराधा, पुनर्वसु, मृगशिर, श्रवण, रेवती, स्वाती, अश्विनी, पुष्य, हस्त देवगण है ॥ २९ ॥ (वसं०)

गणफलम् ।

निजनिजगणमध्ये प्रीतिरत्युत्तमा स्यादमरमनुजयोः सा मध्यमा संप्रदिष्टा ।
असुरमनुजयोश्चेन्मृत्युरेव प्रदिष्टो दनुजविबुधयोःस्याद्वैरमेकान्ततोऽत्र ॥ ३० ॥

वरकन्याका एक ही गण हो तो अत्यन्त प्रीति होती है, देव मनुष्यका मध्यम प्रीति, राक्षस मनुष्यका मृत्यु, देव राक्षसका हो तो कलह होता है । मनुष्य राक्षसमें विशेष यह है कि, वर राक्षस, कन्या मनुष्यगण हो तो वैर होता है, यदि वर मनुष्य कन्या राक्षसगण हो तो वरकी मृत्यु, यह बहुत प्रमाणोंसे पुष्ट है, इस कूटमें गणसाम्यमें ६ गुण, देव मनुष्यमें ५, देव राक्षस एवं मनुष्य राक्षसमें गुण (०) है, कन्या राक्षसी वर देवमें २, कन्या देव वर मनुष्यमें ४ गुण हैं ॥ ३० ॥ (मालि०)

विषमात्कन्यकाराशेः षष्ठे षष्ठाष्टकं न सत् ।
समात्षष्ठं शुभं ज्ञेयं विपरीतं तदष्टमम् ।
मृत्युः षट्काष्टके ज्ञेयोऽपत्यहानिर्नवात्मजे ।
द्विर्द्वादशे निर्धनत्वं द्वयोरन्यत्र सौख्यकृत् ॥ ३१ ॥

विषमराशिसे छठी राशि तथा समसे आठवीं वहीं होती है, यह शत्रुषट्काष्टक है, इनके स्वामी शत्रु होते हैं तथा समराशिसे छठी, विषमसे आठवीं, मित्रषट्काष्टक है, इनके स्वामी मित्र होते हैं, यह शुभ होता है, इससे विपरीत अशुभ है शत्रुषट्काष्टक मृत्यु करता है, यदि वरकन्याकी ५ । ९ एकसे दूसरी पंच नवम राशि हो तो पुत्रहानि, एवं दूसरी बारहवीं हो तो दरिद्रता होती है, अन्य स्थानोंमें शुभ होते हैं ॥ ३१ (अनु०) [यह श्लोक प्रक्षिप्त है]

दुष्टभकूटपरिहारः ।

प्रोक्ते दुष्टभकूटके परिणयस्त्वेकाधिपत्ये शुभो-
ऽथो राशीश्वरसौहृदेऽपि गदितो नाड्यृक्षशुद्धिर्यदि ।
अन्यर्क्षेंऽशपयोर्बलित्वसखिते नाड्यृक्षशुद्धौ तथा
ताराशुद्धिवशेन राशिवशताभावे निरुक्तो बुधैः ॥ ३२ ॥

उक्त प्रकारसे दुष्ट भकूट कहे हुएमें भी परिहार है कि, वरकन्याकी राशियोंका स्वामी एक ही हो, जैसा १ । ८ । का (मंगल) २ । ७ (शुक्र) हो तो विवाह शुभ होता है, तथा राशीशोंकी मैत्रीमें भी शुभ है, यदि नाडीशुद्धि और नक्षत्रशुद्धि हो, यदि उक्त राशीश अंशेशोंकी परस्पर मैत्री हो तथा बलवान् भी हों और नाडीशुद्धि हो तथा ताराशुद्धि हो, एवं राशिवश्यता भी योग्य ही हो तो ग्रहोंके शत्रुभावका दोष नहीं होता , यहां (ग्रहमैत्री) मित्रषट्काष्टक (१) एकाधिपत्य (२) सबलांशेश मैत्री (३) राशिवश्यता (४) ताराशुद्धि, (५) प्रकार षट्काष्टकोंके परिहार हैं,इनमेंसे एकके होनेमें भी षट्काष्टकदोष नहीं होता, परन्तु नाडी सभीमें होनी चाहिये ॥ ३२ ॥ (शालि०)

मैत्र्यां राशिस्वामिनोरंशनाथद्वन्द्वस्यापि स्याद्गणानां न दोषः ॥
खेटारित्वं नाशयेत्सद्भकूटं खेटप्रीतिश्चापि दुष्टं भकूटम् ॥ ३३ ॥

गणकूट भकूट ग्रहकूटोंका परिहार--कन्या वरके राशिसे तथा अंशेशोंकी परस्पर मैत्री हो तो दुष्टगण (राक्षस मनुष्यादि) का दोष नहीं होता, तथा (शुभ राशिकूट) तीसरा ग्यारहवाँ आदि हो तो ग्रहोंकी शत्रुताका दोष नहीं होता, एवं राशीशोंकी प्रीति षट्काष्टकादि दोषोंका नाश करती है ॥३३॥ (शालि०)

नाडीकूटं तदपवादश्च ।

ज्येष्ठा रौद्रार्यमाम्भःपतिभयुगयुगं दास्रभं चैकनाडी
पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या ।

वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगमथो पौष्णभश्चापरा स्याद्-
दम्पत्योरेकनाड्यां परिणयनमसन्मध्यनाड्यां हि मृत्युः ॥ ३४ ॥

ज्येष्ठा, आर्द्रा, उत्तराफाल्गुनी, शततारा इनसे दो दो नक्षत्रोंकी आद्य नाडी। पुष्य, मृगशिर, चित्रा, अनुराधा, भरणी, धनिष्ठा, पूर्वाषाढा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपदाकी मध्य नाडी। स्वाती, कृत्तिका, आश्लेषा, उत्तराषाढा इनमेंसे दो दो नक्षत्रोंकी अंत्य नाडी होती है। वर कन्याका एक नाडीमें विवाह हो तो अशुभ फल होता है, मध्य नाडीमें हो तो दोनोंकी निश्चय करके मृत्यु होती है, मध्यनाडी छोडके पार्श्वनाडियोंका दोष गोदावरीके दक्षिण अथवा क्षत्रिय आदिकोंको नहीं।

किसीका मत है, कि, आद्य नाडी वरको; अंत्य कन्याको, मध्य दोनोंको दोष करती है, इनमें अन्यनाडीको परिहारांतर होनेमें लेते भी हैं "चतुस्त्रिद्व्यङ्घ्रिभोत्थायाः कन्यायाः क्रमशोऽश्विभात् ॥ वह्निभादिन्दुभान्नाडी त्रिचतुः पञ्चपर्वसु ॥१॥" ग्रन्थांतरोंसे त्रिचतुःपंचनाडी कहते हैं– कन्याका नक्षत्र चार चरण एक ही राशिका हो तो पूर्वोक्त त्रिनाडी एवं तीन चरण एकराशिका हो तो चतुर्नाडी, द्विचरणमें पंचनाडी विचारना। त्रिनाडी अश्विनीसे, चतुर्नाडी कृत्तिकासे, पंचनाडी मृगशिरसे गिनते हैं, परन्तु चतुर्नाडी अहल्या देशमें, पंचनाडी पंजाबमें, त्रिनाडी सर्वत्र वर्जित है, कोई नाडीमें नक्षत्रके प्रथम, चतुर्थ और तीसरे दूसरे चरणमें विशेष दोष कहते हैं। नाडी विचार वरकन्या, स्वामी सेवक, नये मित्र, देश तथा नवीन देश, ग्राम; नगर, घरमें है, जहां नक्षत्र नाडी हुएमें चरणनाडी न हो तहां दोष अल्प है, पूर्वोक्तादि परिहार हुएमें नाडीकी शांती भी है कि, मृत्युंजयादि जप सुवर्णनाडी दान तथा वर्णादि कूटमें गौ, अन्न, वस्त्र, सुवर्ण देना ॥ ३४ ॥ (स्रग्धरा)

वर्णादिगुणचक्राणि।

कन्यापक्षे.	वर्णगुण.			
ब्राह्म.	१	०	०	०
क्षत्रि.	१	१	०	०
वैश्य.	१	१	१	०
शूद्र.	१	१	१	१
वर्ण.	ब्रा.	क्ष.	वै.	शू.
	वरपक्षे.			

वश्यगुण.

चतुष्प.	२	॥	१	०	२
मनु.	॥	२	०	०	०
जलचर.	१	०	२	२	२
वनचर.	०	०	२	२	०
कीट.	१	०	१	०	२

तारा चक्रम्.									
ता.	१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
२	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
३	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
४	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
५	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
६	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
७	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
८	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
९	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३

योनिगुणाः ।

	अ.	ग.	मे.	स.	श्वा	मा.	मू.	गौ	भैं	व्या	ह.	वा.	न.	सिं.
अश्व	४	२	२	३	२	२	२	१	०	१	३	३	२	१
गज	२	४	३	३	२	२	२	२	३	१	२	२	२	०
मेष	२	३	४	२	१	२	१	३	३	१	२	०	३	१
सर्प	३	३	२	४	२	१	१	१	१	२	२	२	०	२
श्वान	२	२	१	२	४	२	१	२	२	१	०	२	१	१
मार्जार	२	२	२	३	२	४	०	२	२	२	३	३	२	२
मूषक	२	२	१	१	१	०	४	२	२	२	२	२	२	१
गो	१	२	३	२	३	२	२	४	२	०	३	२	२	१
भैंस	०	२	३	२	२	२	२	३	४	१	२	३	२	२
व्याघ्र	१	२	१	१	१	१	२	१	१	४	१	१	२	२
हरिण	३	३	२	२	०	३	२	३	२	१	४	२	२	२
वानर	३	३	०	२	२	३	२	२	२	१	२	४	३	२
नकुल	२	३	३	०	१	२	१	२	२	२	२	३	४	२
सिंह	१	०	१	२	१	१	०	०	३	२	१	२	२	४

गणगुणाः ।

		वर		
		दे.	म.	रा.
कन्या	दे.	६	४	०
	म.	४	६	०
	रा.	२	०	६

ग्रहमैत्रीगुणाः ।

वधू	वर.						
	र.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श
र.	५	५	५	३	५	०	०
चं.	५	५	४	१	४	॥	॥
मं	५	४	५	॥	५	३	॥
बु.	३	१	॥	५	॥	५	४
गु.	५	४	५	॥	५	॥	३
शु.	५	॥	३	५	॥	५	५
श	०	॥	॥	४	३	५	५

नाडीचक्रम्.

वधू	वर.		
	आ.	म.	अं.
आ.	०	८	८
म.	८	०	८
अं.	८	८	०

भकूटगुणाः.

	म.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
मेष.	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०
वृष.	७	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७
मि.	०	७	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७
कर्क.	७	०	७	७	०	७	७	०	०	७	७	०
सिंह.	०	७	०	७	७	०	७	७	०	०	७	०
कन्या.	०	०	७	०	७	७	०	७	७	०	०	७
तुला.	७	०	०	७	०	७	७	०	७	७	०	०
वृ.	०	७	०	०	७	०	७	७	०	७	७	०
धन.	०	०	७	०	०	७	०	७	७	०	७	७
मकर.	७	०	०	७	०	०	७	०	७	७	०	[illegible]
कुंभ.	७	७	०	०	७	०	०	७	०	७	७	०
मीन.	०	७	७	०	०	७	०	०	७	०	७	७

पूर्वमध्यापरभागचक्रम् ।

पौष्णेशशाक्राद्रससूर्यनन्दाः पूर्वार्धमध्यापरभागयुग्मम् ।
भर्ता प्रियः प्राग्युजि भे स्त्रियाः स्यान्मध्ये द्वयोः प्रेमपरे प्रिया स्त्री ॥ ३५ ॥

रेवतीसे ६ नक्षत्र पूर्वभाग संज्ञक हैं, आर्द्रासे १२ नक्षत्र मध्यभाग संज्ञक हैं तथा ज्येष्ठासे ९ नक्षत्र पर्यन्त अपर भाग है। पूर्व भागमें स्त्रीको पति प्रिय होता है, मध्य भागमें स्त्री पुरुषोंमें परस्पर प्रीति होती है और अपरभागमें पुरुषको स्त्री प्रिय होती है ॥ ३५ ॥ (इ०व०)

संज्ञा	पूर्वभाग	मध्यभाग	परभागः
संख्या	६	१२	९
फल	पति प्रिय	परस्पर प्रीति	स्त्री प्रिय

प्राच्यसम्मतवर्गकूटम् ।

अकचटतपयशवर्गाः खगेशमार्जारसिंहशुनाम् ।
सर्पाखुमृगावीनां निजपञ्चमवैरिणामष्टौ ॥ ३६ ॥

अवर्ग गरुड । कवर्ग मार्जार । चवर्ग सिंह । टवर्ग कुत्ता । तवर्ग सर्प । पवर्ग चूहा । यवर्ग मृग । शवर्ग (अवि) बकरा ये ८ वर्गोंके स्वामी हैं, अपनेसे पांचवां शत्रु होता है, जैसे--गरुड सर्प, मार्जार चूहा, सिंह मृग, कुत्ता, बकरा, सर्प गरुड । स्त्रीपुरुषके नक्षत्र भक्ष्य-भक्ष्यक हों तो शुभ नहीं होता । कोई नामाद्यक्षरसे भी वर कन्याका, स्वामी सेवक आदि सभीका विचार करते हैं ॥ ३६ ॥ (आर्या)

नक्षत्रराश्यैक्ये विशेषः ।

राश्यैक्ये चेद्भिन्नमृक्षं द्वयोः स्यान्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव ।
नाडीदोषो नो गणानां च दोषो नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात् ॥ ३७ ॥

यदि वरकन्याकी एक राशि हो और दो नक्षत्र हों वा एक नक्षत्र हो परन्तु राशि दो हों और नक्षत्र तो एक हो परन्तु चरण भिन्न हों, एक ही चरण न हो तो नाडी दोष, गणदोष, उपलक्षणसे तारादिदोष भी नहीं होते।व्यवहार,राजसेवा, संग्राम, मित्रतामें नामराशिसे फल है ॥ ३७ ॥ (शालि०)

स्वामीसेवकनक्षत्रे विशेषः ।

सेव्याधमर्णयुवतीनगरादिभं चेत्पूर्वं हि भृत्यधनिभर्तृपुरादिसद्भात् ।
सेवाविनाशधननाशनभर्तृनाशग्रामादिसौख्यहृदिदं क्रमशः प्रदिष्टम् ॥ ३८ ॥

यदि सेवक, धनी, पति और ग्रामके नक्षत्रसे स्वामी, ऋणी, स्त्री तथा नगरका नक्षत्र पूर्व हो तो क्रमसे सेवानाश,धननाश,पतिनाश और ग्रामसंबन्धी सुखका नाश जाननाचाहिये॥ ३८॥

राशिस्वामिनः, नवांशविधिश्च ।

कुजशुक्रसौम्यशशिसूर्यचन्द्रजाः कविभौमजीवशनिसौरयो गुरुः ।
इह राशिपाः क्रियमृगास्यतौलिकेन्दुभतो नवांशविधिरुच्यते बुधैः ॥ ३९ ॥

राशिस्वामी--मेष वृश्चिकका मंगल, तुला वृषका शुक्र, एवं ३ । ६ का बुध, ४ का चन्द्रमा, ५ का सूर्य, ९ । १२ का बृहस्पति, १० । ११ का शनि राशीश हैं ।

नवांश कहते हैं कि एक राशिके ३० अंश होते हैं इनके ९ भाग, ३ अंश २० कलाका एक, ६ । ४० पर्यन्त दो, १० । तृतीय, १३ । २० चतुर्थ, १६ । ४० पञ्चम, २० । ० छठा, २३ । २० सप्तम, २६ । ४० अष्टम, ३० । ० नवम, इनकी गिनती १ । ५ । ९को मेषसे, २ । ६ । १० को मकरसे, ३ । ७ । ११ । को तुलासे, ४ । ८ । १२ को कर्कसे, अर्थात् चरादि गणना है । जैसे--मेषके ३ । २० तो मेषका, ६ । ४० पर्यन्त वृषका नवांश इत्यादि, वृषमें ३ । २० हो तो मकरका ६ । ४० में कुम्भका इत्यादि सभीके जानने ॥३९॥ (मं० भा०)

होराविधिः ।

समगृहमध्ये शशिरविहोरा । विषमभमध्ये रविशशिनोः स्यात् ॥ ४० ॥

होरा--समराशिमें १५ अंश पर्यन्त चन्द्रमाकी, उपरांत ३० अंशपर्यन्त सूर्यकी, विषम राशिमें १५ अंश पर्यन्त सूर्यकी, उपरांत ३० अंश पर्यन्त चन्द्रमाकी होरा होती है ॥ ४० ॥ (शशिवदना)

त्रिंशांश-द्रेष्काणांशाः ।

शुक्रज्ञजीवशनिभूतनयस्य बाणशैलाष्टपञ्चविशिखाः समराशिमध्ये ।
त्रिंशांशको विषमभे विपरीतमस्माद् द्रेष्काणकाःप्रथमपञ्चनवाधिपानाम् ४१॥

त्रिंशांशक--समराशिमें ५ अंशपर्यन्त शुक्रका और पांच अंशसे ७ अंश पर्यन्त बुधका, उपरांत ८ अंशपर्यन्त बृहस्पतिका, उपरांत ५ अंश शनिका और ५ अंश मंगलका, विषम राशिमें विपरीत ५ अंश मंगलका, एवं ५ शनि; ८ बृहस्पति, ७ बुध, ५ शुक्रका त्रिंशांश होता है । द्रेष्काण--दश अंशपर्यन्त जो राशि हैं उसके स्वामीके ११ अंशसे २० अंशपर्यन्त उस राशिसे पंचम जो राशि है उस राशिके स्वामीका, २१ अंशसे ३० अंशपर्यन्त उस राशिसे नवम राशिके स्वामीका द्रेष्काण होता है ॥ ४१ ॥ (वसं०)

द्वादशांशः, सकलवर्गोपसंहारश्च ।

स्याद्द्वादशांश इह राशित एव गेहं होराथ दृक्नवमांशकसूर्यभागाः ।
त्रिंशांशकश्च षडिमे कथितास्तु वर्गाःसौम्यैःशुभं भवति चाशुभमेव पापैः॥४२॥

द्वादशांश--एकराशिके ३० अंशोंके १२ भाग (अढाई) २ अंश ३० कला होता है अपनी राशिसे गिना जाता है । जैसे--मेषके २ अंश ३० कलामें मेषका द्वादशांश,

५ अंशपर्यन्त वृषका, ७ अंश ३० कला पर्यन्त मिथुनका इत्यादि सभीका जानना, होरा द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश, त्रिंशांश राशि ये षड्वर्ग हैं, शुभ ग्रहोंके षड्वर्ग सभी कार्योंमें शुभ, पापका अशुभ होता है ॥ ४२ ॥ (वसं)

गण्डान्तदोषः ।

ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिका युग्मं च मूलाश्विनीपित्र्यादौ घटिकाद्वयं निगदितं तद्भस्य गण्डान्तकम् । कर्काल्यण्डजभान्ततोऽर्धघटिका सिंहाश्वमेषादिगा पूर्णान्ते घटिकात्मकं त्वशुभदं नन्दातिथेश्चादिमम् ॥ ४३ ॥

तिथ्यादि पंचांग तथा वर्षर्तु मासपक्षदिनादि सभी संधि होती हैं, इनमें विशेषता तिथिनक्षत्र लग्नकी संधियोंकी गण्डांत संज्ञा है। वह ज्येष्ठा, रेवती, आश्लेषाके अंत्यकी २ घटी, अश्विनी मघा मूलके आदिकी २ घटी; समस्त ४ । ४ घटियोंका नक्षत्र गण्डांत होता है । तथा कर्क वृश्चिक, मीनकी अंतिम आधी घटी; मेष, सिंह, धनके आदिकी आधी घटी समस्त घटी लग्नगण्डांत होता है। एवं पूर्णा ५ । १०, १५ तिथियोंके अंतकी १ घटी, नंदा ११ । ६ । १ के आदिकी १ घटी समस्त दो घटी तिथिगंडांत होता है; गण्डांतके उत्पन्न कन्या पुत्र दोषद होते हैं इसका विस्तार नक्षत्रप्रकरणमें कह आये, शुभकार्योंमें गण्डांत वर्जित है, परन्तु तिथिगण्डांत लग्नगंडांतका ग्रन्थांतरोंमें सामान्य दोष कहा है कि, चन्द्रमाके बली होनेमें तिथिगंडांत बृहस्पतिके बली होनेमें लग्नगण्डांतका दोष नहीं ऐसे ही मासांतके ३ दिनवर्षान्तके १९ दिन संधि गण्डांतसंज्ञक हैं, योग करण संधि १ । १ घटी होती है, ऐसे ही दिन रात्रि अर्द्धरात्रि मध्याह्नादि भी हैं ॥ ४३ ॥ (शार्दू०)

कर्तरीदोषः ।

लग्नात्पापावृज्वनृजू व्ययार्थस्थौ यदा तदा ।
कर्त्तरीनाम सा ज्ञेया मृत्युदारिद्र्यशोकदा ॥ ४४ ॥

लग्नसे पापग्रह दूसरा वक्री तथा बारहवां मार्गी हो तो इसका नाम कर्तरी है, विवाहादिकोंमें मृत्यु किंवा दरिद्रता शोक देती है, ऐसे ही सप्तम भावमें कर्तरी अशुभ कहते हैं तथा चन्द्रमापर भी उक्तफलकारक है, जातकोंमें सभी भावोंमें अपने अपने उक्त वस्तुको अनिष्ट फल है ॥४४॥ (अनु०)

संग्रहदोषः ।

चन्द्रे सूर्यादिसंयुक्ते दारिद्र्यं मरणं शुभम् ।
सौख्यं सापत्न्यवैराग्ये पापद्वययुते मृतिः ॥ ४५ ॥

चन्द्रमा सूर्यके साथ हो तो दरिद्रता एवं मंगलके साथ मृत्यु, बुधके साथ शुभ, बृहस्पतिके साथ सौख्य, शुक्रके साथ (सापत्न्य) सौत, शनिके साथ (वैराग्य) फकीरी, राहु केतु भी ऐसे ही जानना, यदि चंद्रमा दो पापग्रहोंसे युक्त हो तो मृत्यु होवे, परन्तु मित्र स्वक्षेत्र, उच्चवर्गोत्तमादिगत चंद्रमा पापयुक्त दोष नहीं करता, यह ग्रंथांतरमत है ॥ ४५ ॥ (अनु०)

अष्टमलग्नदोषस्यापवादः ।

जन्मलग्नभयोर्मृत्युराशौ नेष्टः करग्रहः ।
एकाधिपत्ये राशीशे मैत्रे वा नैव दोषकृत् ॥ ४६ ॥

जन्मलग्न--जन्मराशिसे अष्टम लग्न विवाहादि शुभ कार्यमें शुभ नहीं होता परन्तु एकाधिपत्य जैसे १ । ८ हो तथा राशीश मैत्री (जैसे ५ । १२ हो तो लग्नाष्टक और राश्यष्टकका दोष नहीं होता) ॥ ४६ ॥ (अनु०)

मीनोक्षकर्कालिमृगस्त्रियोऽष्टमं लग्नं यदा नाष्टमगेहदोषकृत् ।
अन्योन्यमित्रत्ववशेन सा वधूर्भवेत्सुतायुर्गृहसौख्यभागिनी ॥ ४७ ॥

यदि १२ । २ । ४ । ८ । १० । ६ ये राशि जन्मलग्न जन्मराशिसे अष्टम हों तो उक्त अष्टकदोष नहीं होता. क्योंकि इनके स्वामी परस्पर मित्र हैं इससे इन राशियोंके अष्टम होनेमें वधू पुत्र, आयु और घरके सुखयुक्त होती है । मतांतर है कि, जो अष्टमराशीश केन्द्रमें किंवा स्वोच्चादिमें हो तो अष्टमोक्त दोष नहीं होता है ॥ ४७ ॥ (उ०)

मृतिभवनांशो यदि च विलग्ने तदधिपतिर्वा न शुभकरः स्यात् ।
व्ययभवनं वा भवति तदंशस्तदधिपतिर्वा कलहकरः स्यात् ॥ ४८ ॥

उक्त अष्टमराशिका नवांश अथवा अष्टमेश लग्नमें हो तो शुभ नहीं, यदि जन्मलग्न जन्मराशिसे व्ययराशि वा उसका अंश अथवा तदीश लग्नमें हो तो कलहकारक होता है, कोई धनहानिकारक कहते हैं ॥ ४८ ॥ (कुसुमविचित्रा)

विषघटीदोषः ।

खरामतोऽन्त्यादितिवह्निपित्र्यभे खवेदतः के रदतश्च सार्पभे ।
खबाणतोऽश्वधृतितोऽर्यमाम्बुपे कृतेर्भगत्वाष्ट्रभविश्वजीवभे ॥ ४९ ॥
मनोर्द्विदैवानिलसौम्यशाक्रभे कुपक्षतः शैवकरेऽष्टितोऽजभे ।
युगाश्वितो बुध्न्यभतोययाम्यभे खचन्द्रतो मित्रभवासवश्रुतौ ॥ ५० ॥

मूलेऽङ्कबाणाद्विपनाडिकाः कृता वर्ज्याः शुभेऽथो विषनाडिका ध्रुवाः ।
निघ्ना भभोगेन खतर्कभाजिताः स्पष्टा भवेयुर्विषनाडिकास्तथा ॥ ५१ ॥

विषघटीमें दोष--रेवती, पुनर्वसु, कृत्तिका, मघाकी ३० घटीसे ऊपर ४ घटी विषनाडी जानना. यह शुभकार्यमें त्याज्य हैं, एवं रो० ४० से, आश्लेषा ३२ से, अश्विनी ५० से, भरणी शततारा १८ से, पूर्वाफाल्गुनी चित्रा उत्तराषाढा पुष्यकी २० से, विशाखा स्वाती मृगशिर ज्येष्ठा १४ से, आर्द्रा हस्तकी २१ से, पूर्वाभाद्रपदा १६ से, उत्तराभाद्रपदा पूर्वाषाढा भरणी २४ से, अनुराधा धनिष्ठा श्रवण १० से, मूलकी ५६ से, ऊपर ४ घटी विषनाडी सर्वत्र शुभकृत्यमें तथा जन्ममें भी (वर्ज्य) अशुभफलकारक हैं, यह घटिका षष्टिप्रमाण भुक्तसे जाननी । जैसे--६० घटीके नक्षत्रमें उक्त घटीसे विषघटी होती है तो अमुक सर्वभोग होनेमें कितनी घटीसे होगी, उक्त ध्रुवक ६० से गुणा कर सर्वभोगसे भाग लिया जाय तो स्पष्ट विषघटीका आरम्भ मिलता है. ग्रन्थांतरोंमें परिहार है कि, चन्द्रमा लग्न विना केन्द्र त्रिकोणमें बली हो, अथवा लग्नेश शुभयुक्त केंद्रमें हो तो विषघटीका दोष नहीं होता है ॥ ४९--५१ ॥ (वंशस्थ)

नक्षत्रविषघटी.

अ.	भ.	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पु.	पु.	आ.
५०	२४	३०	४०	१४	२१	३०	२०	३२
म.	पू.	उ.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अ.	ज्ये.
३०	२०	१८	२१	२०	१४	१४	१०	१४
मू.	पू.	उ.	श्र.	ध.	श.	पू.	उ.	रे.
५६	२४	२०	१०	१०	१८	१६	२४	३०

वारविषघटी.

र.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
०	२	१२	१०	७	५	२५

तिथिविषघटी.

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	ति.
१५	५	८	७	७	११	४	८	७	१०	३	१३	१४	७	८	घ.

दिवारात्रिमुहूर्ताः ।

गिरिशभुजगमित्राः पित्र्यवस्वम्बुविश्वेऽभिजिदथ च विधातापीन्द्र इन्द्रानलौ च । निर्ऋतिरुदकनाथोऽप्यर्यमाऽथो भगः स्युः क्रमश इह मुहूर्त्ता वासरे बाणचन्द्राः ॥ ५२ ॥

एक दिनके १५ मुहूर्तोंके स्वामी-महादेव १ सर्प २ मित्र ३ पितर ४ वसु ५ जल ६ विश्वेदेव ७ अभिजित् ८ ब्रह्मा ९ इंद्र १० इन्द्राग्नी ११ राक्षस १२ वरुण १३ अर्यमा १४ भग १५ । मुहूर्त २ घटीका होता है ॥ ५२ ॥ (नाळिनी)

शिवोऽजपादादष्टौ स्युर्भेशा अदितिजीवकौ ।
विष्ण्वर्कत्वाष्ट्रमरुतो मुहूर्त्ता निशि कीर्तिताः ॥ ५३ ॥

रात्रिमुहूर्त--शिव १ अजचरण २ अहिर्बुध्न्य ३ पूषा ४ अश्वि ५ यम ६ अग्नि ७ ब्रह्मा ८ चन्द्रमा ९ अदिति १० बृहस्पति ११ विष्णु १२ सूर्य १३ त्वाष्ट्र १४ वायु १५ ये रात्रिमें मुहूर्ताधीश हैं, इनका प्रयोग यह है कि; जो कार्य जिस नक्षत्रमें कहा है वह उसके स्वामीके मुहूर्तमें करलेना , " धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेऽस्य" यह ग्रंथकारने भी प्रकट कहा है ॥ ५३ ॥ (अनु०)

वारभेदेन मुहूर्त्ताः ।

रवावर्यमा ब्रह्मरक्षश्च सोमे कुजे वह्निपित्र्ये बुधे चाभिजित्स्यात् ।
गुरौ तोयरक्षौ भृगौ ब्राह्मपित्र्ये शनावीशसार्पौ मुहूर्त्ता निषिद्धाः ॥ ५४ ॥

रविवारको अर्यमा, चंद्रवारमें ब्रह्मा राक्षस, मंगलको अग्नि पितर, शनिको अभिजित्, बृहस्पतिको जल राक्षस, शुक्रके ब्राह्म पितर, शनिको शिव सर्प मुहूर्त निषिद्ध होते हैं ॥ ५४ ॥ (भुजङ्गप्र०)

वेधविचारः अभिजिन्मानं च ।

निर्वेधैः शशिकरमूलमैत्र्यपित्र्यब्राह्मान्त्योत्तरपवनैः शुभो विवाहः ।
रिक्तामारहिततिथौ शुभेऽह्नि वैश्वप्रान्त्याङ्घ्रिश्रुतितिथिभागतोऽ-
भिजित्स्यात् ॥ ५५ ॥

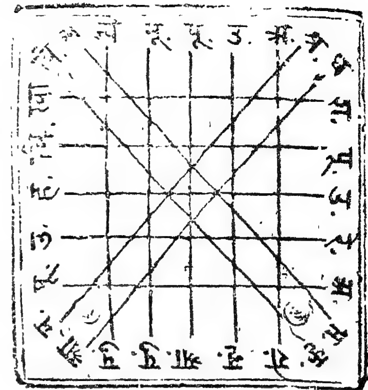
विवाहमुहूर्त वेधरहित--मृगशिर, हस्त, मूल, अनुराधा, मघा, रोहिणी, रेवती तीनों उत्तरा, स्वाती ये नक्षत्र तथा शुभग्रहोंके वारमें विवाह शुभ होता है, रिक्ता ४। ९। १४ अमा ३० तिथि न लेनी । (विवाहसे ६ दिनके भीतर श्राद्धदिन वा अमा हो तो उस दिन न करना, यह भी प्रमाण है (उत्तराषाढाका चतुर्थचरण एवं श्रवणके आदि ४ घटी अभिजित नक्षत्र होता है ॥ ५५ ॥ (प्रहर्षिणी)

पञ्चशलाकावेधः ।

वेधोऽन्योन्यमसौ विरिञ्च्यभिजितोर्याम्यानुराधर्क्षयोर्विश्वेन्द्वोर्हरिपि-
त्र्ययोर्ग्रहकृतो हस्तोत्तराभाद्रयोः । स्वातीवारुणयोर्भवेन्निर्ऋतिभादि-
त्योस्तथोपान्त्ययोः खेटे तत्र गते तुरीयचरणाद्योर्वा तृतीयद्वयोः ॥ ५६ ॥

पञ्चशलाकावेध—रोहिणी अभिजित्का ; एवं भरणी अनुराधा उत्तराषाढा मृगशिर । श्रवण मघा । हस्त उत्तराभाद्रपदा । स्वाती शतभिषा । मूल पुनर्वसु । उत्तराफाल्गुनी रेवतीका परस्पर वेध ग्रहोंका होता है। शेष नक्षत्रोंका वेध अगले श्लोकोक्त सप्तशलाकावाला जानना । चरणवेध—प्रथम पादका चतुर्थपर, द्वितीयका तृतीयपर, तृतीयका द्वितीयपर, चतुर्थका प्रथमपर होता है ॥ ५६ ॥ (शार्दू०)

पञ्चशलाचक्रम् ।

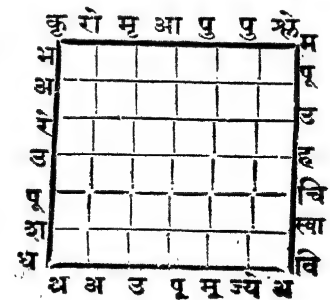


सप्तशलाकावेधः ।

शाक्रेज्ये शतभानिले जलशिवे पौष्णार्यमर्क्षे वसुद्वीशे वैश्वसुधांशुभे हयभगे सार्पानुराधे मिथः । हस्तोपान्तिमभे विधातृविधिभे मूलादितित्वाष्ट्रभेऽजाङ्घ्री याम्यमघे कृशानुहरिभे विद्धे कुभृद्रेखिके ॥ ५७ ॥

सप्तशलाका—ज्येष्ठा पुष्य । श० स्वा० । पूर्वाषा० आर्द्रा । रेवती उत्तराफा० । धनिष्ठा विशाखा । उत्तराषाढा मृगशिर । अश्विनी पूर्वाफाल्गुनी । आश्लेषा अनुराधा । हस्त उत्तराभाद्रपदा । रोहिणी अभिजित् । मूल पुनर्वसु । चित्रा पूर्वाभाद्रपदा । भरणी मघा । कृत्तिका श्रवणका परस्पर सप्तशलाका वेध ग्रहोंका होता है, वेधका फल यह है कि" यस्याः शशी सप्तशलाकभिन्नः पापैरपापैरथवा विवाहे । विवाहवस्त्रेण च सावृताङ्गी श्मशानभूमिं रुदती प्रयाति ॥ १ ॥" जिस स्त्रीके विवाहमें चंद्रमा पापग्रहोंके सप्तशलाकासे विद्ध हो तो वह विवाहके वस्त्रोंको लेकर रोती हुई श्मशान-भूमिमें जावे अर्थात् शीघ्रही विधवा होकर सकाम न हो ॥ ५७ ॥ (शार्दू०)

॥ सप्तशलाकाचक्रम् ॥



क्रूराक्रान्तादिनक्षत्रदोषस्यापवादः ।

ऋक्षाणि क्रूरविद्धानि क्रूरमुक्तादिकानि च ।
भुक्त्वा चन्द्रेण मुक्तानि शुभार्हाणि प्रचक्षते ॥ ५८ ॥

जो नक्षत्र पापविद्ध होकर छुटे तद्वत् क्रूरगंतव्य हो क्रूराक्रांत हो तो जब वह दोष उनका छूट जाय तब भी चन्द्रमाके भुक्त कियेमें वह नक्षत्र (शुद्ध) शुभकार्ययोग्य

होते हैं, ग्रन्थान्तरोंमें द्विराशिभोग नक्षत्रके लिये हैं कि, जिस राशिके भागमें पापग्रह हो वही भाग वर्जित है, दूसरा भाग शुभकार्यमें ग्राह्य है ॥ ५८ ॥

लत्तापातादिदोषाः ।

ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे भं सप्तगोजातिशरैर्मितं हि ।
संलत्तयन्तेऽकशनीज्यभौमाः सूर्याष्टतर्काग्निमितं पुरस्तात् ॥ ५९ ॥

लत्ता--बुध अपने अधिष्ठित नक्षत्रसे पीछे सातवें नक्षत्रपर लत्तादोष करता है, तथा राहु स्वपृष्ठके नववें पर; पूर्णचन्द्रमा बाईसवें नक्षत्रपर (कृष्णपक्षके ६ । ७ । ८ । के बीच होता है) तथा शुक्र स्वपृष्ठपंचमनक्षत्रपर लत्तादोष करता है तथा सूर्य अपने आक्रांतनक्षत्रसे आगे १२ वें शनि८वें बृहस्पति छठे भौम तीसरेपर उक्त दोष करता है वक्रीग्रहकी लत्ता भी उक्त क्रमसे विपरीत जाननी ॥ ५९ ॥ (उ०जा०)

हर्षणवैधृतिसाध्यव्यतिपातकगण्डशूलयोगानाम् ।
अन्ते यन्नक्षत्रं पातेन निपातितं तत्स्यात् ॥ ६० ॥

पात--हर्षण, साध्य, व्यतिपात; गंड शूल योगोंका जिस नक्षत्रमें (अंत) समाप्ति हो उसपर पातदोष होता है शुभकार्यमें वर्ज्य है (इसीका नाम चंडीश चंडायुध भी है)॥६०॥(पथ्या आर्या)

पञ्चास्याजौ गोमृगौ तौलिकुम्भौ कन्यामीनौ कर्क्यली चापयुग्मे ।
तत्रान्योन्यं चन्द्रभान्वोर्निरुक्तं क्रान्तेः साम्यं नो शुभं मङ्गले तत्॥६१॥

क्रांतिसाम्य--मेष सिंह। वृष मकर। तुला कुम्भ । कन्या मीन । कर्क वृश्चिक । धन मिथुन राशियोंमें सूर्य चन्द्रमा परस्पर एक रेखामें हों तो क्रांतिसाम्य दोष होता है, शुभकृत्यमें वर्जित है (इसे महापात भी कहते हैं) ॥६१ ॥(शालिनी)

	३	१	२	
क्रांति				साम्य
११				७
१२				६
८				४
	९	५	१०	

एकार्गल (खर्जूर) दोषः ।

व्याघातगण्डव्यतिपातपूर्वशूलान्त्यवज्रे परिघातिगण्डे ।
योगे विरुद्धे त्वभिजित्समेतो दोषः शशी चेद्विषमर्क्षगोऽर्कात् ॥ ६२ ॥

एकार्गल--व्याघात, गण्ड, व्यतिपात आदि विरुद्ध योग तथा शूल, वैधृति वज्र, परिघ, अतिगण्ड योग जिस दिन हों उस दिनका नक्षत्र सूर्यके नक्षत्रसे विषम हो तो

एकार्गल दोष होता है, सूर्य नक्षत्रसे चंद्रर्क्ष सम होनेमें उक्त योगोंके हुएमें भी नहीं होता (इसीको खार्जूर भी कहते हैं) ॥ ६२ ॥ (इं० व०)

उपग्रहदोषः ।

शराष्टदिक्छक्रनगातिधृत्यस्तिथिर्धृतिश्च प्रकृतेश्च पञ्च ।
उपग्रहाः सूर्यभतोऽब्जतारा: शुभा न देशे कुरु-बाह्लिकानाम् ॥ ६३ ॥

उपग्रह--सूर्यके नक्षत्रसे चन्द्रमाके नक्षत्र५ ।८।१० । १४।७।१९ ।१५ । १८ । २१ । २२ । २३ । २४ । २५ । वाँ हो तो उपग्रह दोष है, बाल्हिक तथा कुरु देशमें दोष करता है, कोई यहां भी परिहार कहते हैं, कि नक्षत्रके जिस चरणपर सूर्य है, उक्त संख्याके चंद्रर्क्षके उस चरणपर दोष होता है अन्यपर नहीं, ये परिहार उपरोक्त (खार्जूर) एकार्गलके भी हैं ॥६३॥(उ०१०)

चक्रम्

	१	
२७		२
२६		३
२५		४
२४		५
२३		६
२२		७
२१		८
२०		९
१९		१०
१८		११
१७		१२
१६		१३
१५		१४
	०	

पातोपग्रहलत्तासु नेष्टोऽङ्घ्रिः खेटवत्समः ।
वारस्त्रिघ्नोऽष्टभिस्तष्टः सैकः स्यादर्द्धयामकः ॥ ६४ ॥

(पात) चंडीश, चण्डायुध, उपग्रह, लत्तामें भी चरणवेध दूषित हैं, जैसे पात एवं उपग्रह जिस चरणपर हो उतनेही चरण दूषित नक्षत्रका वर्ज्य है तथा जिस ग्रहकी लत्ता है वह जिस चरणपर अपने स्थित नक्षत्रके हैं उतने संख्याके दिन नक्षत्रके चरणपर दोष होता है और पर नहीं अर्द्धयाम है कि वर्त्तमान वारको ३ से गुणाकार ८ से (तष्ट) शेष करे, जो शेष रहे उसमें १ जोडनेसे अर्द्धयाम दोष होता है, दिनमें यह शुभ कार्यमें वर्ज्य है रात्रिको नहीं ॥ ६४ ॥ (अनु०)

कुलिकदोषः ।

शक्रार्कदिग्वसुरसाब्ध्यश्विनः कुलिका रवेः ।
रात्रौ निरेकास्तिथ्यंशाः शनौ चान्त्योऽपि निन्दिताः ॥ ६५ ॥

कुलिक--दिनमें रविवारको १४ वां मुहूर्त, चन्द्रको १२ मंगलको १० बुधको ८ बृहस्पति ६ शुक्र ४ शनिको २ मुहूर्त कुलिक होता हैं, तथा रात्रिमें उक्तोंमें १ घटायके जैसे सू० १३ चं० ११ मं० ९ बु० ७ बृ० ५ शु० ३ श० १० वां मुहूर्त कुलिक होता है; तथा शनिवारको अन्त्यका मुहूर्त त्याज्य है, ये मुहूर्त विवाहमें

वैधव्यकारक होनेसे अतिनिन्दित है इसी हेतु यहां दुबारे कहे हैं, प्रथम शुभाशुभ प्रकरणमें भी कह आये थे । वहां साधारण दोष गणना है, अन्य कार्योंमें फल इनका दोषद नहीं ॥ ६५ ॥ (अनु०)

मुहूर्त.

दिवा	आ	अ.	अ.	म.	ध.	पू.षा.	उ. फा.	श्र.	रो.	ज्ये	वि.	मू.	श.	उ. फा.	पू. फा.
मुहूर्त्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
रात्रि	आ	पू. फा.	उ फा.	रे.	अभि.	भ.	कृ.	रो.	मृ.	पु.	पु.	श्र.	ह.	चि.	स्वा.
मुहूर्त्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५

वादुर्मुहूर्त.

र.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
उ. फा.	मू.	म.	अभि.	मू.	रो.	श्र.
०	रो.	कृ.	०	मृ.	म.	आ.

दग्धतिथिदोषः ।

चापान्त्यगे गोघटगे पतङ्गे कर्कांजगे स्त्रीमिथुने स्थिते च ।
सिंहालिगे नक्रधटे समाः स्युस्तिथ्यो द्वितीयाप्रमुखाश्च दग्धाः ॥ ६६ ॥

दग्धतिथि–धन मीनके सूर्यमें द्वितीया २, वृष कुम्भमें ४, कर्क मेषकेमें ६, मिथुन कन्यामें ८, सिंह वृश्चिकमें १०, मकर तुलामें १२ दग्ध होती हैं, ये मासदग्ध तिथि मध्यदेशमें ही वर्जित हैं ॥ ६६ ॥ (इ० व०)

यामित्रदोषः ।

लग्नाच्चन्द्रान्मदनभवनगे खेटे न स्यादिह परिणयनम् ।
किंवा बाणाशुगमितलवगे यामित्रं स्यादशुभकरमिदम् ॥ ६७ ॥

लग्न तथा चन्द्रमासे सप्तम ग्रह होनेमें यामित्र दोष होता है, विवाहादिकोंमें अशुभ फल करता है, किंवा लग्न वा चन्द्रस्थित नवांशमें ५५ अंशपर हो तो विशेष दोष है, जैसे तुलाके ५ अंशपर लग्न वा चन्द्रमा है तो मेषके ५ अंश ५५ हुए इसमें जो ग्रह हो उसकी यामित्री हुई, यह सूक्ष्म यामित्री है, इसमें शुभग्रहोंकी यामित्रीका फल ग्रन्थांतरोंमें शुभ भी है ॥ ६७ ॥ (भ्रमरविल०)

एकार्गलादिदोषाणामपवादः ।

एकार्गलोपग्रहपातलत्तायामित्रकर्तर्युदयास्तदोषाः ।
नश्यन्ति चन्द्रार्कबलोपपन्ने लग्ने यथार्काभ्युदये तु दोषाः ॥ ६८ ॥

एकार्गल (खार्जूर) तथा उपग्रह, पात, लत्ता, यामित्री, कर्तरी, उदयास्त (वक्ष्यमाण) इतने दोष विवाहलग्नमें सूर्य चंद्रमाके बलवान् होनेमें नष्ट हो जाते हैं, जैसे--सूर्यके उदय होनेमें रात्रिका अंधकार नष्ट होता है ॥ ६८ ॥ (ई० व०)

उपग्रहर्क्षं कुरुबाह्लिकेषु कलिङ्गवङ्गेषु च पातितं भम् ।
सौराष्ट्रशाल्वेषु च लत्तितं भं त्यजेत्तु विद्धं किल सर्वदेशे ॥ ६९ ॥

कुरुदेश, वाह्लीकदेश (पश्चिममें है) में उपग्रहनक्षत्र त्याज्य है अन्य देशोंमें नहीं, कलिंग, बंग (पूर्वमें हैं) मागधादिकोंमें पात दोष (चन्डीश चन्डायुध) त्याज्य है, सौराष्ट्र, शाल्व (पश्चिममें है) में लत्ता त्याज्य हैं और वेध सर्वत्र त्याज्य है । कहीं युतिदोष गौडमें, यामित्री यामुन प्रदेशमें कहा है ॥ ६९ ॥ (उ० जा०)

शशाङ्कसूर्यर्क्षयुतेर्भशेषे ख भूयुगाङ्गानि दशेशतिथ्यः ।
नागेन्दवोऽङ्केन्दुमिता नखाश्चेद्भवन्ति चैते दशयोगसंज्ञाः ॥ ७० ॥

सूर्य--चन्द्रमाकी नक्षत्र संख्या जोडके २७ से भाग लेना शेष० ।१।४।६।१०।११। १५ । १८ । १९ । २० । मेंसे कोई रहे तो दशयोग संज्ञा होती है ॥७०॥ (उ० जा०)

दशदोषयोगानां फलं तदपवादश्च ।

वाताभ्राग्निमहीपचौरमरणं रुग्वज्रवादाः क्षतिर्योगाङ्के दलिते समे
मनुयुतेऽथौजे तु सैकेऽर्धिते । भे दास्रादथ संमितास्तु मनभी रेखाः
क्रमात्संलिखेद्वेधोऽस्मिन्ग्रहचन्द्रयोर्न शुभदः स्यादेकरेखास्थयोः ॥ ७१ ॥

दश योगका फल कि ० शेषमें वायुदोष १ में मेघभय ४ में अग्निभय ६ में राजभय १० में चौरभय ११ में मृत्यु १५ रोग १८ वज्रभय १९ कलह २० धननाश उक्त अंकोंमेंसे समका आधा करके १४ जोडना जितने ही अश्विन्यादि उतनवां नक्षत्र होता है, जैसे--(सम) १० आधा ५ जुडे (मनु) १४ तो १९ वां मूल, हुआ, यदि विषम अंक हो तो १ जोडके आधा करना, जैसे--विषमांक १५ एक जोडके १६ आधा ८ पुष्य नक्षत्र हुआ, चौदह आडी रेखाका एक चक्र करना उक्त क्रमसे जो नक्षत्र आया उसे आदिमें लिखकर चक्ररेखाओंके दोनों ओर अभिजित् सहित सर्व नक्षत्र लिखने, जिन जिन नक्षत्रोंमें जो ग्रह है उन्हींमें लिखने चन्द्रमाके साथ एकरेखामें कोई ग्रह हो तो दृष्टिरूप वेध है, अशुभ होता है ।

बृहस्पति लग्नेश, शुक्र, बलवान् एवं केंद्रगत हो तो दशदोषका दोष नहीं होता, यह ग्रंथांतरका मत है ॥ ७१ ॥ (शार्दू०)

बाणदोषः पञ्चकाख्यः।

लग्नेनाढ्या याततिथ्योऽङ्कतष्टाः शेषे नागद्व्यब्धितर्केन्दुसंख्ये।
रोगो वह्नी राजचौरौ च मृत्युर्बाणश्चायं दाक्षिणात्यप्रसिद्धः ॥ ७२ ॥

लग्नमें शुक्लपक्ष प्रतिपदादिगत तिथि जोडके ९ से तष्ट करे शेष ८ रहे तो रोग बाण, २ शेषमें अग्नि, ४ में राजा, ६ में चोर, १ में मृत्युबाण होता है, यह दाक्षिणात्य (महाराष्ट्र) देशोंमें प्रसिद्ध हैं अन्यत्र नहीं ॥ ७२ ॥ (शालिनी)

प्राच्यमतेन बाणः सापवादः।

रसगुणशशिनागाब्ध्याढ्यसंक्रान्तियातांशकमितिरथतष्टाङ्कैर्यदा पञ्च शेषाः।
रुगनलनृपचौरा मृत्युसंज्ञश्च बाणो नवहृतशरशेषे शेषकैक्ये सशल्यः॥७३॥

निरयनांश सूर्यसंक्रांतिसे गत अंशोंमें पृथक् पृथक् ६ । ३ । १ । ८ । ४ । जोडके ९ से तष्ट करके जिस अंकमें ५ शेष रहे वह बाण इस प्रकार जानना । ६ में ५ शेष रहे तो रोग बाण, एवं ३ में अग्नि, १ में राज, ८ में चोर, ४ में मृत्यु बाण होता है, यह काष्टशल्य बाण है । पूर्वोक्त प्रकारसे ६ आदि अंकोंमें सूर्यगतांश जोडके ९ से शेष करके जो जो अङ्क शेष है उन सबको जोडके ९ से शेष करना यदि ५ शेष रहे तो (सशल्य) लोह शल्यसहित जानना, अन्यांक शेषमें शल्यरहित होता है, सशल्य अति निन्द्य है ॥७३॥ (मालिनी)

समयभेदेन तत्परिहारस्त्रिविधः।

रात्रौ चौररुजौ दिवा नरपतिर्वह्निः सदा सन्ध्ययोर्मृत्युश्चाथ शनौ नृपो विदि मृतिर्भौमेऽग्निचौरौ रवौ । रोगोऽथ व्रतगेहगोपनृपसेवायानपाणिग्रहे वर्ज्याश्च क्रमतो बुधै रुगनलक्ष्मापालचौरा मृतिः ॥ ७४ ॥

चोर तथा रोगबाण रात्रिमें, नृपबाण दिनमें, वह्निबाण सदा अर्थात् दिन रात्रि दोनोंमें, मृत्युबाण संध्यासमयमें वर्ज्य हैं, तथा शनैश्चरमें राज, बुधमें मृत्यु, मंगलमें अग्नि चोर, सूर्यमें रोगबाण वर्जित है और व्रतबन्धमें रोगबाण गृहगोपनादि घरके कृत्यमें अग्निबाण, राजसेवामें नृपबाण, यात्रामें चोर, विवाहमें मृत्युबाण त्याज्य है ॥ ७४ ॥ (शार्दूलविक्रीडित)

बाणचक्रम्.

	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	
रो. बा.	७ १७ २६	७ १६ २५	६ १५ २४	५ १४ २३	४ १३ २२ १	३ १२ २१ ३०	३ ११ २० २९	९ १८ २७	८ १७ २६	६ १५ २४	७ १६ २५	६ १५ २४	रोगबाणमें ये तिथि निषिद्ध.
अ. बा.	२ २० २९	११ १९ २८	९ १८ २७	८ १७ २६	७ १६ २५	६ १५ २४	५ १४ २३	४ १३ २२	३ १२ २१	२ ११ २९	१० १६ २८	९ १८ २७	अ. बा. में. निषिद्ध ति.
रा. बा.	४ २२ १	३ २१ ३०	२ २० २९	१० १९ २८	९ १८ २७	८ १७ २६	७ १६ २५	६ १५ २४	५ १४ २३	४ १३ २२	३ १२ ३०	२ १० २९	रा. बा. निषिद्ध. ति.
चौ. बा.	६ १५ २४	५ १४ २३	४ १३ २३	३ २९ ३०	२ २० २९	१० १९ २८	९ १८ २७	८ १७ २६	७ १६ २५	६ १५ २४	५ १४ २३	४ १३ २२	चौ. बा. में. निषिद्ध. ति
मृ. बा.	२ १९ २८	९ १८ २७	८ १७ २६	७ १६ २५	६ १५ २४	५ १४ २३	४ १३ २२	३ १२ २१ ३०	२ ११ २० २९	१० २९ २८	९ १८ २७	८ १७ २६	मृ. बा. में. निषिद्ध. ति.

ग्रहाणां दृष्टिः ।

त्र्यांशं त्रिकोणं चतुरस्रमस्तं पश्यन्ति खेटाश्चरणाभिवृद्धया ।
मन्दो गुरुर्भूमिसुतः परे च क्रमेण संपूर्णदृशो भवन्ति ॥ ७५ ॥

ग्रह अपने स्थित राशिसे ३ । १० । भावमें १ चरण दृष्टि, ९ । ५ में २ चरण, ४ । ८ में ३ चरण, ७ में पूरे ४ चरण दृष्टिसे देखते हैं, तथा शनि ३ । १० बृहस्पति ९ । ५ मङ्गल ४ । ८ अन्यग्रह ७ सप्तमस्थानमें पूर्ण दृष्टिसे देखते हैं ॥ ७५ ॥ (उ० जा०)

उदयास्तशुद्धिः ।

यदा लग्नांशेशो लवमथ तनुं पश्यति सुतो भवेद्वाथ बोढुः शुभमिह मनल्पं रचयति । लवद्यूनस्वामी लवमदनभं लग्नमदनं प्रपश्येद्वा वध्वाः शुभमितरथा ज्ञेयमशुभम् ॥ ७६ ॥ लवेशो लवं लग्नपो लग्नगेहं प्रपश्येन्मिथो वा शुभं स्याद्वरस्य । लवद्यूनपोंऽशं द्युनं लग्नपोऽस्तं मिथो वेक्षते स्याच्छुभं कन्यकायाः ॥ ७७ ॥ लवपतिशुभमित्रं

वीक्षतेंऽशं तनुं वा परिणयनकरस्य स्याच्छुभं शास्त्रदृष्टम् । मदनलवप-
मित्रं सौम्यमंशं द्युनं वा तनुमदनगृहं चेद्वीक्षते शर्म वध्वाः ॥ ७८ ॥

उदयास्तशुद्धि यदि लग्नेश अंशेष लग्न तथा लग्नांशको देखे, यद्वा उनमें युक्त हो तो वरको बहुत ही शुभ फल होते हैं. जैसे--मेष लग्नमें मिथुनांशेश बुध तुलाका मिथुनको देखता है इत्यादि लग्नशुद्धिका विचार है; बलवान् नवांशसे सप्तम नवांशका स्वामी अंशसे सप्तम भावको किंवा सप्तम भाव नवांशको देखे वा युक्त हो तथा सप्तमेश सप्तमभावांशेश सप्तमभाव तथा तन्न-वांशको देखे वा युक्त हो तो कन्याको अतिशुभ फल देते हैं । यदि लग्नेश लग्नांशेश लग्न तथा अंशको न देखें तो वरको अशुभ (मृत्यु), यदि सप्तमभावेश सप्तम भाव नवांशेश सप्तम-भाव । वा तन्नवांशको न देखे वा युक्त न हो तो कन्याका अनिष्ट होवै॥ ७६ ॥ (शिख०) लग्नेश लग्नको अंशेश अंशको देखें अथवा परस्पर लग्नेश अंशको अंशेश लग्नको देखें तो वरको शुभ होवे, तथा सप्तमेश सप्तमभावको सप्तमभावांशेश अंशको अथवा अंशेश भावको भावेश अंशको देखें तो कन्याको शुभ होवे । अथवा सप्तमेश लग्न सप्तमभावको तथा सप्तमेशांशेश लग्न सप्तमको देखें तो भी कन्याको शुभ होवे, एवं लग्नेश वा लग्ननवांशेश सप्तम तथा लग्नको देखें तो दोनोंको शुभ होवे ॥ ७७ ॥ (भु० प्र०) लग्ननवांशेशको कोई शुभ ग्रह मित्र होकर अपने अंश वा लग्नको देखे तो विवाहमें पुत्रपौत्रादि शुभ फल करे, सप्तम भावांशेशका भी मित्र शुभ ग्रह सप्तमभावको तथा लग्न नवांशको देखे अथवा लग्नसे सप्तमभावको देखे तो वधूको शास्त्रोक्त शुभ (पुत्रपौत्रादि) होवे, पापग्रहोंके उक्त प्रकार योग तथा दृष्टिसे सर्वत्र अशुभ जानना ॥ ७८ ॥ (मा०)

सूर्यसंक्रमणाख्यलग्नदोषः ।

विषुवायनेषु परपूर्वमध्यमान्दिवसांस्त्यजेदितरसंक्रमेषु हि ।
घटिकास्तु षोडश शुभक्रियाविधौ परतोऽपि पूर्वमपि संत्यजेद् बुधः ॥ ७९॥

विषुवत् (१ । ७) संक्रांति; अयन (४ । १०) संक्रांतिका पूर्वदिन तथा दूसरा दिन और संक्रांतिदिन तीनों दिन विवाह व्रतबन्धादि शुभकार्यमें वर्जित करने । अन्य ८ संक्रां-तियोंके संक्रांतिकालसे १६ घटी पूर्व और १६ घटी पश्चात्की समस्त ३२ घटी वर्जित हैं ॥ ७९ ॥ (मञ्जुभाषिणी)

सर्वग्रहणां संक्रांतिवर्ज्यघटयः ।

देवद्व्यङ्कर्तवोऽष्टाष्टौ नाड्योऽङ्काः खनृपाः क्रमात् ।
वर्ज्याः संक्रमणेऽर्कादेः प्रायोऽर्कस्यातिनिन्दिताः ॥ ८० ॥

सूर्यके संक्रमसे पूर्वापरकी २२ घटी एवं चन्द्रमाकी २ मंगलकी ९ बुधकी ६ बृहस्पतिकी ८८ शुक्रकी ९ शनिकी १३० घटी संक्रमणकी शुभकार्यमें वर्जित हैं और रविग्रहका जो घटी त्याग कहा है वह अतिनिन्दित है, इसका विशेष विचार संक्रांति प्रकरणमें कह आये हैं ॥ ८० ॥ (अनु०)

पंग्वन्धकाणबधिराख्यलग्नदोषः ।

घस्रे तुलाली बधिरौ मृगाश्वौ रात्रौ च सिंहाजवृषा दिवान्धाः ।
कन्यानृयुक्कर्कटका निशान्धा दिने घटोऽन्त्यो निशि पङ्गुसंज्ञः ॥ ८१ ॥

दिनमें ७ । ८ लग्न बधिर हैं, १० । ९ । रात्रिमें बधिर हैं, ५ । १ । २ दिनमें, ६ । ३ । ४ रात्रिमें अन्धे हैं, ११ दिनमें १२ रात्रिमें पंगु (खोडे) हैं ॥ ८१ ॥ (उ० जा०)

बधिरा धन्वितुलालयोऽपराह्णे मिथुनं कर्कटकोऽङ्गना निशान्धाः ।
दिवसान्धा हरिगोक्रियास्तु कुब्जा मृगकुम्भान्तिमभानि संध्ययोर्हि ॥ ८२॥

९ । ७ । ८ । लग्न (अपराह्ण) दिनके पिछले त्रिभागमें बधिर हैं, ३ । ४ । ६ रात्रिमें अन्धे हैं, ५ । ९ । १ दिनमें अन्धे हैं, १० । ११ । १२ संध्यामें कुब्ज हैं ॥ ८२ ॥ (वसन्तमालिका)

एषां प्रयोजनं सापवादम् ।

दारिद्र्यं बधिरतनौ दिवान्धलग्ने वैधव्यं शिशुमरणं निशान्धलग्ने ।
पङ्ग्वङ्गे निखिलधनानि नाशमीयुः सर्वत्राधिपगुरुदृष्टिभिर्न दोषः॥८३॥

बधिरलग्नोंमें विवाहादि करनेमें दरिद्रता, दिवांध लग्नमें वैधव्य, रात्र्यंधलग्नमें शिशुमरण, पंगुलग्नमें समस्तधननाश होवे. यदि इनपर लग्नेश तथा बृहस्पतिकी दृष्टि हो तो इनका उक्त दोष नहीं है, और भी परिहार है कि-" पङ्ग्वन्धकाणलग्नानि मासशून्याश्च राशयः । गौडमालवयोस्त्याज्या अन्यदेशे न गर्हिताः ॥ " अर्थात् उक्त दोष तथा मासशून्यराशि गौड देश, मालवादेशमें त्याज्य हैं अन्यत्र नहीं ॥ ८३ ॥ (प्रहर्षिणी)

विहितनवांशाः ।

कार्मुकतौलिककन्यायुग्मलवे झषगे वा ।
यर्हि भवेदुपयामस्तर्हि सती खलु कन्या ॥ ८४ ॥

विवाहलग्नमें यदि ९ । ७।८ । ६ । ३ । १२ राशियोंके नवांश हों तो विवाहिता कन्या निश्चयसे पतिव्रता रहे ॥ ८४ ॥ (चित्रपदा)

विहितनवांशे कचिन्निषेधः ।

अन्त्यनवांशे न च परिणेया काचन वर्गोत्तममिह हित्वा ।
नो चरलग्ने चरलवयोगं तौलिमृगस्थे शशभृति कुर्यात् ॥ ८५ ॥

लग्नमें (अंत्य) पिछला नवांशक जैसे मेषलग्नमें धननवांश, वृषमें कन्या न लेना परन्तु वर्गोत्तम हो तो लेना, जो लग्न वहीं नवांशक भी हो उसे वर्गोत्तम कहते हैं, जैसे- ३ । ९ । १२।१० में वर्गोत्तम अंत्यनवांशक ही होता है और तुला मकरका चन्द्रमा हो तो चरलग्नमें चर अंशक न लेना , चन्द्रमा अन्यराशिमें हो तो चरमें चरांश भी लेना ॥८५॥ (श्रीछन्द)

सर्वथा लग्नभङ्गयोगः ।

व्यये शनिः खेऽवनिजस्तृतीये भृगुस्तनौ चन्द्रखला न शस्ताः ॥
लग्नेट्कविग्लौश्च रिपौ मृतौ ग्लौलग्नट् शुभाराश्च मदे च सर्वे ॥ ८६ ॥

विवाहलग्नसे बारहवां शनि, दशम मंगल, तीसरा शुक्र, चन्द्रमा तथा पापग्रह लग्नमें और लग्नेश, शुक्र चन्द्रमा ६ स्थानमें तथा लग्नेश शुक्र, बुध, बृहस्पति, चन्द्रमा, मङ्गल अष्टमस्थानमें शुभ नहीं होते और सप्तम स्थानमें कोई भी ग्रह शुभ नहीं होता, इनमें १२ शनिका फल कन्या मद्यपा, दशम मङ्गलका (शाकिनी) मांस खानेवाली, तीसरे शुक्रका देवररता फल है; औरका वैधव्य तथा मरणरूप फल है. सप्तम शुभग्रहोंके फल यामित्रप्रसंगमें कह आए हैं ॥ ८६ ॥ (उ० जा०)

रेखाप्रदग्रहाः ।

त्र्यायाष्टषट्सु रविकेतुतमोऽर्कपुत्र्यास्त्र्यायारिगः क्षितिसुतो द्विगुणायगोऽब्जः ।
सप्तव्ययाष्टरहितौ ज्ञगुरू सितोऽष्टत्रिद्यूनषड्व्ययगृहान्परिहृत्य शस्तः ॥८७॥

विवाहलग्नसे सूर्य, केतु, राहु, शनि ३ । ११ । ८ । ६ भावोंमें शुभ होते हैं, इनमें ही विंशोपक बल पाते हैं, तथा मङ्गल ३ । ११ । ६ में, चन्द्रमा २ । ३ । ११ में बुध बृहस्पति ७ । १२ । ८ स्थान रहित सभीमें, शुक्र ८ । ३ । ७ । ६ । १२ स्थानोंको छोडके अन्य स्थानोंमें विंशोपक बल पाता है ॥ ८७ ॥ (व० ति०)

कर्तर्यादिमहादोषापवादः ।

पापौ कर्त्तरिकारकौ रिपुगृहे नीचास्तगौ कर्तरीदोषो नैव सितेऽरि-
नीचगृहगे तत्षष्ठदोषोऽपि न । भौमेऽस्ते रिपुनीचगे नहि भवेद्भौमो-
ऽष्टमो दोषकृन्नीचे नीचनवांशके शशिनि रिः फाष्टारिदोषोऽपि न ॥८८॥

कर्तरीकारक पापग्रह यदि शत्रुगृहमें और नीच तथा अस्तंगत हो (तथा उनके बीच कोई शुभग्रह हो) तो लग्न वा सप्तममें कर्तरीका दोष नहीं तथा शुक्र नीच वा शत्रुराशिका हो तो छठे हो तो भी दोष नहीं, मङ्गल यदि नीच राशिका वा अस्तंगत हो वा अष्टम हो तो भी दोष नहीं, और चन्द्रमा नीच राशि वा नीचनवांशका होकर ६ । ८ । १२ स्थानोंमें हो तो भी इसका दोष नहीं ॥ ८८ ॥ (शा०)

विवाहेऽब्ददोषाद्यपवादः ।

अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्षदग्धतिथ्यन्धकाणबधिराङ्गमुखाश्च दोषाः ।
नश्यन्ति विद्गुरुसितेष्विह केन्द्रकोणे तद्वच्च पापविधुयुक्तनवांशदोषाः॥८९॥

अब्ददोष १ अयनदोष २ ऋतुदोष ३ तिथिदोष ४ मासदोष ५ नक्षत्रदोष ६ पक्षदोष ७ दग्धतिथि ८ अन्ध ९ काण १० बधिर ११ पंगु आदि लग्नदोष १२ अकालवृष्ट्यादि १३ इतने दोषलग्नसे केंद्र, (१ ।४। ७ । १०) कोण (९ । ५) में बुध बृहस्पति शुक्रके बलवान् होकर स्थित होनेमें अनिष्ट फल नहीं करते, वैसा ही पापयुत चन्द्रमा वा पापयुत नवांशदोष भी नष्ट हो जाता है ॥ ८९ ॥ (व०)

उक्तानुक्तदोषपरिहारः ।

केन्द्रे कोणे जीव आये रवौ वा लग्ने चन्द्रे वापि वर्गोत्तमे वा ।
सर्वे दोषा नाशमायान्ति चन्द्रे लाभे तद्वद्दुर्मुहूर्तांशदोषाः ॥ ९० ॥

केंद्र (१ । ४ । ७ । १०) कोण (५।९) में बृहस्पति, उपलक्षणसे बुध शुक्र भी तथा ११ में रवि, लग्नसे उपचय (३ । ६ । १० । ११ । में अथवा वर्गोत्तमनवांशमें चन्द्रमा हो तो उक्त समस्त दोष नष्ट होते है, ऐसे ही चन्द्रमा ११ वें भावमें हो तो "रवावर्यमे त्यादि" दुर्मुहूर्त और पापग्रहनवांश दोष भी नष्ट होते हैं ॥ ९० ॥ (शा०)

सामान्येन दोषसहपरिहारः ।

त्रिकोणे केन्द्रे वा मदनरहिते दोषशतकं हरेत्सौम्यः शुक्रो द्विगुणमपि लक्षं सुरगुरुः । भवेदाये केन्द्रेऽङ्गप उत लग्नेशो यदि तदा समूहं दोषाणां दहन इव तूलं शमयति ॥ ९१

बुध विवाहलग्नसे सप्तमरहित केन्द्र (१ ।४।७। १०) कोण (९।५) में हो तो एकसौ दोषोंको हरता है, शुक्र हो तो दोसौ और बृहस्पति एक लक्ष दोष दूर करता है तथा लग्नेश अथवा लग्न नवांशेश आय (११) केन्द्र (१ । ४ ।७। १०) में हों तो दोषोंके समूहको फूंकते हैं, जैसे अग्नि रुईके ढेरको क्षणमात्रमें फूंकती है ॥ ९१ ॥ (शिखरिणी)

लग्नविंशोपकाः ।

द्वौ द्वौ ज्ञभृग्वोः पञ्चेन्दौ रवौ सार्द्धत्रयो गुरौ ।
रामा मन्दागुकेत्वारे सार्द्धैकक विंशोपकाः ॥ ९२ ॥

पहिले जो " व्यायाष्टषट्सु " इत्यादि श्लोकमें ग्रहोंके शुभस्थान कहे हैं उन स्थानोंमें बुध २, शुक्र २, चंद्रमा ५, सूर्य ३ । ३० साढे तीन, बृहस्पति ३, शनि १ । ३०, राहु १ । ३०, केतु १ । ३० विंशोपका बल पाते हैं, यह जिसका जो स्थान शुभ कहा है वह उसीमें पाता है अन्यमें नहीं; सभी ग्रह (बलवान्) अपने उक्त स्थानोंमें हों तो विंशोपका बल २० पाते हैं । उक्त अंकोंका जोड २९ । ३० होता है इसमें रा० के० मेंसे एकका १ । ३० घटता है, यतः एक शुभस्थानमें होगा, दूसरा अशुभमें रहेगा ॥ ९२ ॥ (अनु०)

ग्रहवशेन श्वशुरादिविभागज्ञानम् ।

श्वश्रूः सितोऽर्कः श्वशुरस्तनुस्तनुयामित्रपः स्याद्दयितो मनः शशी ।
एतद्बलं सम्प्रतिभाव्य तान्त्रिकस्तेषां सुखं सम्प्रवदेद्विवाहतः ॥ ९३ ॥

विवाहवाली कन्याका सास शुक्र । श्वशुर सूर्य । लग्न शरीर । सप्तमेश भर्ता । मन चन्द्रमा होता है. (तांत्रिक) ज्योतिषी इन ग्रहोंका बल देखके उनका शुभाशुभ विचारके विवाहलग्न निश्चय करे, जैसे उक्त ग्रह नीच, शत्रु, अस्त, त्रिक आदिमें हों तो उनको अशुभ, उच्चस्वगृहादि (शुभस्थानों) भावोंमें हों तो उनको शुभ जानना ॥ ९३ ॥ उ०)

संकीर्णजातीनां विवाहे विशेषः ।

कृष्णे पक्षे सौरिकुजार्केऽपि वारे वर्ज्ये नक्षत्रे यदि वा स्यात्करपीडा ।
सङ्कीर्णानां तर्हि सुतायुर्धनलाभप्रीतिप्राप्त्यै सा भवतीह स्थितिरेषा ॥ ९४ ॥

कृष्णपक्षमें शनि मङ्गल रविवारमें तथा अनुक्त नक्षत्रोंमें यदि विवाह हो तो वही संकीर्णोंको धन, पुत्र, आयु, लाभ देनेवाला होता है और मित्रताप्राप्ति करता है. इनको उक्त शुभ मुहूर्तादि विपरीत होते हैं, (संकीर्ण) वर्णसंकर तथा चाण्डालोंको कहते हैं ॥ ९४ ॥ (मत्तमयूर)

गान्धर्वादिविवाहे विशेषः ।

गान्धर्वादिविवाहेऽर्काद्वेदनेत्रगुणेन्दवः ।
कुयुगाङ्गाग्निभूरामास्त्रिपयामशुभाःशुभाः ॥ ९५ ॥

गांधर्वादि विवाहमें सूर्यके नक्षत्रसे चन्द्रर्क्षपर्यंत ४ अशुभ २ शुभ ३ अ० १ शु० १ अ० ४ शु० ६ अ० ३ शु० १ अ० ३ शुभ यही चक्रमात्र देखते हैं। पाठान्तर (त्रिपद्यां न) ऐसा भी है अर्थात् त्रिपदी चक्रमें (पहों) सायां लिखनेको भी देखते हैं ॥ ९५ ॥ (अनु०)

विवाहाङ्गकृत्ये दिनशुद्धिः ।

विधोर्बलमवेक्ष्य वा दलनकण्डनं वारकं गृहाङ्गणविभूषणान्यथ च वेदिकामण्डपान् । विवाहविहितोडुभिर्विरचयेत्तथोद्वाहतो न पूर्वमिदमाचरेत्त्रिनवषण्मिते वासरे ॥ ९६ ॥

विवाहाङ्ग कृत्य-गेहूँ, उरद आदिका दलन, चावल छांटना, मंगलकलशस्थापन, वरआंगन सम्भारना, भूषण, शृंगारादि वस्तु, वेदी मण्डप रचना, तोरण वन्दनवार आदि सकलारम्भ चन्द्रमाका बल देखके विवाहोक्त नक्षत्रोंमें करना, परन्तु कार्य दिनके पूर्व ३ । ९ । ६ दिन न करना, यवांकुरार्पण तैललापन (वान) गलगणेशार्चनमें भी यही विचार है ॥ ९६ ॥ (पृथ्वी)

वेदीलक्षणं मण्डपोद्वासनं च ।

हस्तोच्छ्राया वेदहस्तैः समन्तात्तुल्या वेदी सद्मनो वामभागे । युग्मे घस्रे षष्ठहीने च पञ्चसप्ताहे स्यान्मण्डपोद्वासनं सत ॥ ९७ ॥

घरके अग्र बायें ओर आंगनमें कन्याके हाथसे एक हाथ ऊंची तथा चारों ओरसे ४ । ४ हाथ चतुरस्र वेदी स्तभसोपानादियुत करनी, मण्डप उत्तम १६ हाथका होता है, स्थानादि संकटम १२ । १० । ८ भी मध्यम पक्षमें उक्त है. विवाहोत्तर मण्डपका **उद्वासन** छठे छोडकर सम दिन तथा ५ । ७ वें दिनमें करना शुभ है ॥ ९७ ॥ (शा०)

तैलादिलापने नियमः ।

मेषादिराशिजवधूवरयोर्बटोश्च तैलादिलापनविधौ कथितात्र सख्या । शैला दिशः शरदिगक्षनगाक्षबाणबाणाक्षबाणगिरयो विबुधैस्तु कश्चित् ९८

मेषादि राशिवाले वधू, वर तथा बटुके तैलादि लगानेमें मेषादि क्रमसे ७ । १० । ५ । १० । ५ । ७ । ५ । ५ । ५ । ५ । ५ । ७ इस प्रकार दिनसंख्या विद्वानोंने कही है ॥ ९८ ॥ (व० ति०)

वधूवर, बटु	रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	क.	तु	वृ.	ध.	.	कुं.	मी.
	सं.	७	१०	५	१०	५	७	५	५	५	५	५	८

मण्डपादौ स्तम्भनिवेशनम् ।

सूर्येऽङ्गनासिंहघटेषु शैवे स्तम्भोऽलिकोदण्डमृगेषु वायौ
मीनाजकुम्भे निर्ऋतौ विवाहे स्थाप्योऽग्निकोणे वृषयुग्मकर्के ॥ ९९ ॥

मंडपमें प्रथम स्तम्भ निवेशन ६ । ५ । ७ के सूर्यमें ईशान कोणमें, ८ । ९ । १० केमें वायव्य, १२ । १ । ११ । केमें नैऋत्य, २ । ३ । ४ । केमें आग्नेयमें करना यही नियम गृहारम्भमें भी है ॥ ९९ ॥ (इन्द्रवज्रा)

गोधूलीप्रशंसा ।

नास्यामृक्षं न तिथिकरणं नैव लग्नस्य चिन्ता नो वा वारो न च लव-
विधिर्नो मुहूर्त्तस्य चर्चा । नोवा योगो न मृतिभवनं नैव यामित्रदोषो
गोधूलिः सा मुनिभिरुदिता सर्वकार्येषु शस्ता ॥ १०० ॥

गोधूलीमें नक्षत्र तिथि करणकी कुछ अपेक्षा नहीं, लग्नका विचार भी नहीं तथा वार अंशक मुहूर्त्तकी भी चर्चा नहीं, दुष्टयोग, अष्टमशुद्धि, यामित्रदोष कुछ नहीं होता, यह गोधूली मुनियोंने सब कार्योंमें शुभ कही है ॥ १०० ॥ (मं० का०)

गोधूलीभेदाः ।

पिण्डीभूते दिनकृति हेमन्तर्तौ स्यादर्द्धास्ते तपसमये गोधूलिः ।
सम्पूर्णास्ते जलधरमालाकाले त्रेधा योज्या सकलशुभे कार्यादौ ॥१०१॥

उक्त गोधूलीका समय कहते हैं कि (हेमन्त) शीतकाल मार्गशीर्षसे ४ महीने सूर्य जब सायंकालमें नीहारादिरहित किरणशून्य पिण्डाकार हो तथा (तप) उष्णकाल चैत्रसे ४ महीने (अर्द्धास्त) सूर्यबिंब आधा अस्त होनेमें (जलधरमाला) वर्षाकाल श्रावणसे ४ महीने सूर्यके सम्पूर्ण अस्त हुएमें गोधूली होती है, समस्त शुभ कृत्यादिमें गुणदाता है ॥ १०१ ॥ (जलधर माला)

तत्रावश्यवर्ज्यदोषाः ।

अस्तं याते गुरुदिवसे सौरे सार्के लग्नान्मृत्यौ रिपुभवने लग्ने चेन्दौ ।
कन्यानाशस्तनुमदमृत्युस्थे भौमे वोढुर्लाभे धनसहजे चन्द्रे सौख्यम् ॥ १०२ ॥

गोधूलीका और भी प्रकार है कि, गुरुवारके दिन सूर्यास्त होनेपर गोधूली होती है सूर्यास्तके पूर्व आधी घटी अर्द्धयाम होनेसे छोड दिया. शनिवारमें सूर्य दिखते ही हैं क्योंकि सूर्यास्तमें कुलिक हो जायगा तथा सायंकालीन लग्नसे ८ । ६ । १ वा लग्नमें चंद्रमा हो तो

कन्याका नाश होवै । लग्न सप्तम अष्टममें मंगल हो तो वरका नाश होवे, ऐसे मुख्य दोष गोधूलीमें भी वर्जित हैं पंचांगशुद्धि भी मुख्य विचार्य है और ११ । २ । ३ । भावमें चन्द्रमा हो तो सुख देता है, गोधूलीमें हो तो और भी विशेषता है ॥ १०२ ॥ (वैश्वदेवी)

सूर्यस्पष्टगतिः ।

मेषादिगेऽर्केऽष्टशरा नगाक्षाः सप्तेषवः सप्त शरा गजाक्षाः ।
गोऽक्षाः खतर्काः कुरसाः कुतर्काः कङ्गानि षष्टिर्नवपञ्च भुक्तिः ॥ १०३ ॥

मेषादि राशियोंमें सूर्यकी गति स्थूलकालीन है कि, मेषके ५८, वृष० ५७, मि० ५७, क० ५७, सिं० ५८, कन्यामें ५९, तु० ६०, वृ० ६०, ध० ६१, म० ६१, कुं० ६०, मी० ५९ है ॥ १०३ ॥ (इन्द्रव०)

तत्तात्कालिकीकरणम् ।

संक्रान्तियातघस्राद्यैर्गतिर्निघ्नी खषड्हृता ।
लब्धेनांशादिना योज्यं यातर्क्षं स्पष्टभास्करः ॥ १०४ ॥

सूर्य संक्रांतिके यात दिन घटीपलोंसे इष्टदिनादि जितने हों उनसे उक्त स्थूल गतिको गुणा करके ६० से भाग लेना । लब्ध अंशादि क्रमसे लेकर सूर्यकी भुक्तराशि राशिके स्थानमें रखना सूर्य स्पष्ट होता है ॥ १०४ ॥ (अनु०)

इष्टकालिकलग्नानयनम् ।

तनोरिष्टांशकात्पूर्वं नवांशा दशसङ्गुणाः ।
रामाप्ता लब्धमंशाद्यं तनोर्वर्गादिसाधने ॥ १०५ ॥

अभीष्ट लग्नमें जो नवांश निश्चय किया उसके पूर्व जितने नवांश हों उन्हें १० से गुणाकर ३ से भाग लेना । लब्धि यथाक्रम ३ अंक लेके जो हो वह भुक्त लग्न स्पष्ट उस समयका होता है, इसीसे षड्वर्ग साधन करना ॥ १०५ ॥ (अनु०)

अर्काल्लग्नात्सायनाद्भोग्यभुक्तैर्भागैर्निघ्नात्स्वोदयात्खाग्निभक्तात् ।
भोग्यं भुक्तं चान्तरालोदयाढ्यं षष्ट्या भक्तं स्वेष्टनाड्यो भवेयुः ॥ १०६ ॥

सूर्यसायनस्पष्टके राशिभोग्यांशोंसे स्वदेशीय लग्न खंड पलात्मक गुनना ३० से भाग लेना, लब्धि भोग्य पला होती है, एवं भुक्तांशोंसे गुणाकर भुक्तपला मिलती है । इन भुक्तभोग्यपलोंको योग करना, इसमें सायन लग्न तथा सूर्यके अंतराल लग्नोंके पल जोडकर ६० से भाग लेकर सूर्योदयसे इष्टघटी होती हैं ॥ १०६ ॥ (शालि०)

रविलग्नाभ्यामिष्टघटिकानयनम् ।

चेल्लग्नार्कौ सायनावेकराशौ तद्विश्लेषघ्नोदयः खाग्निभक्तः ।
स्वेष्टः कालो लग्नमूनं यदार्काद्रात्रेः शेषोऽर्कात्सषड्भान्निशायाम् ॥१०७॥

यदि सायन लग्न तथा सूर्य एक ही राशिमें हों तो उनके अन्तर्गत अंशोंसे स्वदेशीय लग्नखंड गुनना ३० से भाग लेकर लब्ध उदयसे इष्टकाल होता है । रात्रिके लिये राशिमें ६ जोडके उक्त प्रकारसे करना ॥ १०७ ॥ (शालिनी)

घटिकानयने विशेषः ।

उत्पातान्सह पातदग्धतिथिभिर्दुष्टांश्च योगांस्तथा चन्द्रेज्योशनसाम-
थास्तमयनं तिथ्याः क्षयर्द्धी तथा । गण्डान्तं च सविष्टिसंक्रमदिनं
तन्वंशपास्तं तथा तन्वंशेशविधूनथाष्टरिपुगान्पापस्य वर्गांस्तथा ॥१०८॥

उत्पात-सेंदुकूर० क्रूराक्रांति इत्यादि, महापात, दग्धतिथि दुष्टयोग, चन्द्रमा गुरु शुक्रका अस्त, तिथिकी क्षयवृद्धि, गंडांत ३ प्रकारका, भद्रा, संक्रांतिदिन, लग्नेश अंशेशका अस्त, लग्नेश अंशेश चंद्रमाकी ६ । ८ स्थानमें स्थिति और पापग्रहोंके षड्वर्ग इत्यादि पूर्वोक्त दोष विवाहमें वर्ज्य हैं ॥ १०८ ॥ (शार्दूल०)

विवाहादौ अवश्यवर्ज्याः ।

सेन्दुकूरखगोदयांशमुदयास्ताशुद्धिचण्डायुधान् खार्जूरं दशयोगयोग-
सहितं यामित्रलत्ताव्यधम् । बाणोपग्रहपापकर्तरि तथा तिथ्यर्क्ष-
योगोत्थितं दुष्टं योगमथार्द्धयामकुलिकाद्यान्वारदोषानपि ॥ १०९ ॥
क्रूराक्रान्तविमुक्तभं ग्रहणभं यत्क्रूरगन्तव्यभं त्रेधोत्पातहतं च केतु-
हतभं सन्ध्योदितं भं तथा । तद्वच्च ग्रहभिन्नयुद्धगतभं सर्वानिमान्
सन्त्यजेदुद्वाहे शुभकर्मसु ग्रहकृताँल्लग्नस्य दोषानपि ॥११०॥

इति श्रीदैव० रामवि० मुहूर्त० षष्ठं विवाहप्रकरणम् ॥ ६ ॥

पापयुक्त चन्द्रमा, पापयुक्तलग्न, लग्ननवांश, अस्तोदयशुद्धि, चंडीश, चंडायुध, खार्जूर दशयोग, जामित्री, लत्ता, वेध, बाण, उपग्रह पापकर्तरी, तिथिवारोद्भव (सूर्येशेत्यादि), नक्षत्रवारोत्थ (मृत्यु आदि), तिथिनक्षत्रवारोत्थ (हस्तार्कपञ्चमी०) आदि दुष्ट योग, अर्द्धयाम कुलिकादि अन्य दोष, पापाक्रांत नक्षत्र, पापमुक्त तथा पापगंतव्य नक्षत्र, ग्रहणनक्षत्र,

तीन प्रकारके उत्पातका नक्षत्र, केतूदयनक्षत्र(सन्ध्योदित०)सूर्यसे १४ वां नक्षत्र, ग्रहभिन्न नक्षत्र, युद्धनक्षत्र इतने समस्त दोष तथा ग्रहकृत लग्नके दोष भी विवाहमें तथा सभी शुभ कर्ममें वर्जित हैं ॥ १०९ ॥ ११० ॥ (शार्दू०)

इति श्रीमहीधरकृतायां मुहूर्तचिंतामणिभाषाटीकायां षष्ठं विवाहप्रकरणम् ॥ ६ ॥

अथ वधूप्रवेशप्रकरणम् ७ ।

वधूप्रवेशमुहूर्तः ।

समाद्रिपञ्चाङ्गदिने विवाहाद्वधूप्रवेशोऽष्टदिनान्तराले ।
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमासदिनेऽक्षवर्षात्परतो यथेष्टम् ॥ १ ॥

विवाह करके विवाहिता कन्याका वरके घरमें प्रवेश करनेको वधूप्रवेश कहते हैं यह विवाहसे १६ दिनके भीतर सम २ । ४ । ६ । ८ । १० । १२ । १४ । १६ । दिनमें तथा ५ । ९ । ७ । दिनोंमें करे तो शुभ है । यदि १६ दिनके भीतर न हो तो विषम मास विषम वर्षोंमें उक्त दिनमें करना । यदि ५ वर्ष भी व्यतीत हो जायँ तो सम विषमका नियम नहीं,जब इच्छा हो, शुभ पञ्चाङ्गमें करे ॥ १ ॥ (उ० व०)

वधूप्रवेशे नक्षत्रशुद्धिः ।

ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले ।
वधूप्रवेशः सन्नेष्टो रिक्ताराके बुधे परैः ॥ २ ॥

ध्रुव, क्षिप्र, मृदु, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा, स्वाती नक्षत्र हो तथा रिक्ता ४ । ९ । १४ तिथि, मंगल, सूर्य बुध वार रहित दिनमें वधूप्रवेश शुभ होता है ॥ २ ॥ (अनु०)

विवाहप्रथमाब्दे वध्वाः पित्रादिगृहवासे मासदोषः ।

ज्येष्ठे पतिज्येष्ठमथाधिके पतिं हन्त्यादिमे भर्तृगृहे वधूः शुचौ ।
श्वश्रूं सहस्ये श्वशुरं क्षये तनुं तातं मधौ तातगृहे विवाहतः ॥ ३ ॥
इति मुहूर्तचिन्तामणौ सप्तमं वधूप्रवेशप्रकरणम् ॥ ७ ॥

विवाहसे ऊपर प्रथम ज्येष्ठके महीनेमें वधू भर्ताके घर रहे तो पतिके ज्येष्ठ भाईको मृत्यु दोषहोवे, अधिमासमें पतिको, आषाढमें सासको, पौषमें श्वशुरको, क्षयमासमें अपने शरीरको हरती है तथा विवाहसे प्रथम चैत्रमें पिताके घरमें रहे तो पिता मरे ॥ ३ ॥ (इं० वं०)

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ महीधरकृतभाषाटीकायां सप्तमं वधूप्रवेशप्रकरणम् ॥ ७ ॥

अथ द्विरागमनप्रकरणम् ८।

द्विरागमनमुहूर्तः।

चरेदथौजहायने घटालिमेषगे रवौ रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्य वासरे। नृयुग्ममीनकन्यकातुलावृषे विलग्नके द्विरागमं लघुध्रुवे चरेऽस्रपे मृदूडुनि ॥ १ ॥

वधूप्रवेश करके यदि वधू पिताके घरमें जाकर पुनः पतिके घरमें आवे इसे द्विरागमन कहते हैं। यह विषम १। ३। ५। वर्षमें ११। १। ८ के सूर्यमें विवाहोक्त सूर्यशुद्धि, गुरुशुद्धि हुएमें शुभग्रहोंके वारमें ३। १२। ६। ७। २ इन लग्नोंमें लघु ध्रुव चर मूल मृदु नक्षत्रोंमें करना चाहिये ॥ १ ॥ (पञ्चचामर)

सम्मुखशुक्रदोषः।

दैत्येज्यो ह्यभिमुखदक्षिणे यदि स्याद्गच्छेयुर्नहि शिशुगर्भिणीनवोढाः। बालश्चेद्व्रजति विपद्यते नवोढा चेद्वन्ध्या भवति च गर्भिणी त्वगर्भा ॥२॥

विवाहमें भर्ताके घरमें जानेमें यात्रोक्त शुक्रसम्मुखादि शुद्धि नहीं देखते इस लिये द्विरागमनमें देखना आवश्यक होनेसे शुक्रशुद्धि कहते हैं कि, शुक्र सम्मुख तथा दक्षिण हो तो बालक, गर्भवती नवविवाहिता गमन न करें। इस प्रतिशुक्रमें बालक गमन करे तो विपत्ति (मृत्यु) पावे, नवोढा बांझ होवे, गर्भिणी गर्भ रहित होवे। " अस्तं गते गुरौ शुक्रे सिंहस्थे वा बृहस्पतौ। दीपोत्सवदिने चैव कन्या भर्तृगृहं विशेत् ॥ १ ॥ किसीका मत है कि, गुरु अस्त हो वा शुक्र अस्त हो वा सम्मुख दक्षिण हो वा सिंहस्थ गुरु हो, इन दोषोंमें भी आवश्यकता होनेमें (कन्या) नववधू (दीपोत्सव) दीपमालिकाके (२ दिन प्रथम २ पीछेके) दिनमें भर्ताके घर जावे तो दोष नहीं ॥ २ ॥ (प्रहर्षिणी)

प्रतिशुक्रापवादः।

नगरप्रवेशविषयाद्युपद्रवे करपीडने विबुधतीर्थयात्रयोः। नृपपीडने नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवो भवति दोषकृन्नहि ॥ ३ ॥

परचक्रागम राजविद्रोहादि आदि उपद्रवसे स्वनगरप्रवेशमें किंवा दुर्भिक्षादि दुःखसे अन्यत्र गमनमें तथा विवाहमें एवं नगरकोटयात्रा, देवयात्रा तीर्थयात्रामें राजाके निकालनेमें और नवविवाहिता कन्याके भर्ताके घर प्रवेश करनेमें संमुख दक्षिण शुक्रका दोष नहीं होता ॥ ३ ॥ (मञ्जुभाषिणी)

पित्र्ये गृहे चेत्कुचपुष्पसम्भवः स्त्रीणां न दोषः प्रतिशुक्रसम्भवः ।
भृग्वङ्गिरोवत्सवसिष्ठकश्यपात्रीणां भरद्वाजमुनेः कुले तथा ॥ ४ ॥

इति मुहूर्तचिन्तामणावष्टमं द्विरागमनप्रकरणम् ॥ ८ ॥

यदि कन्याके पिताके ही घरमें (कुच) स्तन उग आवें तथा रजोदर्शन हो जावे तो प्रतिशुक्रा दोष नहीं, उपलक्षणसे सूर्य गुरुशुद्धि भी नहीं । और भृगु अंगिरा वत्स वसिष्ठ कश्यप अत्रि भरद्वाज इन ऋषियोंके वंशमें अर्थात् उक्त गोत्रवालोंको भी प्रतिशुक्रका दोष कभी नहीं है ॥ ४ ॥ (इ० व०)

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ महीधरकृतभाषाटीकायामष्टमं प्रकरणम् ॥ ८ ॥

अथाग्न्याधानप्रकरणम् ९ ।

अग्न्याधानमुहूर्तः ।

स्यादग्निहोत्रविधिरुत्तरगे दिनेशे मिश्रध्रुवान्त्यशशिशाक्रसुरेज्यधिष्ण्ये ।
रिक्तासु नो शशिकुजेज्यभृगौ न नीचे नास्तंगते न विजिते न च शत्रुगेहे ॥ १ ॥

अग्न्याधानमुहूर्त-श्रौत स्मार्त कर्मानुष्ठान अग्निधारणको अग्न्याधान कहते हैं, वह कोई तो विवाहमें, कोई पिता व भाईसे पृथक् रहनेसे करते हैं ॥ सूर्यके उत्तरायणमें तथा मिश्र, ध्रुव रेवती, मृगशिर, ज्येष्ठा, पुष्य नक्षत्रोंमें अग्निहोत्र करना, परन्तु रिक्ता ४ । ९ । १४ । तिथि न लेनी और चंद्रमा मंगल बृहस्पति शुक्र नीच राशिमें अस्तंगत तथा ग्रहयुद्धमें पराजित न हों शत्रुराशियोंमें भी न हों तो अग्न्याधान शुभ होता है ॥ १ ॥ (वसंतति०)

नो कर्कनक्रझषकुम्भनवांशलग्ने नोऽब्जे तनौ रविशशीज्यकुजे त्रिकोणे ।
केन्द्रेऽथवा त्रिभवगेषु परैस्त्रिलाभषट्खस्थितैर्निधनशुद्धियुते विलग्ने ॥ २ ॥

कर्क, मकर, मीन, कुम्भ, लग्न वा नवांशक तथा लग्नका चंद्रमा ये न लेने चाहिये और सूर्य चन्द्र गुरु मंगल त्रिकोण (५।९) में १ । ४ । ७ । १० । ६ । ३ । ११ स्थानोंमें अन्य बु० शु० रा० के० ३ । ११ । ६ । १० स्थानोंमें हों तथा लग्नसे अष्टमभाव ग्रहरहित हो जन्मलग्न जन्मराशि अष्टम लग्न न हो तो उक्त कृत्य शुभ होता है ॥ २ ॥ (व० ति०)

यागकर्तृत्वयोगाः।

चापे जीवे तनुस्थे वा मेषे भौमेऽम्बरे द्युने।
षट्त्र्यायेऽब्जे रवौ वा स्याज्जाताग्निर्यजति ध्रुवम् ॥ ३ ॥
इति मुहूर्तचिन्तामणौ नवममग्न्याधानप्रकरणम् ॥ ९ ॥

उक्त आधानलग्न बृहस्पति सहित धन हो (१) अथवा मंगळ मेषका दशम यद्वा सप्तम हो (२) वा चंद्रमा ३। ६। ११ में हो (३) सूर्य ३। ६। ११ हो (४) इन योगोंमें कोई भी हो तो अग्निहोत्रकर्ता निश्चयसे ज्योतिष्टोमादि यज्ञ करनेवाला होगा ॥३॥ (अनु०)

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ महीधरकृतभाषाटीकायां नवममग्न्याधानप्रकरणम् ॥ ९ ॥

राजाभिषेकप्रकरणम् १०।

राजाभिषेकमुहूर्तः।

राजाभिषेकः शुभ उत्तरायणे गुर्विन्दुशुक्रैरुदितैर्बलान्वितैः।
भौमार्कलग्नेशदशेशजन्मपैर्नो चैत्ररिक्तारनिशामलिम्लुचे ॥ १ ॥

राजाभिषेकमुहूर्त—उत्तरायणमें, बृहस्पति चंद्रमा शुक्रके उदय तथा बलवान् हुएमें मंगल सूर्य लग्नेश दशमेशके बलवान् हुएमें तथा जन्मलग्नेशके भी तत्काल बलवान् हुएमें राजाभिषेक शुभ होता होता है। चैत्रका महीना रिक्ता (४।९।१४) तिथि मंगलवार और मलिनमास वर्जित करना। रात्रिमें भी राजाभिषेक न करना ॥ १ ॥ (इ० व०)

अभिषेकनक्षत्राणि लग्नानि च।

शाक्रश्रवक्षिप्रमृदुध्रुवोडुभिः शीर्षोदये वोपचये शुभे तनौ।
पापैस्त्रिषष्ठायगतैः शुभग्रहैः केन्द्रत्रिकोणायधनत्रिसंस्थैः ॥ २ ॥

ज्येष्ठा श्रवण क्षिप्र मृदु ध्रुव नक्षत्रोंमें शीर्षोदय ३।५।६।७।८।११। लग्नोंमें अथवा जन्मलग्नसे उपचय ३।६।१०।११ लग्नोंमें (शुभग्रह युक्त दृष्टोंमें) अथवा जन्मराशिसे उपचय लग्नोंमें, शुभग्रह केंद्र (१। ४। ७। १० (त्रिकोण (९। ५) तथा ११। २। ३ स्थानोंमें हों, पापग्रह (३। ६। ११) में हों, ऐसे मुहूर्तमें राजाभिषेक शुभ होता है ॥२॥(इन्द्रवंशा)

अभिषेके विशेषः।

पापैस्तनौ रुङ्निधने मृतिः सुते पुत्रार्तिरर्थव्ययगैर्दरिद्रता।
स्यात्खेऽलसो भ्रष्टपदो युनाम्बुगैः सर्वं शुभं केन्द्रगतैः शुभग्रहैः ॥ ३ ॥

लग्नमें पापग्रह हों तो रोग होवे, अष्टम हो तो मृत्यु, पंचम हों तो पुत्रक्लेश, २ । १२ में हों तो धननाश (दारिद्र्य), दशममें हों तो (आलस) निरुद्यमता, ४ । ७ में हों तो ऐश्वर्यसे भ्रष्ट हो जावे (६ । ८ । १२ में चंद्रमा भी मृत्यु देताहै) यदि शुभग्रह केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०) में हों तो सब शुभ होता है ॥ ३ ॥ इन्द्रवंशा)

गुरुर्लग्नकोणे कुजोऽरौ सितः खे स राजा सदा मोदते राजलक्ष्म्या ।
तृतीयायगौ सौरिसूर्यौ खबन्ध्वोर्गुरुश्चेद्धरित्री स्थिरा स्यान्नृपस्य ॥ ४ ॥
इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ दशमं राजाभिषेकप्रकरणम् ॥ १० ॥

बृहस्पति लग्नमें वा त्रिकोणमें हो, मंगल छठा, शुक्र दशम हो तो राजा सर्वदा राज्य लक्ष्मीके भोगसहित प्रसन्न रहे । सूर्य ११, शनि ३ में बृहस्पति १० वा ४ में हो तो राजाकी पृथ्वी (राज्य) स्थिर सर्वदा हस्तगत रहे ॥ ४ ॥ (भु० प्र०)

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ महीधरकृतायां भाषाटीकायां दशमं राजाभिषेकप्रकरणम् ॥ १० ॥

यात्राप्रकरणम् ११ ।

यात्राधिकारिणः ।

यात्रायां प्रविहितजन्मनां नृपाणां दातव्यं दिवसमबुद्धजन्मनां च ।
प्रश्नाद्यैरुदयनिमित्तमूलभूतैर्विज्ञाते ह्यशुभशुभे बुधः प्रदद्यात् ॥ १ ॥

इस प्रकरणमें राजाका ही उपलक्षण है, यह राजा सकल लोकहितकारी होनेसे तथा सर्वजन श्रेष्ठ होनेसे है, मुहूर्तादि तो राजा आदि सभीको हैं. जिन राजाओंका छायाघटिकादियोंके जन्मसमय तत्काल लग्न कुंडलीस्थ शुभाशुभग्रहफलज्ञान है उनको यात्रामुहूर्त देना । जैसे-शुभफल दशा अंतरामें यात्रा करनी, अरिष्टमारकादि समयमें न करनी इत्यादि जातकोंमें लिखा है. जिनका जन्मसमय ज्ञात नहीं है उनको प्रश्न, उपश्रुति, शकुन आदि लक्षणोंसे शुभाशुभ समय जानकर शुभ समयमें यात्राकर देना अशुभ अरिष्टादिमें न देना ॥ १ ॥ (प्रहर्षिणी)

यात्राप्रश्नादेः फलम् ।

जननराशितनू यदि लग्नगे तदधिपौ यदि वा तत एव वा ।
त्रिरिपुखायगृहं यदि वोदयो विजय एव भवेद्वसुधापतेः ॥ २ ॥

१-यात्रा देशांतरगमनको कहते हैं, यह भी २ प्रकारकी है, एक युद्धविजयार्थ दूसरे अन्यकार्यवशात, युद्धमें योग लग्नादिविशेष, अन्यमें पंचांगशुद्धि विशेष हैं ॥

प्रथम प्रश्न है कि, यदि यात्राप्रश्नमें जन्मराशि जन्मलग्न प्रश्नमें हो तो राजाका विजय होगा अथवा उनके स्वामी लग्नमें हों तो भी विजय हो। अथवा जन्मराशिलग्नसे ३। ६। १०। ११ वां प्रश्नलग्न हो तो भी विजय ही होगा ॥ २ ॥ (द्रु०वि०)

रिपुजन्मलग्नभमथाधिपौ तयोस्तत एव वोपचयसद्म चेद्भवेत।
हिबुके घनेऽथ शुभवर्गकस्तनौ यदि मस्तकोदयगृहं तदा जयः ॥ ३ ॥

यदि शत्रुके जन्मराशि जन्मलग्न प्रश्नलग्नसे ४। ७ भावोंमें हो तो राजाकी जय हो, उनके स्वामी भी ऐसे ही जानने, तथा शत्रुके जन्मराशि लग्नसे उपचय ३। ६। ११ राशिप्रश्नलग्नसे ४। ७ में हो तो भी विजय हो प्रश्नलग्नमें शुभग्रहोंका नवांशादि षड्वर्ग हो वा शीर्षोदय राशि लग्नमें हों तो भी विजय हो ॥ ३ ॥ (मं० भा०)

यदि पृच्छितनौ वसुधा रुचिरा शुभवस्तु यदि श्रुतिदशनगम्।
यदि पृच्छति चादरतश्च शुभग्रहदृष्टयुतं चरलग्नमपि ॥ ४ ॥

यदि प्रश्नसमयमें भूमि रमणीय हो तथा (शुभ वस्तु) मांगल्यवस्त्राभरणादि सुनने देखनेमें आवें अथ च पूछनेवाला आदरपूर्वक नम्रतासे पूछे तो राजा (यात्रावाले) का विजय हो और प्रश्नादि लग्न चर १। ४। ७। १० शुभग्रहोंसे युक्त दृष्ट हों तो भी वही फल है ॥ ४ ॥ (त्रोटक)

अशुभफलदः प्रश्नः।

विधुकुजयुतलग्ने सौरिदृष्टेऽथ चन्द्रे मृतिभमदनसंस्थे लग्नगे भास्करेऽपि।
हिबुकनिधनहोराद्यूनगे वापि पापे सपदि भवति भङ्गः प्रश्नकर्तुस्तदानीम् ॥ ५ ॥

प्रश्नलग्नमें यदि चंद्रमा व मंगल हों, शनिकी दृष्टि लग्नपर हो तो प्रश्नकर्ताका (भंग) पराजय होता है तथा चंद्रमा व सूर्य ७। ८ भावमें हो तो भी वही फल है अथवा लग्नमें चंद्रमा ७।८ में सूर्य हो तो भी भंग ही है तथा पापग्रह (४। ८। १। ७) में हों तो भी वही फल होगा ॥ ५ ॥ (मालिनी)

यातृप्रश्नेन दिग्गमने लग्नादि।

त्रिकोणे कुजात्सौरिशुक्रज्ञजीवा यदर्कोऽपि वा नो गमोऽर्काच्छशी वा।
बलीयांस्तु मध्ये तयोर्यो ग्रहः स्यात्स्वकीयां दिशं प्रत्युतासौ नयेच ॥ ६ ॥

जानेवाला कौन दिशा जायगा—मंगलसे त्रिकोण (९।५) में शनि शुक्र बुध बृहस्पति हों अथवा इनमेंसे एक भी हो तो जिस दिशामें जाना चाहता है वहां न जाय

अथवा सूर्यसे ५ । ९ में हों तो अभीष्ट दिशा न जायगा, उक्त प्रतिबंधकर्ता ग्रहोंमेंसे जो बलवान् हो वह अपनी दिशाको ले जायगा ॥ ६ ॥ (मु० प्र०)

प्रश्ने गम्यदिगीशात्खेटः पञ्चमगो यः ।
बोभूयाद्बलयुक्तः स्वामाशां नयतेऽसौ ॥ ७ ॥

दूसरा योग-प्रश्नमें (गम्य) गमनके लिये निश्चित दिशाके स्वामीसे पंचम जो ग्रह है वह बलवान् हो तो गम्य दिशा छुटाकर अपनी दिशाको अवश्य ले जाता है । दिगीश पूर्वादिक्रमसे र० शु० मं० रा० श० चं० बु० बृ० हैं. और भी योग हैं कि शनि मंगल परस्पर सम सप्तम हों अथवा शनिराशिका मंगल, मंगलकी राशिका शनि हो अथवा शुक्र मंगल त्रिकोणमें हों तो इनमेंसे जो बली हो वह गम्य दिशाको छुटाकर अपनी दिशामें ले जाता है ॥ ७ ॥ (मदलेखा)

यात्राकालविचारः ।

धनुर्मेषसिंहेषु यात्रा प्रशस्ता शनिज्ञोशनोराशिगे चैव मध्या ।
रवौ कर्कमीनालिसंस्थेऽतिदीर्घा जनुः पञ्चसप्तत्रितारश्च नेष्टाः ॥ ८ ॥

सूर्यके ९ । १ । ५ राशियोंमें होनेमें यात्रा शुभ होती है तथा १० । ११ । ३ । ६ । २ । ७ राशियोंमें मध्यम, ४ । १२ । ८ । क सूर्यमें दीर्घ यात्रा अशुभ, लघु यात्रा मध्यम होती है. सूर्य ८ प्रहरोंमें ८ ही दिशाओंमें रहता है, यात्रासमयमें सूर्यका पीठकी ओर होना उत्तम होता है, यह प्राच्यसंमत है और यात्रामें जन्म पंचम तृतीय सप्तम तारा भी अशुभ होती है ॥ ८ ॥ (भुजङ्गप्रयात)

न षष्ठी न च द्वादशी नाष्टमी नो सिताद्या तिथिः पूर्णिमामा न रिक्ता ।
हयादित्यमित्रेन्दुजीवान्त्यहस्तश्रवोवासवैरेव यात्रा प्रशस्ता ॥ ९ ॥

षष्ठी द्वादशी अष्टमी शुक्लपक्षप्रतिपदा पूर्णिमा अमावास्या रिक्ता ४ । ९ । १४ तिथि यात्रामें वर्जित हैं, अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा नक्षत्रोंमें यात्रा शुभ होती है तथा शुभ वार शुभ हैं ॥ ९ ॥ (भुजङ्गप्र०)

वारशूल-नक्षत्रशूलौ ।

न पूर्वदिशि शाक्रभे न विधुसौरिवारे तथा न चाजपदभे गुरौ यम-
दिशीनदैत्येज्ययोः । न पाशिदिशि धातृभे कुजबुधेढर्यमर्क्षे तथा न
सौम्यककुभि व्रजेत्स्वजयजीवितार्थी बुधः ॥ १० ॥

दिशाशूल—पूर्वदिशा ज्येष्ठा नक्षत्र शनि सोमवारमें, एवं दक्षिण पूर्वाभाद्रपदा बृहस्पति, पश्चिमदिशा शुक्र रविवार रोहिणी नक्षत्र, उत्तरदिशा मंगल बुधवार भरणी नक्षत्रमें जानेवाला यदि धन एवं शत्रुसे जय और जीवित (आयु) चाहे तो न जावे. इन वार नक्षत्रोंमें इन दिशाओंमें दिशाशूल होता है ॥ १० ॥ (पृथ्वी)

कालशूलः।

पूर्वाह्णे ध्रुवमिश्रभैर्न नृपतेर्यात्रा न मध्याह्नके तीक्ष्णाख्यैरपराह्णके न लघुभैर्नो पूर्वरात्रे तथा। मिश्राख्यैर्न च मध्यरात्रिसमये चोग्रैस्तथा नो चरै रात्र्यन्ते हरिहस्तपुष्यशशिभिः स्यात्सर्वकाले शुभा ॥ ११ ॥

ध्रुव मिश्र नक्षत्रोंमें दिनके पूर्वाह्णमें यात्रा न करना, एवं तीक्ष्ण नक्षत्रोंमें मध्याह्नमें, लघुमें अपराह्णमें, मिश्र नक्षत्रोंमें, पूर्वरात्रिमें, उग्र नक्षत्रोंमें, मध्यरात्रिमें, चर नक्षत्रोंमें, पिछली रात्रिमें यात्रा न करना और श्रवण, हस्त, पुष्य, मृगशिर नक्षत्रोंमें सभी काल आठों प्रहरोंमें यात्रा शुभ होती है ॥ ११ ॥

निषिद्धानां भानां वर्ज्यघटिकाः।

पूर्वाग्निपित्र्यान्तकतारकाणां भूपप्रकृत्युग्रतुरङ्गमाः स्युः।
स्वातीविशाखेन्द्रभुजङ्गमानां नाड्यो निषिद्धा मनुसंमिताश्च ॥ १२ ॥

तीनों पूर्वाओंके पूर्वकी १६ घटी एवं कृत्तिकाकी २१ मघाकी ११ भरणीकी ७ स्वाती विशाखा ज्येष्ठा आश्लेषा चारोंकी १४ घटी आदिकी यात्रामें निषिद्ध हैं और घटी शुभ होती हैं ॥ १२ ॥ (इ० व०)

पूर्वार्द्धमाग्नेयमघानिलानां त्यजेद्धि चित्राहियमोत्तरार्द्धम्।
नृपः समस्तां गमने जयार्थी स्वातीं मघां चोशनसो मतेन ॥ १३ ॥

एवं कृत्तिका मघा स्वातीका पूर्वार्द्ध, चित्रा आश्लेषा भरणीका उत्तरार्द्ध और उशनाका मत है कि, जय चाहनेवाला राजा स्वाती तथा मघा समस्त त्याग करे ॥ १३ ॥ (इ० व०)

तमोभुक्तताराः स्मृता विश्वसंख्याः शुभो जीवपक्षो मृतश्चापि भोग्याः।
तदाक्रान्तभं कर्त्तरीसंज्ञमुक्तं ततोऽक्षेन्दुसंख्यं भवेद् ग्रस्तनाम ॥ १४ ॥

राहु वक्रगति है इसके भुक्त १३ नक्षत्र जीवपक्षसंज्ञक शुभकार्यकारक हैं, भाग्य १३ नक्षत्र मृतपक्षसंज्ञक हैं, जिसमें राहु बैठा है वह कत्तरीसंज्ञक है, उस नक्षत्रसे १५ वां नक्षत्र ग्रस्तसंज्ञक पुच्छ है ॥ १४ ॥ (मु० प्र०)

जीवपक्षादीनां विशेषफलम् ।

मार्तण्डे मृतपक्षगे हिमकरश्चेज्जीवपक्षे शुभा यात्रा स्याद्विपरीतगे क्षयकरी द्वौ जीवपक्षे शुभा । ग्रस्तर्क्षं मृतपक्षतः शुभकरं ग्रस्तात्तथा कर्तरी यायीन्दुः स्थितिमान् रविर्जयकरौ तो द्वौ वयोर्जीवगौ ॥ १५ ॥

सूर्य मृतपक्षमें, चंद्रमा जीवपक्षमें हो तो यात्रा शुभ होती है, (विपरीत) सूर्य जीवपक्षमें और चन्द्रमा मृतपक्षमें हो तो हानिकारक होती है, यदि सूर्य चन्द्रमा दोनों जीवपक्षमें हों तो शुभ, मृतपक्षमें हों तो अशुभ जाननी. मृतपक्ष नक्षत्रोंकी अपेक्षा ग्रस्तनक्षत्र तथा ग्रस्तनक्षत्रकी अपेक्षा कत्तरीनक्षत्र कुछ शुभ है (जैसे मरे हुए मनुष्यसे मरनेको तैयार हो रहा मनुष्य कुछ अच्छा ही है) यहां यही उदाहरण योग्य है. जो राजा अपने किलेमें बैठा है वह स्थायी, जो शत्रुकी ओर जाता है वह यायी संज्ञक है. सूर्य जीवपक्षमें हो तो स्थायीका जय, चन्द्रमा जीवपक्षमें हो तो यायीका जय, यदि सूर्य चन्द्र दोनों जीवपक्षमें हों तो दोनोंका जय अर्थात् मिलाप होगा. सूर्य चन्द्र मृतपक्षमें हों तो दोनोंहीका पराजय अर्थात् दोनों पक्षकी हानि, लाभ किसीका नहीं, तथा सूर्य मृतपक्षमें चन्द्रमा जीवपक्षमें हो तो यायीका जय, चन्द्रमा मृतपक्षमें सूर्य जीवपक्षमें हो तो स्थायीका जय. सूर्य राहुके नक्षत्रमें चन्द्रमा उससे १५ वेंमें हो तो यायीका थोड़ा जय, यदि चन्द्रमा राहुनक्षत्रमें सूर्य उससे १५ वेंमें हो तो स्थायीका स्वल्प जय, दोनों राहुके नक्षत्रमें हों तो दोनोंकाही पराजय (हानि), यदि १५ वेंमें हों तो दोनोंका ही जय (संधि) हो, यह विचार सभी यात्राओंमें है ॥ १५ ॥ (शा० वि)

अकुलकुलाकुलकुलचक्रफलम् ।

स्वात्यन्तकाहिवसुपौष्णकरानुराधादित्यध्रुवाणि विषमास्तिथयोऽकुलाः स्युः । सूर्येन्दुमन्दगुरवश्च कुलाकुला ज्ञो मूलाम्बुपेशविधिभं दशषड्द्वितिथ्यः ॥ १६ ॥ पूर्वाश्वीज्यमघेन्दुकर्णदहनद्वीशेन्द्रचित्रास्तथा शुक्रारौ कुलसंज्ञकाश्च तिथयोऽर्काष्टेन्द्रवेदैर्मिताः । यायी स्यादकुले जयी च समरे स्थायी च तद्वत्कुले सन्धिः स्यादुभयोः कुलाकुलगणे भूमीशयोर्युध्यतोः ॥ १७ ॥

स्वाती भरणी आश्लेषा धनिष्ठा रेवती हस्त अनुराधा पुनर्वसु तीनों उत्तरा रोहिणी नक्षत्र विषम तिथि १ । ३ । ५ । ७ । ९ । ११ । १३ । १५, सूर्य चन्द्रमा शनि बृहस्पतिवार अकुल संज्ञक हैं तथा बुधवार, मूल शततारा आर्द्रा अभिजित् नक्षत्र १० । ६ ।२ तिथि कुलाकुलसंज्ञक हैं, तथा तीनों पूर्वा अश्विनी पुष्य मघा मृगशिर श्रवण कृत्तिका विशाखा ज्येष्ठा चित्रा नक्षत्र, शुक्र, मंगलवार, १२।८।१४।४ तिथि कुलसंज्ञक हैं, अकुलसंज्ञकोंमें युद्धयात्रा हो तो यायीका जय, कुलसंज्ञकोंमें स्थायीका जय, कुलाकुलसंज्ञकोंमें दोनोंका जय (संधि) हो ॥ १६ ॥ १७ ॥ (व० ति०, शार्दू०)

पथि राहुचक्रम्।

स्युर्धर्मे दस्रपुष्योरगवसुजलपद्वीशमैत्राण्यथार्थे
याम्याजाङ्घ्रीन्द्रकर्णादितिपितृपवनोडून्यथो भानि कामे।
वह्न्यार्द्राबुध्न्यचित्रानिर्ऋतिविधिभगाख्यानि मोक्षेऽथ रोहि-
ण्यर्यम्णाप्येन्दुविश्वान्तिमभदिनकरर्क्षाणि पथ्यादिराहौ ॥ १८ ॥

अश्विनी पुष्य आश्लेषा धनिष्ठा शततारा विशाखा अनुराधा इन नक्षत्रोंको धर्म स्थानमें लिखना, तथा भरणी पूर्वाभाद्रपदा ज्येष्ठा श्रवण पुनर्वसु मघा स्वाती अर्थस्थानमें, कृत्तिका आर्द्रा उत्तराभाद्रपदा चित्रा मूल अभिजित् पूर्वाफाल्गुनी कामस्थानमें, एवं रोहिणी उत्तराफाल्गुनी पूर्वाषाढा मृगशिर उत्तराषाढा रेवती हस्त मोक्षमार्गमें स्थापन करना, यह पथिराहुचक्र है ॥ १८ ॥ (स्रग्धरा)

ध.	अ.	पु.	आ.	वि.	अनु.	ध.	श.
अ.	भ.	पु.	म.	स्वा.	ज्ये.	श्र.	पू.
का.	कृ.	आ.	पू. फा.	चि.	मू.	अ.	उ. भा.
मो.	रो.	मृ.	उ. फा.	ह.	पू. षा.	उ. षा.	रे.

राहुचक्रग्रहफलम्।

धर्मगे भास्करे वित्तमोक्षे शशी वित्तगे धर्ममोक्षस्थितिः शस्यते।
कामगे धर्ममोक्षार्थगः शोभनो मोक्षगे केवलं धर्मगः प्रोच्यते ॥ १९ ॥

धर्ममार्गमें सूर्य अर्थमार्ग वा मोक्षमार्गमें चन्द्रमा हो तो शुभ(१), यदि सूर्य धर्ममार्गमें चन्द्रमा धर्म वा मोक्षमार्गमें हो तो भी शुभ (२),अथवा काममार्गमें सूर्य,धर्ममार्गमें वा मोक्षमार्गमें चन्द्रमा हो तो भी शुभ (३), अथवा मोक्षमार्गमें सूर्य, धर्ममार्गमें चन्द्रमा हो तो भी शुभ होता है (४) (विपरीत) जिस मार्गमें सूर्य कहा उसमें चन्द्रमा जिसमें चन्द्रमा कहा उसमें सूर्य हो तो अशुभ जानना। धर्ममार्गमें सूर्य चन्द्रमा भी हों तो समयुद्ध हो परन्तु थोडा यायी जीते, धर्ममें चन्द्रमा हो तो यायीकी जय। धर्ममें सूर्य काममें

चन्द्रमा हो तो बांधवोंके साथ विरोध, धर्ममें सूर्य मोक्षमें चन्द्रमा शुभयुक्त भूमिलाभ करता है । कर्ममें सूर्य, धर्ममें चन्द्रमा शुभयुक्त रत्नलाभ करता है । काममें सूर्य धर्ममें चन्द्रमा शुभयुक्त धनलाभ, सूर्य चन्द्रमा काममें शत्रुयुक्त दुःख देते हैं । काममें सूर्य मोक्षमें चन्द्रमा शुभयुक्त रत्नलाभ, मोक्षमें सूर्य धर्ममें चन्द्रमा शुभयुक्त महालाभ; मोक्षमें सूर्य धनमें चन्द्रमा यात्रा सफल, मोक्षमें सूर्य काममें चन्द्रमा यात्रामें दुःख, सूर्य चन्द्र मोक्षमार्गमें घोर विघ्नकारक । यह पथिराहुचक्र यात्रादि समस्त कार्योमें विचारना ॥ १९ ॥ (स्रग्धरा०) ।

तिथिचक्रं यात्रायाम् ।

पौषे पक्षस्यादिकाद्द्वादशैवं तिथ्यो माघादौ द्वितीयादिकास्ताः ।
कामात्तिस्रः स्युस्तृतीयादिवच्च याने प्राच्यादौ फलं तत्र वक्ष्ये ॥ २० ॥
सौख्यं क्लेशो भीतिरर्थागमश्च शून्यं नैस्स्वं निःस्वता मिश्रता च ।
द्रव्यक्लेशो दुःखमिष्टाप्तिरर्थो लाभः सौख्यं मङ्गलं वित्तलाभः ॥ २१ ॥
लाभो द्रव्याप्तिर्धनं सौख्यमुक्तं भीतिर्लाभो मृत्युरर्थागमश्च ।
लाभः कष्टं द्रव्यलाभः सुखं च कष्टं सौख्यं क्लेशलाभः सुखं च ॥ २२ ॥
सौख्यं लाभः कार्यसिद्धिश्च कष्टं क्लेशः कष्टात्सिद्धिरर्थो धनं च ।
मृत्युर्लाभो द्रव्यलाभश्च शून्यं शून्यं सौख्यं मृत्युरत्यन्तकष्टम् ॥ २३ ॥

तिथिचक्रं यात्रायाम् ।

पौ.	मा.	फा	चै.	वै.	ज्ये	आ	श्र	भा.	आ	का	मा.	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	सौख्य	क्लेश	भीति.	अर्थागम
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	शून्य	नैःस्व्य	निःस्व.	मिश्रता
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	द्रव्यक्लेश	दुःख	इ.प्रा.	अर्थ.
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	लाभ	सौख्य	मंगल	वित्तलाभ
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	लाभ	द्र.प्र.	धनप्रा.	सौख्य.
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	भीति	लाभ	मृत्यु.	अर्थलाभ
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	लाभ		द्र.ला.	सुख
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कष्ट	सौख्य	क्लेश.	सुख
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	सौख्य	लाभ	का.सि	कष्ट
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	क्लेश	कष्ट ०	अर्थसि	धन
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	मृत्यु	लाभ	द्र.ला.	शून्य.
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	शून्य	सौख्य.	मृत्यु.	अतिकष्ट

इन चार श्लोकोंका अर्थ चक्रसे प्रकट होता है । पौष महीनेकी प्रतिपदादि १२ तिथि क्रमसे लिखनी, माघकी द्वितीयादि एवं फाल्गुन ३ चैत्र ४ वैशाख ५ ज्येष्ठ ६ आषाढ ७ श्रावण ८ भाद्रपद ९ आश्विन १० कार्तिक ११ मार्गशीर्षकी १२ से लिखना, त्रयोदशी तृतीयाके तुल्य, चतुर्दशी चतुर्थीके, पंचदशी पंचमीके तुल्य जानना, फल इनके पूर्वादिक्रमसे चक्रमें लिखे हैं वहीं जानने ॥ २०--२३ ॥ (शा०)

तिथ्यृक्षवारयुतिरद्रिगजाग्नितष्टा स्थानत्रयेऽत्र वियति प्रथमेऽतिदुःखी ।
मध्ये धनक्षतिरथो चरमे मृतिः स्यात्स्थानत्रयेऽङ्कयुजि सौख्यजयौ निरुक्तौ ॥

तिथि यहां शुक्लपक्षादि ली जाती हैं, तिथि नक्षत्र वार जोड़के ३ जगह रखना, एक जगह ७ से, दूसरे ८ से भाग लेना, प्रथममें शून्य हो तो यात्री दुःखी हो, दूसरेमें शून्य हो तो धनहानि, तीसरेमें शून्य हो तो मृत्यु हो, यदि तीनों स्थानोंमें अंक हों तो सौख्य तथा जय हो ॥ २४ ॥ (वसन्ततिलका)

आडलभ्रमणदोषौ ।

रवेर्भतोऽब्जभोन्मितिर्नगावशेषिता द्व्यगाः ।
महाडलो न शस्यते त्रिषण्मिताद् भ्रमो भवेत् ॥ २५ ॥

सूर्यनक्षत्रसे चन्द्रनक्षत्रपर्यन्त गिगना जितना हो उसमें ७ से भाग दे । यदि ७ शेष रहें तो महाडलनामा दोष होता है, यह अच्छा नहीं है, यदि ३ । ६ शेष रहे तो भ्रमणनामा दोष अशुभ होता है । इसमें यात्रा न करनी और आडल दोषमें समस्त शुभकृत्य वर्जित हैं ॥ २५ ॥ (प्रमाणिका)

हिम्बराख्ययोगः ।

शशाङ्कभं सूर्यभतोऽत्र गण्यं पक्षादितिथ्या दिनवासरेण ।
युतं नवाप्तं नगशेषकं चेत्स्याद्धिम्बरं तद्गमनेऽतिशस्तम् ॥ २६ ॥

सूर्यनक्षत्रसे चन्द्रमाके नक्षत्रपर्यंत जितने हों उनमें प्रतिपदादि वर्तमान तिथि तथा वार नक्षत्र जोड़ ९ से भाग लेना, ७ शेष रहें तो हिम्बराख्य योग होता है यह अतिशुभ है, ये गुण दोष दाक्षिणात्योंमें प्रसिद्ध हैं ॥ २६ ॥ (उ० जा०)

घातचन्द्रादयः ।

भूपञ्चाङ्कद्व्यङ्गदिग्वह्निसप्तवेदाष्टेशार्काश्च घाताख्यचन्द्रः ।
मेषादीनां राजसेवाविवादे यात्रायुद्धाद्ये च नान्यत्र वर्ज्यः ॥ २७ ॥

घातचन्द्रमा-मेषको मेषका, वृषको कन्याका, मिथुनको ११का, कर्कको ५का, सिंहको १० का, कन्याको ३ का, तुलाको ९ का, वृश्चिकको २ का, धनको १२ का, मकरको ५ का, कुंभको ९ का, मीनको ११ का, चन्द्रमा घात होता है, वह घातसंज्ञक राजसेवा, विवाद, यात्रा एवं युद्धमें वर्ज्य है; अन्य कार्योंमें नहीं ॥ २७ ॥ (शा०)

आग्नेयत्वाष्ट्रजलपपित्र्यवासवरौद्रभे ।
मूलब्राह्माजपादर्क्षे पित्र्यमूलाजभे क्रमात् ॥ २८ ॥
रूपद्व्यग्न्यग्निभूरामद्व्यब्ध्यब्जाब्धियुगाग्नयः ।
घातचन्द्रे धिष्ण्यपादा मेषाद्वर्ज्या मनीषिभिः ॥ २९ ॥

किन्हीं आचार्योंका मत है कि-मेष राशिको सम्पूर्ण मेषमें घात नहीं किन्तु कृत्तिकाका एक चरण घातक है, इसी प्रकार वृषको चित्राका २ चरण, मिथुनको शतभिषाका ३ चरण, कर्कको मघाका ३ चरण, सिंहको धनिष्ठाका एक चरण, कन्याको आर्द्राका ३ चरण, तुलाको मूलका २ चरण, वृश्चिकको रोहिणीका ४ चरण, धनको पूर्वाभाद्रपदाके अन्त्यका १ चरण, मकरको मघाका ४ चरण, कुम्भको मूलका ४ चरण और मीनको पूर्वाभाद्रपदाका ३ चरण, घातक होता है ॥ २८ ॥ २९ ॥ (अनु०)

गोस्त्रीझषे घाततिथिस्तु पूर्णा भद्रा नृयुक्कर्कटकेऽथ नन्दा ।
कौर्प्याजयोन घटे च रिक्ता जया धनुः कुम्भहरौ न शस्ताः ॥ ३० ॥

घाततिथि-वृष कन्या मीन राशियोंको पूर्णा ५ । १० १५ तिथि मिथुन कर्कको भद्रा । २ । ७ । १२ तिथि, वृश्चिक मेषको नन्दा१ । ६ । । ११ तिथि, मकर तुलाको रिक्ता । ४ । ९ । १४ तिथि, धन कुंभ सिंहको जया । ३ । ८ । १३ । घाततिथि होती हैं. यात्रा युद्धमें वर्जित हैं ॥ ३० ॥ (उपजाति)

नक्रे भौमो गोहरिस्त्रीषु मन्दश्चन्द्रो द्वन्द्वेऽर्कोऽजभे ज्ञश्च कर्के ।
शुक्रः कोदण्डालिमीनेषु कुम्भे जूके जीवो घातवारा न शस्ताः॥ ३१ ॥

मकरको मंगल, वृषभको सिंह, कन्याको शनि, मिथुनको चन्द्र, मेषको रवि, कर्कको बुध, धन वृश्चिक मीनको शुक्र, तुला कुंभको बृहस्पति घातवार हैं, यह यात्रा युद्धमें वर्जित हैं ॥ ३१ ॥ (शालिनी)

मघाकरस्वातिमैत्रमूलश्रुत्यम्बुपान्त्यभम् ।
याम्यब्राह्मेशसार्पं च मेषादेर्घातभं न सत् ॥ ३२ ॥

घात नक्षत्र–मेषादि राशियोंके क्रमसे १ को मघा २ हस्त ३ स्वाती ४ अनुराधा ५ मूल ६ श्रवण ७ शततारा ८ रेवती ९ भरणी १० रोहिणी ११ आर्द्रा १२ को आश्लेषा ये घातनक्षत्र हैं, यात्रा युद्धमें वर्जित हैं ॥ ३२ ॥ (अनु०)

भूमिद्वयङ्ग्यद्रिदिक्सूर्याङ्गाष्टाङ्केशाग्निसायकाः ।
मेषादिघातलग्नानि यात्रायां वर्जयेत्सुधीः ॥ ३३ ॥

मेष आदि राशिवालोंको अपनी अपनी राशिसे ये लग्न क्रमसे यात्रामें वर्जित हैं, जैसे–मेषको १, वृषको २, मिथुनको ४, कर्कको ७, सिंहको १०, कन्याको १२, तुलाको ६, वृश्चिकको ८, धनको ९, मकरको ११, कुम्भको ३, मीनको ५ वीं लग्न निषिद्ध है ॥ ३३ ॥ (अनुष्टुप्)

घातचक्रम्.

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
चन्द्र	१	५	९	२	६	१०	३	७	४	८	११	१२
वार	र.	श.	चं.	बु.	श.	श.	बृ.	शु.	शु.	मं.	बृ.	शु.
नक्षत्र	म.	ह.	स्वा	अ.	मू.	श्र.	श.	रे.	भ.	रो.	आ	आ
तिथि	६	४	८	६	१०	८	१२	१०	२	१२	४	२
नक्षत्र	कृ.	चि	श	म	ध.	आ	मू.	रो	पू भा	म.	मू.	पू भा
चरण	१	२	३	३	१	३	२	४	१	४	४	३
लग्न	मे.	मि	क	म.	वृ.	सि	मी	मि	सि	कृ.	मे.	क.

योगिनीवासादिविचारः ।

नवभूम्यः शिववह्नयोऽक्षविश्वेऽर्ककृताः शक्ररसास्तुरङ्गतिथ्यः ।
द्विदिशोऽमावसवश्च पूर्वतः स्युस्तिथयः संमुखवामगा न शस्ताः ॥ ३४ ॥

पूर्वमें ९ । १; आग्नेयमें ११ । ३, दक्षिणमें ५ । १३, नैर्ऋत्यमें १२ । ४, पश्चिममें १४ । ६, वायव्यमें ७ । १५, उत्तरमें २ । १०, ईशानमें ३० । ८ तिथि रहती हैं, इन्हींको योगिनी भी कहते हैं । मनुष्योंको संमुख वाम अशुभ, दक्षिणपृष्ठमें शुभ, पशुओंको वाम पृष्ठ शुभ, संमुख दक्षिण अशुभ यात्रामें होती हैं ॥ ३४ ॥ (वैतालि०)

कालपाशाख्ययोगौ ।

कौबेरीतो वैपरीत्येन कालो वारेऽर्काद्ये संमुखे तस्य पाशः ।
रात्रावेतौ वैपरीत्येन गण्यौ यात्रायुद्धे संमुखे वर्जनीयौ ॥ ३५ ॥

रविवारको उत्तर दिशा काल चं० वायव्य मं० पश्चिम बु० नैर्ऋत्यमें बृ० दक्षिण शु० आग्नेय श० पूर्वमें काल होता है, जिस दिशामें काल हैं उसके संमुख पांचवीं दिशामें पाश होता है, जैसे–शनिको पूर्वमें काल है तो पश्चिममें पाश होगा, रात्रिमें (विपरीत) जिस दिशामें काल उसमें पाश, पाशवालीमें काल जानना, संमुख काल तथा पाश यात्रामें अशुभ होते हैं, दक्षिण शुभ होते हैं, कहा भी है कि, "दक्षिणस्थः शुभः कालः पाशो वामदिशि स्थितः शुभः" इत्यादि । और योगिनी राहुसहित दक्षिण तथा पृष्ठगत हो तो लक्ष शत्रुको मारता है, यह स्वरोदयमें लिखा है कि "दक्षे पृष्ठे योगिनी राहुयुक्ता गच्छेद्युद्धे शत्रुलक्षं निहन्ति" खण्डराहु मासराहु वारराहु यामार्द्धराहु ग्रन्थान्तरोंमें सविस्तर कहे हैं ॥ ३५ ॥ (शालिनी)

कालपाशः ।

र.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	वार
उ.	वा.	प.	नै.	द.	आ.	पू.	काल
द	आ.	पू.	ई.	उ.	वा.	प.	पाश

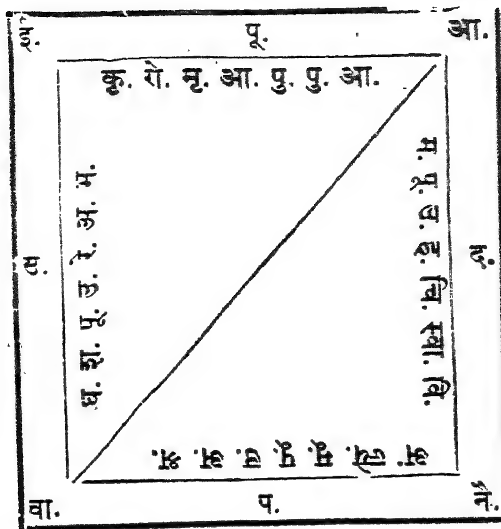
पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु सप्त सप्तानलक्षतः[1] ।
वायव्याग्नेयदिक्संस्थं परिघं न विलङ्घयेत् ॥ ३६ ॥

चतुष्कोण चक्रमें कृत्तिकादि ७ नक्षत्र पूर्वमें, मघादि ७ दक्षिणमें, अनुराधादि ७ पश्चिममें, धनिष्ठादि ७ उत्तरमें, आग्नेय वायव्यकोणगत एक रेखा देनी; यह परिघदंड है, इसका उल्लंघन न करना, जो नक्षत्र जिस दिशामें हैं उनमें उस दिशाकी यात्रा शुभ होती है, पूर्व उत्तरगत नक्षत्रोंमें दक्षिण पश्चिम यात्रा तथा दक्षिण पश्चिमस्थ नक्षत्रोंमें पूर्वोत्तर यात्रा न करनी, इसमें परिघदंडका उल्लंघन होता है ॥ ३६ ॥

---

१ "भानि स्थाप्यान्यग्निधिदिक्षु" इति पीयूषधारासम्मतः पाठः ।

पारिघदंड.



विदिक्षुगमने नक्षत्राणि परिघापवादश्च ।

अग्नेर्दिशं नृप इयात्पुरुहूतदिग्भैरेवं प्रदक्षिणगता विदिशोऽथ कृत्ये । आवश्यकेऽपि परिघं प्रविलङ्घ्य गच्छेच्छूलं विहाय यदि दिक्तनुशुद्धिरस्ति ॥ ३७ ॥

विदिशाओंके लिये कहते हैं कि--पूर्वदिशागमनोक्त नक्षत्रोंमें आग्नेय, दक्षिणोक्तोंमें नैर्ऋत्य, पश्चिमोक्तोंमें वायव्य, उत्तरोक्तोंमें ईशान-यात्रा राजा करे, आवश्यक कृत्यमें परिघ-दंड--उल्लंघन करके भी यात्रा करनी परन्तु वारशूल, नक्षत्रशूल न हों और दिग्लग्नशुद्धि हो, १।५।९ पूर्व, २।६।१० दक्षिण, ३।७।११ पश्चिम, ४।८।१२ उत्तर गत राशि हैं, इनकी " शुद्धि " संमुख दक्षिणादि तथा इनके अंशादिकोंकी भी होनी चाहिये ॥ ३७ ॥ (वसन्ततिलका)

मैत्रार्कपुष्याश्विनभैर्निरुक्ता यात्रा शुभा सर्वदिशासु तज्ज्ञैः ।
वक्री ग्रहः केन्द्रगतोऽस्य वर्गो लग्ने दिनं चास्य गमे निषिद्धम् ॥ ३८ ॥

अनुराधा हस्त पुष्य अश्विनी नक्षत्र दिग्द्वारिकसंज्ञक हैं, ज्योतिष जाननेवाले आचार्योंने इनमें सभी दिशाओंकी यात्रा शुभ कही है. यात्रा लग्नसे वक्री ग्रह केंद्रमें हो तो न लेना तथा वक्री ग्रहका लग्न, नवांशक और वार भी न लेना, यात्रा भंग करता है॥ ३८ ॥ (इन्द्रवज्रा)

अयनशूलः ।

सौम्यायने सूर्यविधूतदोत्तरां प्राचीं व्रजेत्तौ यदि दक्षिणायने ।
प्रत्यग्यमाशां च तयोर्दिवानिशं भिन्नायनत्वेऽथ वधोऽन्यथा भवेत् ॥ ३९॥

जब सूर्य चन्द्रमा उत्तरायणमें हों तो उत्तरपूर्वक दिग्यात्रा शुभ और दक्षिणायनमें हों तो पश्चिम दक्षिणयात्रा शुभ होती है । यदि सूर्य चन्द्रमा भिन्न अयनोंमें हों तो जिस अयनमें सूर्य है उसके उत्तर दक्षिण दिशामें दिनमें, जिस अयनमें चंद्रमा है उसकी उक्त दिशामें रात्रिमें जाना, इससे अन्यथा यात्राकरे तो मरण हो ॥ ३९ ॥ (इ०)

त्रिधा शुक्रसम्मुखता ।

उदेति यस्यां दिशि यत्र याति गोलभ्रमाद्वाथ ककुब्भसङ्घे ।
त्रिधोच्यते संमुख एव शुक्रो यत्रोदितस्तां तु दिशं न यायात् ॥४०॥

मुनियोंने-शुक्र संमुख तीन प्रकारसे कहा है, जिस दिशामें पूर्व पश्चिम उदय होरहा है उस दिशा जानेमें (१) अथवा गोलभ्रमणसे दक्षिणगोल वा उत्तरगोल जहां हो उस दिशामें सम्मुख होता है ॥ २ ॥ अथवा (ककुब्भचक्र) पूर्वादि कृत्तिकादि पूर्वोक्त दिननक्षत्रोंमें जिसमें शुक्र है वह नक्षत्र जहां है उधर संमुख होता है (३) इन ३ प्रकारोंमें उदयवाला प्रकार मुख्य है,जिस दिशामें उदय हो उस दिशामें न जाना । आवश्यकमें सम्मुख शुक्रकी शांति सविस्तर वसिष्ठसंहितामें है, उससे भी असमर्थोंको दीपिकामें दान लिखा है कि- "सितं वस्त्रं सितं छत्रं हेममौक्तिकसंयुतम् । ततो द्विजातये दद्यात्प्रतिशुक्रप्रशान्तये ॥ १ ॥" अर्थात् श्वेतवस्त्र श्वेतच्छत्र सुवर्ण मोती विधिपूर्वक ब्राह्मणको प्रतिशुक्रकी दोषशांतिके लिये दान देवै ॥ ४० ॥ (उपजाति)

तद्वक्रास्तादिदोषः सापवादः ।

वक्रास्तनीचोपगते भृगोः सुते राजा व्रजन् याति वशं हि विद्विषाम् ।
बुधोऽनुकूलो यदि तत्र सञ्चरन् रिपूञ्जयेन्नैव जयः प्रतीन्दुजे ॥ ४१ ॥

शुक्रके वक्र, अस्त, नीचत्वगत हुएमें (तथा युद्धके पराजित हुएमें) राजा जावें तो अवश्य शत्रुके वश (बंधन) में हो जावे, परन्तु यदि शुक्रके वक्रादिमें बुध अनुकूल (पृष्ठ) हो तो शत्रुको जीत लावे,एवं भौम बुध शुक्रके (प्रति) संमुखमें तुल्य फल है॥४१॥(उपजाति)

प्रतिशुक्रापवादः ।

यावच्चन्द्रः पूषभात्कृत्तिकाद्ये पादे शुक्रोऽन्धो न दुष्टोऽग्रदक्षे ।
मध्येमार्गं भार्गवास्तेऽपि राजा तावत्तिष्ठेत्संमुखत्वेऽपि तस्य ॥ ४२ ॥

जब चन्द्रमा रेवतीसे कृत्तिकाके प्रथमचरणपर्यंत रहता है उन दिनों शुक्र अंधा कहाता है इसलिये (दृश्यफल) संमुख दक्षिण होनेको दुष्ट फल नहीं करता और दीर्घ यात्रामें यात्रा करके यदि मार्गमें शुक्र अस्त हो जावे तो उसके उदयपर्यन्त उसी यात्रामें राजा रहै, जब उदय हो तब उसे पृष्ठदिशामें करके यात्रा पूर्ण करे, ऐसे दक्षिण संमुखमें भी है कि, यदि मुहूर्तमें प्रस्थान करके अनंतर सफर पूर्ण न होनेपर ही संमुख दक्षिण शुक्र हो जावे तबलौं उसी सफरमें रहे जबलौं वामपृष्ठ होता है, यदि ऐसे ही मार्गमें बुधास्त हो तो दोष नहीं, परंतु बुध उदय होके संमुख हो जावे तो दोष है, पुनः अस्तपर्यन्त मार्गमें रहे ॥ ४२ ॥ (शालिनी)

अनिष्टलग्नम् ।

कुम्भकुम्भांशकौ त्याज्यौ सर्वदा गमने बुधैः ।
तत्र प्रयातुर्नृपतेरर्थनाशः पदे पदे ॥ ४३ ॥

यात्रामें कुम्भलग्न कुंभांशक जाननेवालोंने सर्वदा त्याग किये हैं, यदि इनमें राजा यात्रा करे तो पद पद चलनेमें धन वा प्रयोजन नाश हों ॥ ४३ ॥ (अनु०)

अथ मीनलग्न उत वा तदंशके चलितस्य वक्रमिह वर्त्म जायते ।
जनिलग्नजन्मभपती शुभग्रहौ भवतस्तदा तदुदये शुभो गमः ॥ ४४ ॥

मीनलग्न मीनांशकमें राजा गमन करे तो मार्गसे लौट आना हो, जन्मलग्नेश, जन्मराशीश शुभग्रह लग्नमें हों तो उस लग्नमें गमन शुभ होता है, जो वे पापग्रह भी हों तथापि गमनलग्नमें शुभ होते हैं और जन्मनक्षत्र जन्मराशि भी यात्रालग्नमें शुभ कही है ॥ ४४ ॥ (मञ्जुभाषिणी)

जन्मराशितनुतोऽष्टमेऽथवा स्वारिभाच्च रिपुभे तनुस्थिते ।
लग्नगास्तदधिपा यदाथवा स्युर्गतं हि नृपतेर्मृतिप्रदम् ॥ ४५ ॥

जन्मराशि जन्मलग्नसे अष्टम राशि लग्नमें तथा स्वकीय शत्रुकी जन्मराशि जन्मसे छठी राशि यात्रालग्नम हो अथवा अपने जन्मराशिलग्नसे अष्टममें शत्रुकी जन्मराशि लग्नोंसे छठे उनके स्वामी यात्रालग्नमें हों तो यात्रामें राजाकी मृत्यु हो, ग्रन्थान्तरोंमें जन्मराशि लग्नसे व्ययराशि भी अशुभ कही हैं ॥ ४५ ॥ (रथोद्धता)

लग्ने चन्द्रे वापि वर्गोत्तमस्थे यात्रा प्रोक्ता वाञ्छितार्थकदात्री ।
अम्भोराशौ वा तदंशे प्रशस्तं नौकायानं सर्वसिद्धिप्रदायि ॥ ४६ ॥

मीन कुम्भको छोड़कर लग्न वर्गोत्तममें हो अथवा चन्द्रमा वर्गोत्तममें हो तो यात्रा मनोवांछित देनेवाली होती है। जलचरराशि लग्नमें हो अथवा जलचर जन्मराशि

लग्नोंसे छठे उनके स्वामी यात्रालग्नमें हों तो यात्रामें राजाकी मृत्यु हो ग्रन्थांतरोंमें जन्मराशि लग्नसे व्ययराशि भी अशुभ कही है ॥ ४६ ॥ (शालिनी)

दिग्द्वारभे लग्नगते प्रशस्ता यात्रार्थदात्री जयकारिणी च ।
हानिं विनाशं रिपुतो भयं च कुर्यात्तथादिक्प्रतिलोमलग्ने ॥ ४७ ॥

दिग्द्वारलग्नोंमें यात्रा शुभ धन एवं जय करती है, दिग्द्वार १ । ५ । ९ पूर्व, २ । ६ । १० दक्षिण, ३ । ७ । ११ पश्चिम, ४ । ८ । १२ उत्तरके हैं, जो प्रतिलोमलग्न जैसे १ । ५ । ९ । पश्चिम, ४ । ८ । १२ दक्षिण इत्यादि हों तो हानि धननाश वा शत्रुसे भय हो ॥ ४७ ॥ (इन्द्रवज्रा)

शुभलग्नानि ।

राशिः स्वजन्मसमये शुभसंयुतो यो यः स्वारिभान्निधनगोऽपि च वेशिसंज्ञः ।
लग्नोपगः स गमने जयदोऽथ भूपयोगैर्गमो विजयदो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥४८॥

यात्रीके जन्मसमयमें जो राशि शुभग्रहोंसे युक्त हो वह यात्रालग्नमें जय देती है । अथवा शत्रुके राशिलग्नसे अष्टमराशि यात्रालग्नमें हो तथा जो राशि (वेशि) सूर्यराशिसे दूसरी राशि यात्राके लग्नमें हो तो विजय देती है । अथवा जातकोक्त राजयोग यात्रामें हो तो वह यात्रा जय देनेवाली मुनियोंने कही है ॥ ४८ ॥ (व० ति०)

दिक्स्वामिनः ।

सूर्यः सितो भूमिसुतोऽथ राहुः शनिः शशी ज्ञश्च बृहस्पतिश्च ।
प्राच्यादितो दिक्षु विदिक्षु चापि दिशामधीशाः क्रमतः प्रदिष्टाः ॥४९॥

क्रमसे दिशा विदिशाओंके स्वामी कहते हैं कि,पूर्वका सूर्य, आग्नेयका शुक्र,दक्षिणकामंगल, नैर्ऋत्यका राहु, पश्चिमका शनि, वायव्यका चन्द्रमा, उत्तरका बुध, ईशानका बृहस्पति दिगीश हैं ॥ ४९ ॥ (उपजाति)

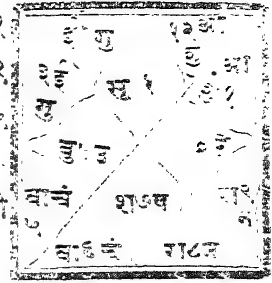
दिगीशप्रयोजनम् ।

केन्द्रे दिगधीशे गच्छेदवनीशः लालाटिनि तस्मिन्नेयादरिसेनाम् ॥ ५० ॥

दिगीश यात्रालग्नसे केंद्रमें हो तो राजा यात्रा करे परंतु उस दिगधीशपर लालाटिक (वक्ष्यमाण) हो तो शत्रुसेनामें न जावे ॥ ५० ॥ (तनुमध्या)

लालाटिको योगः ।

प्राच्यादौ तरणिस्तनौ भृगसुतो लाभव्यये भूसुतः कर्मस्थोऽथ तमो
नवाष्टमगृहे सौरिस्तथा सप्तमे । चन्द्रः शत्रुगृहात्मजेऽपि च बुधः
पातालगो गीष्पतिर्वित्तभ्रातृगृहे विलग्नसदनाल्लालाटिकाः कीर्तिताः ॥५१॥



लग्नके सूर्यमें पूर्वको लालाटिक तथा शुक्रके ११ । १२ भावमें होनेसे आग्नेयको और दशम मंगल दक्षिणको. ८ । ९ भावमें राहु नैर्ऋत्यको, शनि सप्तम पश्चिमको, चन्द्रमा ६ । ५ में वायव्यको, बुध चतुर्थ उत्तरको, बृहस्पति ३ । २ में ईशानको लालाटिक योग होता है. लालाटिक दिक्स्वामीको छोड़के यात्रा करनी ॥ ५१ ॥ (शार्दूल०)

पर्युषितयात्रायोगचतुष्टयम् ।

मृगे गत्वा शिवे स्थित्वादितौ गच्छञ्जयेद्रिपून् ।
मैत्रे प्रस्थाय शाक्रे हि स्थित्वा मूले व्रजंस्तथा ॥ ५२ ॥
प्रस्थाय हस्तेऽनिलतक्षधिष्ण्ये स्थित्वा जयार्थी प्रवसेद्द्विदैवे ।
वस्वन्त्यपुष्ये निजसीम्नि चैकरात्रोषितः क्ष्मां लभतेऽवनीशः ॥५३॥

मृगशिरमें अपने घरसे दूसरे घरमें जाकर आर्द्रामें वहीं रहे तब पुनर्वसुमें ग्रामसे बाहर गमन करे तो शत्रुको जीतता है (१) अनुराधामें प्रस्थान; ज्येष्ठामें स्थिति मूलमें गमन (२) हस्तमें प्रस्थान; चित्रा स्वातीमें स्थित रहकर विशाखामें गमन (३) ये तीन योग जय देनेवाले हैं तथा धनिष्ठा रेवती पुष्यमें चलकर अपने नगरके अन्त्यमें एक रात्रि रहकर आगे जावे तो राजा शत्रुसे भूमि जीते ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ (अनु० तथा इन्द्रवज्रा)

समयबलम् ।

उषःकालो विना पूर्वां गोधूलिः पश्चिमां विना ।
विनोत्तरां निशीथः सन् याने याम्यां विनाभिजित् ॥ ५४ ॥

उषःकालमें पूर्व, गोधूलिमें पश्चिम, अर्द्धरात्रिमें उत्तर, मध्याह्नमें दक्षिण यात्रा न करना । प्रयोजन यह है कि, सूर्य ८ दिशाओंमें आठों प्रहरोंमें रहता है वह सम्मुख न होना चाहिये ॥ ५४ ॥ (अनु०)

लग्नादिभावानां संज्ञा ।

लग्नाद्भावाः क्रमाद्देहकोशधानुष्कवाहनम् ।
मन्त्रोऽरिर्मार्ग आयुश्च हृद्व्यापारागमव्ययाः ॥ ५५ ॥

क्रमसे १२ भावोंके नाम-देह १ कोश (धन) २ धानुष्क ३ वाहन ४ मन्त्र ५ अरि ६ मार्ग ७ आयु ८ हृदय ९ व्यापार १० आगम ११ व्यय १२ भावोंकी संज्ञा ये हैं इनमें शुभयोग दृष्टिसे शुभफल यथासंज्ञकोंको होता है ॥ ५५ ॥ (अनु०)

यात्रालग्ने लग्नादिद्वादशभावस्थितग्रहफलम् ।

केन्द्रे कोणे सौम्यखेटाः शुभाः स्युर्याने पापास्त्र्यायषट्खेषु चन्द्रः ।
नेष्टो लग्नान्त्यारिरंध्रे शनिःखेऽस्ते शुक्रो लग्नेड्नगान्त्यारिरन्ध्रे ॥५६॥

शुभग्रह केन्द्र (१ । ४ । ७ । १०) कोण (५।९) में, पापग्रह ३।११।६।१० में, चन्द्रमा १ । १२ । ६ । ८ रहित स्थानमें. शनि १० रहित भावोंमें, शुक्र ७ रहित भावोंमें शुभ फल देते हैं. अन्योंमें अशुभ फल यात्रामें देते हैं तथा लग्नेश ७ । १२ ६ । ८ भावोंमें मृत्यु फल देता है. प्रत्येक ग्रहोंके फल भावचक्रमें हैं ॥ ५६ ॥ (शा०)

योगयात्राविचारः ।

योगात्सिद्धिर्धरणिपतीनामृक्षगुणैरपि भूदेवानाम् ।
चौराणां शुभशकुनैरुक्ता भवति मुहूर्तादपि मनुजानाम् ॥ ५७ ॥

राजाओंके यात्रालग्नसे वक्ष्यमाण सहित योगोंसे तिथ्यादि अयोग्य हुएमें भी सिद्धि होती है, ब्राह्मणोंको (नक्षत्रगुण) चन्द्रताराबलादिसे, चौरोंको केवल शुभाशुभ शकुनसे ही तथा शिवालिखितसे भी, अन्य जनोंको (मुहूर्त) शिवालिखित तथा उद्वेगादि वेलाओंमें सिद्धि होती है. यहां ब्राह्मण द्विजातिके अर्थमें है यह पद ब्राह्मणोंसे क्षत्रिय वैश्य तीनोंका बोधक है तथा जिनको जो सिद्धिद (जैसे राजाओंको योग) कहे हैं इनमें भी दिक्शूलादि मुख्य दोष भद्रा रिक्ता आदि पंचांगदोष विचार सर्वथा मुख्य ही है ॥ ५७ ॥ (पादाकुलकम्)

यात्रालग्नवशाद्ग्रहभावफलचक्रम्.

भा.	सूर्य	चंद्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	राहु केतु
१	अनेककष्ट	अनेककष्ट	अनेककष्ट	सुख	सुख	सुख	अने. कष्ट	क्षुधादिरोग
२	धनहानि	प्रियसंग	मृत्यु	धर्मादिलाभ	पुत्रलाभ	धर्मादिलाभ	बंधन	उत्पात
३	धन	आयु	जय	लाभ	कीर्ति	सौख्य	लाभ	लाभ
४	दुःख	वृद्धि	दुःख	लाभ	शत्रुनाश	भोग	हानि	क्षय
५	भय	शुभ	भय	सिद्धि	अर्थसिद्धि	शत्रुनाश	सिद्धि	भय
६	लाभ	हानि	लाभ	शत्रुहानि	सिद्धि	धनहानि	शत्रुहानि	जय
७	नाश	सुख	नाश	मित्रागम	स्त्रीलाभ	नाश	नाश	नाश
८	शत्रुवृद्धि	शत्रुवृद्धि	भय	नैरुज्य	रक्षा	अर्थसिद्धि	भय	शत्रुवृद्धि
९	अशुभ	शुभ	अशुभ	धनश्री	श्री (धनम)	अतिसौख्य	उपद्रव	उपद्रव
१०	जय	पुष्टि	राज्य	कामद	शुभ	राज्यलक्ष्मी	दीर्घरोग	वैरापनोद
११	जय	जय	जय	लाभ	कीर्ति	शत्रुक्षय	विजय	सौख्य
१२	कष्ट	शत्रुवृद्धि	मृत्यु	धनहानि	धनहानि	धनहानि	मृत्यु	कष्ट

सहजे रविर्दशमभे शशी तथा शनिमङ्गलौ रिपुगृहे सितः सुते ।
हिबुके बुधो गुरुरपीह लग्नगः स जयत्यरीन् प्रचलितोऽचिरान्नृपः ॥५८॥

यात्रायोग लग्न–तीसरा सूर्य, दशम चन्द्रमा, छठे शनि मंगल, पंचम शुक्र, चतुर्थ बुध, लग्नमें बृहस्पति हों ऐसे योगमें राजा यात्रा करे तो थोड़े ही समयमें शत्रुको जीतता है ॥ ५८ ॥ (मञ्जु०)

भ्रातरि सौरिर्भूमिसुतो वैरिणि लग्ने देवगुरुः ।
आयगतेऽर्के शत्रुजयश्चेदनुकूलो दैत्यगुरुः ॥ ५९ ॥

तीसरा शनि, छठा मंगल, लग्नमें बृहस्पति, ग्यारहवां सूर्य हो ऐसे योगमें यदि शुक्र अनुकूल (पृष्ठगत) हो तो यात्री शत्रुको जीते ॥ ५९ ॥ (गाथा)

तनौ जीव इन्दुमृतौ वैरिगोऽर्कः । प्रयातो महीन्द्रो जयत्येव शत्रून् ॥ ६०॥

लग्नमें बृहस्पति, आठवां चंद्रमा, छठा सूर्य हो तो राजा सभीको जीते ॥ ६० ॥ (गाथा)

लग्नगतः स्याद्देवपुरोधाः । लाभधनस्थैः शेषनभोगैः ॥ ६१ ॥

यात्रालग्नमें बृहस्पति हो, अन्य ग्रह ११ । २ मे हों तो राजाका विजय होवे ॥ ॥ ६१ ॥ (सुप्रतिष्ठायां पङ्क्तिश्छन्दः)

द्यूने चन्द्रे समुदयगेऽर्के जीवे शुक्रे विदि धनसंस्थे ।
ईदृग्योगे चलति नरेशो जेता शत्रून् गरुड इवाहीन् ॥ ६२ ॥

सप्तमस्थानमें चन्द्रमा, लग्नमें सूर्य और बृहस्पति बुध शुक्र दूसरे भावमें हों इस प्रकारके योगमें राजा चले तो सर्पोंको गरुड जैसा वैसा राजा शत्रुओंको जीते ॥ ॥ ६२ ॥ (पङ्क्तौ मत्ता)

वित्तगतः शशिपुत्रो भ्रातरि वासरनाथः
लग्नगतो भृगुसुतः स्युः शलभा इव सर्वे ॥ ६३ ॥

बुध धनस्थानमें सूर्य तीसरा, शुक्र लग्नमें हो ऐसे योगमें राजा यात्रा करे तो उसके शत्रु (शलभ) टीड़ी जैसे आपही उडकर अग्निमें भस्म हो जाते हैं ऐसे उडजावें युद्ध भी न करना पडे ॥ ६३ ॥ (अनु० चित्रपदा)

उदये रविर्यदि सौरिररिगः शशी दशमेऽपि ।
वसुधापतिर्यदि याति रिपुवाहिनी वशमेति ॥ ६४ ॥

लग्नमें सूर्य, छठा शनि, दशम चन्द्रमा हो ऐसे योगमें राजा गमन करे तो शत्रुसेनाको अपने वशमें कर लेवे ॥ ६४ ॥ (गाथा)

तनौ शनिकुजौ रविर्दशममे बुधो भृगुसुतोऽपि लाभदशमे ।
त्रिलाभरिपुमेषु भूसुतशनी गुरुज्ञभृगुजास्तथा बलयुताः ॥ ६५॥

लग्नमें-शनि मंगल, दशम सूर्य, १० । ११ में बुध शुक्र हो ३ । ११ । ६ इन स्थानोंमें मंगल शनि हों और यत्रकुत्र स्थित बृहस्पति बुध शुक्र बलयुत हों ऐसे योगोंमें राजा यात्रा करे तो विजय होवे ॥ ६५ (जगत्यां जलोद्धतगतिः)

समुदयगे त्रिबुधगुरौ मदनगते हिमकिरणे ।
हिबुकगतौ बुधभृगुजौ सहजगताः खलखचराः ॥ ६६ ॥

लग्नमें बृहस्पति, सप्तममें चंद्रमा, चतुर्थ बुध शुक्र, तीसरे पापग्रह हों ऐसे योगमें राजा यात्रा करे तो विजय होवे ॥ ६६ ॥ (गाथा)

त्रिदशगुरुस्तनुगो मदने हिमकिरणो रविरायगतः ।
सितशशिजावपि कर्मगतौ रविसुतभूमिसुतौ सहजे ॥ ६७ ॥

लग्नमें बृहस्पति, सप्तम चन्द्रमा, ११ में सूर्य, १० बुध शुक्र, तीसरे शनि मङ्गल हों ऐसे योगमें भी वही फल है ॥ ६७ ॥ (त्रिष्टुभ्, सुमुखी)

देवगुरौ वा शशिनि तनुस्थे वासरनाथे रिपुभवनस्थे ।
पञ्चमगेहे हिमकरपुत्रः कर्मणि सौरिः सुहृदि सितश्च ॥ ६८ ॥

बृहस्पति अथवा चन्द्रमा लग्नमें, सूर्य छठा, बुध पञ्चम, शनि दशम, शुक्र चतुर्थ हो ऐसे योगमें यात्रा करनेवाले राजाकी जय होवे ॥ ६८ ॥ (श्रीछंदः)

हिमकिरणसुतो बली चेत्तनौ त्रिदशपतिगुरुर्हि केन्द्रस्थितः ।
व्ययगृहसहजारिधर्मस्थितो यदि च भवति निर्बलश्चन्द्रमाः ॥ ६९ ॥

बलवान् बुध लग्नमें, बृहस्पति केन्द्रमें तथा बलरहित चन्द्रमा १२ । ३ । ६ । ९ में हो तो इस योगका भी यात्रामें पूर्वोक्त ही फल है ॥ ६९ ॥ (ज० प्रमुदितवदना)

अशुभखगैरनवाष्टमदस्थैर्हिबुकसहोदरलाभगृहस्थः ।
कविरिह केन्द्रगगीष्पतिदृष्टो वसुचयलाभकरः खलु योगः ॥ ७० ॥

पापग्रह ९।८।७ रहित स्थानोंमें; शुक्र ४।३।११ में हो इसे केन्द्रस्थ बृहस्पति देखे ऐसे योगमें राजा यात्रा करे तो धनका समूह एवं विजय भी मिले॥७०॥ (अभिनवतामरसा)

रिपुलग्नकर्महिबुके शशिजे परिवीक्षिते शुभनभोगमनैः।
व्ययलग्नमन्मथगृहेषु जयः परिवर्जितेष्वशुभनामवरैः॥ ७१ ॥

बुध ६।१।१०।४में शुभ ग्रहोंसे दृष्ट हो १२।१।७ भावोंसे रहित स्थानोंमें पापग्रह हों ऐसे योगमें राजा यात्रा करे तो विजय पावे ॥ ७१ ॥ (जगत्यां प्रमिताक्षरा)

लग्ने यदि जीवः पापा यदि लाभे कर्मण्यपि वा चेद्राज्याधिगमः स्यात्।
द्यूने बुधशुक्रौ चन्द्रो हिबुके वा तद्वत्फलमुक्तं सर्वैर्मुनिवर्यैः॥ ७२ ॥

लग्नमें बृहस्पति अथवा ११।१० में पापग्रह हों तो राज्य मिले तथा ७ में बुध शुक्र. ४ में चन्द्रमा हो तो मुनियोंने वही फल कहा है ॥ ७२ ॥ (ज० मणिमाला)

रिपुतनुनिधने शुक्रजीवेन्दवो ह्यथ बुधभृगुजौ तुर्यगेहस्थितौ।
मदनभवनगश्चन्द्रमा वाम्बुगः शशिसुतभृगुजान्तर्गतश्चन्द्रमाः॥ ७३ ॥

छठां शुक्र, लग्नमें बृहस्पति, अष्टम चन्द्रमा हो तो यात्री राजाकी जय होवे अथवा बुध शुक्र चतुर्थमें चन्द्रमा सप्तम हो तो वही फल है तथा चतुर्थ चन्द्रमा बुध शुक्रके बीच हो तो भी वही फल है ॥ ७३ ॥ (अतिजगत्यां चन्द्रिका)

सितजीवभौमबुधभानुतनूजास्तनुमन्मथारिहिबुकत्रिगृहे चेत्।
क्रमतोऽरिसोदरखशात्रवहोराहिबुकायगैर्गुरुदिनेऽखिलखेटैः॥ ७४ ॥

लग्नमें शुक्र, सप्तममें बृहस्पति, छठा मंगल, चौथा बुध, तीसरा शनि यात्रालग्नसे हो तो यात्री राजाका विजय होवे, बृहस्पतिके दिनमें सूर्य छठा चन्द्रमा ३ में मंगल १० में बुध ६ में बृहस्पति १ में शुक्र ४ में शनि ११ में हों तो भी वही फल है ॥ ७४ ॥ (गाथा)

सहजे कुजो निधनगश्च भार्गवो मदने बुधो रविररौ तनौ गुरुः।
अथ चेत्स्युरीज्यसितभानवो जलत्रिगता हि सौरिरुधिरौ रिपुस्थितौ॥७५॥

तीसरा मङ्गल ८ में शुक्र ७ बुध ६ सूर्य लग्नमें बृहस्पति हो तो यात्री विजय पावे। अथवा बृहस्पति शुक्र सूर्य चतुर्थ तृतीयमें यथावकाश हों शनि मंगल छठे हों तो भी वही फल ॥ ७५ ॥ (अतिजगत्यां मञ्जुभाषिणी)

एको ज्ञेज्यसितेषु पञ्चमतपःकेन्द्रेषु योगास्तथा
द्वौ चेत्तेष्वधियोग एषु सकला योगाधियोगः स्मृतः ।
योगे क्षेममथाधियोगगमने क्षेमं रिपूणां वधं
चाथो क्षेमयशोऽवनीश्च लभते योगाधियोगे व्रजन् ॥ ७६ ॥

पंचम नवम (५।९) केन्द्रो (१ । ४ । ७ । १०) में बुध बृहस्पति शुक्रमें से एक हो तो योग. तथा दो हों तो अधियोग, तीनों हों तो योगाधियोग होता है. यात्रालग्नसे योग हो तो क्षेम, अधियोग हो तो क्षेम तथा शत्रुवध हो और योगाधियोग हो तो यात्री राजा शत्रुको मारकर राज्य पावे । उक्त ३ ग्रहोंके केन्द्रकोणोंमें पृथक् संख्या नाभसयोगोंके सदृश १०८ भेद है ॥ ७६ ॥ अतिधृत्यां शार्दूलविक्रीडित)

विजयादशमीमुहूर्त्तः ।

इषमासि सितादशमी विजया शुभकर्मसु सिद्धिकरी कथिता ।
श्रवणर्क्षयुता सुतरां शुभदा नृपतेस्तु गमे जयसन्धिकरी ॥ ७७ ॥

आश्विनमासकी शुक्लदशमी विजयासंज्ञक है । यह समस्त शुभ कार्योंमें सिद्धि करनेवाली है, श्रवण नक्षत्र भी इसमें हो तो अतिशय शुभ फल देती है, राजाकी यात्रामें वह विजय तथा (सन्धि) मिलाप करती है । अथवा 'सिद्धिकरी' भी पाठ है, कार्यसिद्धि करती है ॥ ७७ ॥ (ज० ता०)

चेतोनिमित्तशकुनैरतिसुप्रशस्तैर्ज्ञात्वा विलग्नबलमुर्व्यधिपः प्रयाति ।
सिद्धिर्भवेदथ पुनः शकुनादितोऽपि चेतोविशुद्धिरधिका न च तां विनेयात् ॥ ७८ ॥

चित्तकी प्रसन्नता, शुभ शकुन, (निमित्त) अंगस्फुरणादिकोंका शुभविचार जानके तथा लग्नबल देखके यदि राजा यात्राकरे तो कार्यसिद्धि होवे, अशुभ शकुन निमित्त लग्न तथा चित्तकी अप्रसन्नतामें मरण व धनहानि होती है, शकुनादिकोंसे भी चित्तकी शुद्धि प्रबल है, विना चित्तकी शुद्धि श्रद्धा व प्रसन्नताके शुभलक्षणोंमें भी न जावे ॥ ७८ ॥ (व० तिलका)

यात्रायामवश्यनिषिद्धनिमित्तानि ।

व्रतबन्धनदेवताप्रतिष्ठाकरपीडोत्सवसूतकासमाप्तौ ।
न कदापि चलेदकालविद्युद्घनवर्षातुहिनेऽपि सप्तरात्रम् ॥ ७९ ॥

व्रतबन्ध, देवप्रतिष्ठा, विवाह, होलिकादि उत्सव, दोनों प्रकारका सूतक इतने कामोंमें इनकी स्वतन्त्रोक्त अवधि पूरी हुए विना यात्रा न करनी, तथा विना समय बिजली वा वज्र, मेघगर्जन वर्षा (नीहार) बर्फ पड़े तो सात रात्रिपर्यंत यात्रा न करनी, समयोंपर इनका दोष नहीं ॥ ७९ ॥ (विषमे वसन्तमालिका)

एकदिनसाध्यगमनप्रवेशविशेषः ।

महीपतेरेकदिने पुरात्पुरे यदा भवेतां गमनप्रवेशकौ ।
भवारशूलप्रतिशुक्रयोगिनीर्विचारयेन्नैव कदापि पण्डितः ॥ ८० ॥

यदि राजाका एक नगरसे दूसरे नगरमें जाना व प्रवेश एक ही दिन होवे तो यथावकाश पञ्चांगशुद्धिमात्र देखनी चाहिये. नक्षत्रशुल, वारशूल, प्रतिशुक्र, योगिनी इतने दोष पण्डित न विचारे, यदि गमनदिनसे अन्य दिनमें गम्यस्थानमें प्रवेश हो तो उक्त सभी विचारना ॥ ८० ॥ (वंशस्थ०)

यद्येकस्मिन्दिवसे महीपतेर्निर्गमप्रवेशौ स्तः ।
तर्हि विचार्य्यः सुधिया प्रवेशकालो न यात्रिकस्तत्र ॥ ८१ ॥

यदि राजाका एक ही दिनमें (निर्गम प्रवेश) घरमें उठकर अभीष्ट स्थानमें प्रवेश हो तो बुद्धिमान् प्रवेशोक्त मुहूर्त देखे, यात्रोदित मुहूर्त न विचारे ॥ ८१ ॥ (आर्या)

प्रयाणे नवमदिनदोषः ।

प्रवेशान्निर्गमं तस्मात्प्रवेशं नवमे तिथौ ।
नक्षत्रेऽपि तथा वारे नैव कुर्यात् कदाचन ॥ ८२ ॥

गृहप्रवेशसे नवम तिथि नक्षत्र वारमें पुनर्गमन वा गमनसे पुनः प्रवेश न करना चाहिये । ग्रथांतरोंमें नवम मास वर्षमें भी न करना कहा है ॥ ८२ ॥ (आर्या)

यात्रादिनियमविधिः ।

अग्निं हुत्वा देवतां पूजयित्वा नत्वा विप्रानर्चयित्वा दिगीशम् ।
दत्त्वा दानं ब्राह्मणेभ्यो दिगीशं ध्यात्वा चित्ते भूमिपालोऽधिगच्छेत् ॥ ८३ ॥

राजा होम करके इष्टदेवताको पूजके ब्राह्मणोंको नमस्कार करके जिस दिशामें जाना है उसके स्वामीको पूजके अनेक प्रकार दान ब्राह्मणोंको देके दिगीशको मनसे ध्यान करके यात्रा करे ॥ ८३ ॥ (शालिनी)

नक्षत्रादिदोहदः ।

कुल्माषांस्तिलतण्डुलानपि तथा माषांश्च गव्यं दधि त्वाज्यं दुग्धमयैण-

मांसमपं तस्यैव रक्तं तथा । तद्वत्पायसमेव चाषपललं मार्गं च शाशं
तथा षाष्टिक्यं च प्रियङ्ग्वपूपमथवा चित्राण्डजान्सत्फलम् ॥ ८४ ॥
कौर्मं सारिकगौधिकं च पललं शाल्यं हविष्यं हया-
द्वक्षे स्यात्कृसरान्नमुद्गमपि वा पिष्टं यवानां तथा ।
मत्स्यान्नं खलु चित्रितान्नमथवा दग्धान्नमेवं क्रमाद्
भक्ष्याभक्ष्यमिदं विचार्य मतिमान् भक्षेत्तथालोकयेत् ॥ ८५ ॥

अश्विन्यादि नक्षत्रोंके दोहद कहते हैं-अश्विनीमें उरद चावल, एवं २ में तिल चावल ३ में उरद, ४ में गौका दही, ५में गौका घी, ६ में दूध, ७ में हरिणका मांस ८ में हरिणका रुधिर, ९ में पायस, १० में चाषपक्षीका मांस, ११ में मृगमांस, १२ में शशेका मांस, १३ में (साठी) धान, १४ में (प्रियंगु) कांगनी, १५ में पकान्न १६ में (चित्रपक्षी) तीतर, १७ में उत्तम फल, १८ में कछुएका मांस, १९ में (सारिका) मैनाका मांस, २० में गोधाका मांस, २१ में (शाल्य) शोलेका मांस, २२ में (हविष्य) मुद्गादि, २३ में खिचरी, २४ में (मुद्गान्न) मूंगकी खिचरी, २५ में जौका सतुवा, २६ में मच्छी मांस सहित भात, २७ में अनेक पकान्न, २८ में दही भात, इन वस्तुओंको देश कुल आचारके अनुसार खाना वा देखना सूंघना वा स्पर्श करना इस कृत्यसे नक्षत्रोक्त दोष नहीं होता ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ (शा०)

आज्यं तिलौदनं मत्स्यं पयश्चापि यथाक्रमम् ।
भक्षयेद्दोहदं दिश्यमाशां पूर्वां कां व्रजेत् ॥ ८६ ॥

दिशाओंके दोहद पूर्वदिशा जानेमें घी, दक्षिण जानेमें तिलमिश्रित भात, पश्चिम जानेमें मछली, उत्तर जानेमें दूध खाकर जाना, इससे कोई भी दुष्ट फल नहीं होता ॥ ८६ ॥ (अनुष्टुप्)

रसालां पायसं काञ्जीं श्रृतं दुग्धं तथा दधि ।
पयोऽश्रृतं तिलान्नं च भक्षयेद्वारदोहदम् ॥ ८७ ॥

वारदोह-रविवारको शिखरण चन्द्रको पायस, मंगलको कांजिक, बुधको गर्म किया दूध, गुरुको दही, शुक्रको कच्चा दूध, शनिको तिलौदन खायके गमन करना ॥ ८७ ॥ (अनुष्टुप्)

पक्षादितोऽर्कदलतण्डुलवारिसर्पिःश्राणाहविष्यमपि हेमजलं त्वपूपम् ।
भुक्त्वा व्रजेद्रुचकमम्बु च धेनुमूत्रं यावान्नपायसगुडानसृगन्नमुद्गान् ॥८८॥

तिथिदोहद–१ प्रतिपदाको आकके पत्र, २ को चावलोंका धोवन, ३ को घी, ४ को यवागू, ५ को हविष्यान्न, ६ को सोनेका धोवन, ७ को पुआ, ८ को बिजौरा फल, ९ को जल, १० को गोमूत्र, ११ को जौ, १२ को पायस, १३ को गुड़, १४ को रुधिर, १५ को मुद्गान्न खाके यात्रा करना ॥ ८८ ॥ (वसन्त०)

गमनसमयविधिः ।

उद्धृत्य प्रथमत एव दक्षिणाङ्घ्रिं द्वात्रिंशत्पदमभिगम्य दिश्ययानम् ।
आरोहेत्तिलघृतहेमताम्रपात्रं दत्त्वाऽऽर्घ्यं गणकवराय च प्रगच्छेत् ॥ ८९ ॥

राजा यात्रा समयमें प्रथम दाहिना पैर उठाके ३२ पैर पैदल चले, फिर वक्ष्यमाण सवारीमें आरोहण करै, उस समय ज्योतिषीको तिल, घी, सुवर्ण, तांबेका पात्र दान दे, यथाशक्ति भूयसी दक्षिणा देके गमन करे ॥ ८९ ॥ (प्रहर्षिणी)

दिश्ययानानि ।

प्राच्यां गच्छेद्गजेनैव दक्षिणस्यां रथेन च ।
दिशि प्रतीच्यामश्वेन तथोदीच्यां नरैर्नृपः ॥ ९० ॥

पूर्वदिशाकी यात्रामें हाथी, दक्षिणको रथ, पश्चिमको घोडा, उत्तरको मनुष्योंकी सवारीमें जाना ॥ ९० ॥ (अनुष्टुप्)

प्रस्थानविचारः ।

देवगृहाद्वा गुरुसदनाद्वा स्वगृहान्मुख्यकलत्रगृहाद्वा ।
प्राश्य हविष्यं विप्रानुमतः पश्यञ्छृण्वन्मङ्गलमेयात् ॥ ९१ ॥

यात्रासमयमें देवताका पूजन गृहसे अथवा गुरुस्थानसे अथवा अपने शयनस्थान (आवास) से अथवा बहुत स्त्री संभवमें मुख्य स्त्री (पटरानी) के घरसे (हविष्य) यज्ञभाग हवनांतमें प्राशन करके (ब्राह्मणके अनुमत) ब्राह्मण 'इदं विष्णु०' इत्यादि मन्त्रसे प्रथम पैर उठाकर जानेकी आज्ञा देता है तथा मंगलशब्द गीत वाद्य कलशादि सुनता देखता गमन करे ॥ ९१ ॥ (पादाकुल०)

कार्याद्यैरिह गमनस्य चेद्विलम्बो भूदेवादिभिरुपवीतमायुधं वा ।
क्षौद्रं चामलफलमाशु चालनीयं सर्वेषां भवति यदेव हृत्प्रियं वा ॥९२॥

यात्रामुहूर्तमें यदि कार्यवशात् गमनमें विलम्ब हो तो ब्राह्मण यज्ञोपवीत, क्षत्रिय शस्त्र, वैश्य मधु, शूद्र नारिकेलादि फल तत्कालमें चलाय दे. इसे प्रस्थान कहते हैं, अथवा सभी अपने मनके प्रिय वस्तु प्रस्थान करे ॥ ९२ ॥ (प्रहर्षिणी)

गेहाद्गेहान्तरमपि गमस्तर्हि यात्रेति गर्गः
सीम्नः सीमान्तरमपि भृगुर्बाणविक्षेपमात्रम् ।
प्रस्थानं स्यादिति कथयतेऽथो भरद्वाज एवं
यात्रा कार्या बहिरपि पुरात्स्याद्वासिष्ठो ब्रवीति ॥ ९३ ॥

प्रस्थानका परिमाण कहते हैं कि अपने घरसे समीपवर्ती घरमें भी जानेको गर्गाचार्यने यात्रा कही है, तथा अपनी सीमा (सरहद) से दूसरी सीमामें भृगुने कही है तथा बड़े जोरसे फेंका हुआ बाण जितनी दूर जाता है उतने पर्यंत भरद्वाजने कही है, तथा नगरसे बाहर ही यात्रा प्रस्थान करना वसिष्ठजीने कहा है, सभी ठीक है ॥ ९३ ॥ (मन्दाक्रान्ता)

प्रस्थानमत्र धनुषां हि शतानि पञ्च केचिच्छतद्वयमुशन्ति दशैव चान्ये ।
सम्प्रस्थितो य इह मन्दिरतःप्रयातो गन्तव्यदिक्षु तदपि प्रयतेन कार्यम्॥९४॥

प्रस्थानको अन्य कोई (५०० धनुष) २००० हाथ अपने घरसे कहते हैं, कोई(२०० धनुष) ८०० हाथ कहते हैं; कोई १० ही धनुष कहते हैं, इससे कार्यवश समीप दूर मानना. प्रस्थान--गन्तव्यदिशाकी ओर स्वयं प्रस्थान रखना उत्तम है, तदशक्तिमें वस्तुप्रस्थान है; गमनमें प्रथम दिन थोड़ा, दूसरे दिन कुछ अधिक एवं क्रमसे दीर्घ यात्रामें गमन करना॥९४॥ (वसन्ततिलका)

प्रस्थाने भूमिपालो दशदिवसमभिव्याप्य नैकत्र तिष्ठेत्
सामन्तः सप्तरात्रं तदितरमनुजः पञ्चरात्रं तथैव ।
ऊर्ध्वं गच्छेच्छुभाहेऽप्यथ गमनदिनात्सप्तरात्राणि पूर्वं
चाशक्तौ तद्दिनेऽसौ रिपुविजयमना मैथुनं नैव कुर्यात् ॥ ९५ ॥

राजा प्रस्थान करके दश दिन एक जगह बैठा न रहे नहीं तो पुनः यात्रामुहूर्त पूर्ववत् करना पड़ता है, ऐसे ही (माण्डलिक) थोड़े गांवोंका स्वामी ७ दिन, इससे इतर ब्राह्मण आदि ५ दिन एकत्र न रहे, दैववशात् उक्त अवधि व्यतीत हो जाय तो पुनः घर आके शुभ मुहूर्तमें यात्राकरे और यात्राकेदिनसे सात रात्रि पूर्व स्त्रीसङ्ग न करे यदि स्त्रीके ऋतुस्नातादि विषयसे ७ रात्रि पूर्व बन्द न रह सके तो एक दिन पूर्व तो भी स्त्रीसंग न करे॥९५॥(स्रग्धरा)

यात्राकर्तुर्नियमाः ।

दुग्धं त्याज्यं पूर्वमेव त्रिरात्रं क्षौरं त्याज्यं पञ्चरात्रं च पूर्वम् ।
क्षौरं तैलं वासरेऽस्मिन्वमिश्च त्याज्यं यत्नाद्भूमिपालेन नूनम् ॥ ९६ ॥

यात्रार्थी राजा यात्रादिनसे ३ रात्रि पूर्व दूध न पीवे तथा पांच रात्रि पूर्व (क्षौर) मुण्डन श्मश्रुकर्म न करे और उस दिन शहद न खाय, तैलाभ्यंग न करे, शरीर शोधनार्थ औषधि-प्रयोगसे वमन भी न करे, इतने वस्तु यत्नसे निश्चय वर्जित करे ॥ ९६ ॥

भुक्त्वा गच्छति यदि चतैलगुडक्षारपक्वमांसानि ।
विनिवर्त्तते स रुग्णः स्त्रीद्विजमवमान्य गच्छतो मरणम् ॥ ९७ ॥

यदि यात्री तैलपक्व पदार्थ गुड और दोहदसे अन्य प्रकार क्षार तथा पका मांस खाके गमन करे तो (रोगी) बीमार होके लौट आवै, यदि स्त्री तथा ब्राह्मणका भर्त्सन ताडनादिसे अपमान करके जावे तो इस यात्रामें मृत्यु हो, मृत्यु ८ प्रकारकी होती है; केवल शरीर छोडना ही नहीं ॥ ९७ ॥ (गीतिः)

अकालवृष्टिदोषः ।

यदि मासु चतुर्षु पौषमासादिषु वृष्टिर्हि भवेदकालवृष्टिः ।
पशुमर्त्यपदाङ्किता न यावद्वसुधा स्यान्नहि तावदेव दोषः ॥ ९८ ॥

पौषादि ४ महीने चैत्रपर्यंत यदि वृष्टि हो तो पर्वतातिरिक्त देशोंमें अकालवृष्टि कहाती है अथवा जिस देशमें जो समय वर्षाका नहीं उसमें यदि वर्षा हो तो यात्रादोष है परन्तु वर्षा पड़नेसे पशु तथा मनुष्योंके पैरोंका चिह्न पृथिवीमें न पड़े इतनी वर्षाका दोष नहीं, जब चरणचिह्न पडने योग्य हो तो दोष है ॥ ९८ ॥ (वसन्तमाला)

अल्पायां वृष्टौ दोषोऽल्पो भूयस्यां दोषो भूयान् जीमूतानां निर्घोषे
वृष्टौ वा जातायां भूपः । सूर्येन्द्वोर्बिम्बे सौवर्णे कृत्वा विप्रेभ्यो दद्याद्
दुश्शाकुन्ये साज्यस्वर्णं दत्त्वा गच्छेत्स्वेच्छाभिः ॥ ९९ ॥

अल्पवृष्टि अकालमें हो तो दोष भी अल्प है, बहुत वर्षामें बहुत दोष होता है यात्रा न करनी, यदि प्रस्थान कियेमें वर्षा हो तो दोष नहीं । गर्जनसहित वर्षाका भी यात्री राजाको दोष है । इतने दोषोंमें भी यदि आवश्यक यात्रा हो तो सुवर्णके सूर्य चन्द्रमाके बिंब दान करके ब्राह्मणोंको देवे । यदि यात्रासमयमें दुःशकुन हो तो घी सुवर्ण दान करके स्वेच्छासे गमन करे ॥ ९९ ॥ (अतिशक्करी, गाथा)

शकुनविचारः ।

विप्राश्वेभफलान्नदुग्धदधिगोसिद्धार्थपद्माम्बरं वेश्यावाद्यमयूरचाष-
नकुला बद्धैकपश्वामिषम् । सद्वाक्यं कुसुमेक्षुपूर्णकलशच्छत्राणि
मृत्कन्यकारत्नोष्णीषसितोक्षमद्यससुतस्त्रीदीप्तवैश्वानराः ॥ १०० ॥

आदर्शाञ्जनधौतवस्त्ररजका मीनाज्यसिंहासनं शावं रोदनवर्जितं
ध्वजमधुच्छागास्त्रगोरोचनम् । भारद्वाजनृयानवेदनिनदा माङ्गल्य-
गीताङ्कुशा दृष्टाः सत्फलदाः प्रयाणसमये रिक्तो घटः स्वानुगः ॥१०१॥

यात्रा समयमें बहुत ब्राह्मण घोडा हाथी जो उन्मत्त न हो, फल अन्न दूध दही गौ स्त्री श्वेत सरसों कमल निर्मल वस्त्र वेश्या बाजे मृदंग आदि मोर चाष नेवला रस्सीसे बँधा हुआ एक पशु चौपाया (वृष) बैल, मांस अच्छे वाक्य फल (ईख) पौंडा गन्ना पूर्ण कलश छत्री गीली मिट्टी कन्या रत्न पगडी श्वेतवृषभ मद्य पुत्रसहित स्त्री दीप्त अग्नि दर्पण सुर्मा धोया वस्त्र धोबी मछली घी सिंहासन (प्रेत) जिसके साथी रोते न हों, पताका शहद बकरा अस्त्र धनुषादि गोरोचन भरद्वाजपक्षी सुखासन वेदध्वनि मंगलगीत गायन अंकुश इतने वस्तु यात्राके समयमें यात्रीके सम्मुख शुभ होते हैं तथा खाली घट पीछेसे, परन्तु जो भरनेको जाता हो वह भी शुभ होता है ॥ १०० ॥ १०१ ॥ (शार्दूल०)

वन्ध्याचर्मतुषास्थिसर्पलवणाङ्गारेन्धनक्लीबविट्तैलोन्मत्तवसौषधारि-
जटिलप्रव्राट्तृणव्याधिताः । नग्नाभ्यक्तविमुक्तकेशपतितव्यङ्गक्षुधार्ता
असृक् स्त्रीपुष्पं सरटः स्वगेहदहनं मार्जारयुद्धं क्षुतम् ॥ १०२ ॥
काषायी गुडतक्रपङ्कविधवाकुब्जाः कुटुम्बे कलिर्वस्त्रादेः स्खलनं
लुलायसमरं कृष्णानि धान्यानि च । कार्पासं वमनं च गर्दभरवो दक्षे-
ऽतिरुड्गाभणीमुण्डार्द्राम्बरदुर्वचोऽन्धबधिरोदक्या न दृष्टाःशुभाः ॥१०३॥

वांझ स्त्री चर्म अन्नकी भूसी हड्डी सर्प निमक निधूम अग्नि (काष्ठ) जलानेकी लकडी हिजडा विष्ठा तेल (उन्मत्त) बावला चर्बी औषध शत्रु जटावाला संन्यासी घास व्याधिमान् नङ्गा तैलाभ्यंगवाला खुले केशवाला मद्यादिसे बेहोश पडा हुआ अंगहीन भूख रुधिर स्त्रियोंका ऋतुकुसुम कृकलास पक्षी अपने घरमें आग लगना, बिल्लियोंका युद्ध छिंका भगवाँ वस्त्रवाला गुड (तक्र) छाछ कर्दम विधवा स्त्री कुब्ज कुटुम्बमें कलह वस्त्र छत्रादिकोंका अकस्मात् गिरना भैंसाओंका युद्ध, कृष्णधान्य, माष आदि कपास वमन दाहिने गदहेका शब्द बडा क्रोध गर्भवती स्त्री मुण्डा हुआ गीले वस्त्रवाला दुष्टबचन अन्धा बहरा रजस्वला स्त्री इतने वस्तु यात्रीको यात्रासमयमें अशुभ हैं ॥ १०२ ॥ १०३ ॥ (शार्दूलवि०)

गोधाजाहकसूकराहिशशकानां कीर्तनं शोभनं नो शब्दो न विलोकनं

च कपिऋक्षाणामतो व्यत्ययः । नद्युत्तारभयप्रवेशसमरे नष्टार्थसंवीक्षणे
व्यत्यस्ताः शकुना नृपेक्षणविधौ यात्रोदिताः शोभनाः ॥ १०४ ॥

गोहा (जाहक) गात्रसंकोचन करनेवाला एक जीव, शूकर, सर्प, शशा इनका नाम लेना सुनना यात्रासमयमें शुभ और इनका शब्द सुनना इनका देखना अशुभ होता है और वानर तथा उल्लूका उलटे जैसे इनका नाम लेना अशुभ, देखना सुनना शब्द शुभ, नदी उतरनेमें भयसम्बन्धी कार्यमें भागनेमें गृहप्रवेशमें संग्राममें नष्टवस्तुके ढूंढनेमें पूर्वोक्त शुभ शकुन अपशकुन और अशुभ शुभ जानना । राजाके दर्शनार्थ भी यात्रोक्त शुभ शकुन शुभ, अशुभ शकुन अशुभ होते हैं ॥ १०४ ॥ (शार्दू०)

वामाङ्गे कोकिला पल्ली पोतकी सूकरी रला ।
पिङ्गला छुच्छुकाः श्रेष्ठाः शिवापुरुषसंज्ञिताः ॥ १०५ ॥

कोकिला छिपकली कबूतरी सूकरी रलापक्षी (मैना) (पिंगला) भैरवी छुछुन्दरी स्यारिन नरसंज्ञक कपोत खञ्जन तित्तिरी हंस आदि गमनवालेके बांये और शुभ होते हैं ॥ १०५ ॥ (अनु०)

छिक्करः पिक्को भासः श्रीकण्ठो वानरो रुरुः ।
श्रीसंज्ञकः काकऋक्षश्वानः स्युर्दक्षिणाः शुभाः ॥ १०६ ॥

छिक्करमृग पिक्कपक्षी भासपक्षी श्रीकण्ठपक्षी वानर रुरुमृग इतने स्त्रीसंज्ञक और कौवा ऋक्ष कुत्ता इतने यात्रीके दाहिने ओर शुभ होते हैं ॥ १०६ ॥ (अ०)

प्रदक्षिणगता श्रेष्ठा यात्रायां मृगपक्षिणः ।
ओजा मृगा व्रजन्तोऽतिधन्यो वामे खरस्वनः ॥ १०७ ॥

रुरुरहित मृगपक्षी यात्रामें प्रदक्षिणा करके जावे तो शुभ, परंतु विषम संख्याके मृग देखने अति ही शुभ होते हैं, ऐसे ही बांये ओर गदहेका शब्द भी धन्य हैं ॥ १०७ ॥ (अनु)

आद्येऽपशकुने स्थित्वा प्राणानेकादश व्रजेत् ।
द्वितीये षोडश प्राणांस्तृतीये न क्वचिद्व्रजेत् ॥ १०८ ॥

यात्रामें पहिला अपशकुन हो तो ११ (प्राण) श्वास बाहर भीतर जावे आने पर्यंत ठहरके पुनः शुभ शकुन देखकर जावे, दूसरा भी अपशकुन हो तो १६ प्राण ठहरना, तीसरा भी हो जावे तो नहीं जाना चाहिये ॥ १०८ ॥ (अनु०)

यात्रानिवृत्तौ शुभदं प्रवेशनं मृदुध्रुवैः क्षिप्रचरैः पुनर्गमः ।
द्वीशेऽनले दारुणभे तथोग्रभे स्त्रीगेहपुत्रात्मविनाशनं क्रमात् ॥ १०९ ॥

प्रवेश- नववधूप्रवेश सुपूर्व, अपूर्व, द्वंद्वाभय ४ प्रचारके हैं, यहां सुपूर्व संज्ञक है यह मृदु ध्रुव नक्षत्रोंमें करना, क्षिप्र चर नक्षत्रोंमें प्रवेश करे तो पुनः गमन होवे और विशाखामें स्त्रीनाश, कृत्तिकामें अग्न्यादिसे गृहनाश, दारुण नक्षत्रोंमें पुत्र नाश, उग्र नक्षत्रोंमें अपना नाश होवे ॥ १०९ ॥ (जगत्यां उपजातिः)

अयनर्क्षमासतिथिकालवासरोद्भवशूलसंमुखसितज्ञदिक्कपाः ।
भृगुवक्रतादिपरिघाख्यदण्डको युवतीरजोऽप्यशुचितोत्सवादिकम् ॥११०॥
मृतपक्षरिक्तरवितर्कसंख्यकास्तिथयश्च सौरिरविभौमवासराः ।
अपि वामपृष्ठगविधुस्तथाऽडलो वसुपञ्चकाभिजिदथापि दक्षिणे ॥१११॥
लग्ने जन्मर्क्षतन्वोमतिगृहमहितर्क्षाच्च षष्ठं तदीशा वा लग्ने कुम्भमीनर्क्ष-
नवलवतनू चापि पृष्ठोदयं च । पृष्ठाशामृक्षसंस्थं दशमशनिरथो सप्तमे
चापि काव्यःकेन्द्रे वक्राश्च वक्रिग्रहदिवसविवाहोक्तदोषाश्च नेष्टाः ॥११२॥

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ एकादशं यात्राप्रकरणम् ॥ ११॥

दोषसमुच्चय- अयनशूल 'सौम्यायने सूर्य' इत्यादि । (मासशूल २ प्रकार) वृषादि ३ । ३ राशियोंके शूलमें पूर्वादिशूल १, कार्तिकादि ३ । ३ पूर्वादिशूल यह कपालकंटक २ हैं, नक्षत्र वार शूल 'न पूर्वदिशीत्यादि' तिथिशूल 'नवभूम्येति' शुक्र बुध संमुख 'सितज्ञदिक्कपा' इत्यादि वक्रास्तपराजितादि 'शुक्रवक्रास्तनीचेति' परिघदंड, 'पूर्वादिषु चतुरित्यादि' स्त्रपत्नीरजोदर्शन., अशौच, विवाहादि प्रतिबन्ध, मृतपक्ष 'तमोभुक्ततारा' इत्यादि रिक्ता ४ । ९ । १४ । से १२ तर्क ६ तथा १५ । ३० तिथि शनि सूर्य मङ्गल वार नाम तथा पृष्ठगत चन्द्रमा 'रवेर्भं' इत्यादि महाडल, धनिष्ठादि पंचक अभिजिन्मुहूर्त्त दक्षिणको तथा जन्मलग्न जन्मराशि अष्टमलग्न शत्रु राशिलग्नसे षष्ठस्थान तदीश, स्वजन्मराशि-लग्नसे अष्टमेश. शत्रुलग्न राशिसे षष्ठ--स्वामी इतने लग्नमें कुम्भ मीन लग्ननवांश, पृष्ठोदय राशि दिक्प्रतिलोमलग्न दशम शनि सप्तम शुक्र केन्द्रमें वक्री ग्रह वा वक्री ग्रहका वार इतने पूर्वोक्त दोष यात्रामें अवश्य वर्ज्य हैं तथा विवाहोक्त दोष "उत्पातान्सह पातदग्धेत्यादि" "सेन्दुक्रूर इत्यादि" पूर्वोक्त दोष भी वर्ज्य हैं, इनमें मासदोष धनुरर्कादि यामित्रदोष शुक्ररहितादि मात्र दोष नहीं ११०--११२ ॥ (मञ्जुभाषिणी तथा स्रग्धरा)

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ महीधरकृतभाषाटीकायाम् एकादशं यात्राप्रकरणम् ॥ ११ ॥

अथ वास्तुप्रकरणम् १२।

गृहस्थको श्रौत स्मार्त क्रिया समस्त अपने घरमें करनी चाहिये, परगृहमें करनेसे उसके फल भूमिका स्वामी ले लेता है। भविष्यपुराणे --"परगेहकृताः सर्वाः श्रौतस्मार्तक्रियाः शुभाः। निष्फ ाः स्युर्यतस्तासां भूमीशः फलमश्नुते ॥" इति। अतएव वास्तुशास्त्र कहते हैं–

गृहनिर्माणविचारः।

यद्भं द्व्यङ्कसुतेशदिङ्मितमसौ ग्रामः शुभो नामभात्स्वं वर्गं द्विगुणं विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शेषितम्। काकिण्यस्त्वनयोश्च तद्विवरतो यस्याधिकाः सोऽर्थदोऽथ द्वारं द्विजवैश्यशूद्रनृपराशीनां हितं पूर्वतः ॥ १ ॥

अवकहडाचक्रके अनुसार नामराशिसे नगर वा ग्रामराशि २।९।५।१।११ वीं हो तो वह वास करनेको शुभ होता है अन्यथा नहीं तथा जिसका नामाद्यक्षरसे जो गरुडादि वर्ग जितना है उसे दुगुणा करके ग्रामनामवर्ग संख्या जोड़ ८ से शेष करना जो शेष रहे वह पुरुषकी काकिणी है, ऐसे ही ग्रामकी वर्गसंख्या द्विगुण करके पुरुषनामकी वर्गसंख्या जोड़नी ८ से शेष करके जो शेष रहे वह ग्रामकी काकिणी हुई, जिसकी काकिणी अधिक हो वह धन देनेवाला होता है, इससे ग्रामकी काकिणी अधिक और नामकी न्यून अच्छी होती है। द्वार कहते हैं ब्राह्मण ४।८।१२ राशिवालेको पूर्व, वैश्य २।६।१० को दक्षिण, शूद्र ३।७। ११ को पश्चिम, नृप १।५।९ को उत्तर घरका द्वार करे ॥ १ ॥ (शार्दू०)

गोसिंहनक्रमिथुनं निवसेन्न मध्ये ग्रामस्य पूर्वककुभोऽलिझषाङ्गनाश्च। कर्कों धनुस्तुलभमेषघटाश्च तद्वद्वर्गाः स्वपञ्चमपरा बलिनः स्युरैन्द्र्याः ॥२॥

नवग्रामके बसनेमें विचार--है कि, सारी सीमाके ९ भाग पूर्वोक्त वक्ष्यकेसे करके मध्यभागमें २।५।१०। ३, पूर्वमें ८, आग्नेयमें १२, दक्षिणमें ६, नैर्ऋत्यमें ४, पश्चिममें ९, वायव्यमें ७, उत्तरमें १, ईशानमें ११ क्रमसे अकारादि वर्ग ८ आठों दिशाओंमें बलवान् हैं; जैसे--अ० पूर्व, क० आग्नेय, च० दक्षिण, ट० नैर्ऋत्य, त० पश्चिम, प० वायव्य, य० उत्तर, श० ईशानमें, अपनेसे पंचम वैरी होता है, जैसे- पूर्व गरुडसे पंचम पश्चिम सर्प शत्रु इत्यादि, जिसका वर्ग पूर्वबली है उसको पश्चिम द्वारमें न वसना चाहिये ॥ २ ॥ (वसन्ततिलका)

इष्टभूमेर्विस्तारयामादिविचारः।

एकोनितेष्टर्क्षहता द्वितिथ्यो रूपोनितेष्टायहतेन्दुनागैः।
युक्ता घनैश्चापि युता विभक्ता भूपाश्विभिः शेषमितो हि पिण्डः ॥ ३ ॥

भूमि गृहोपयोगी सम विषम त्र्यस्र चतुरस्र आदि अनेक भेदोंकी होती है, नाम नक्षत्रोंसे विवाहोक्त राशिकूटादि समस्त वरकन्याके सदृश देखना, नामके कल्पित नक्षत्रोंसे १५२ गुनना घटाय देना जो ध्वजादि वास्तु अभीष्ट है उसमें १ घटाथके ८१ गुनसे जोड देना १७ और जोडना २१६ से भाग लेना जो शेष रहे वह पिंड होता है, गृहकर्ताके अभीष्ट आयसे भी जैसे हो (पिंडमें दैर्घ्यसे भाग लेके विस्तार और विस्तारसे भाग लेके दैर्घ्य होता है) उदाहरण —नीलकण्ठनामका अनुराधा नक्षत्र रोहिणीके साथ मिलापक देखनेमें इष्टनक्षत्र रोहिणी ४, वास्तुविषय ३ सिंह इष्टर्क्ष ४ में १ घटाया शेष ३ इससे १५२ गुना किया ४५६ इष्ट वास्तु ३ एक घटाया २ इससे ८१ गुण दिया १६२ पूर्वोक्त ४५६ में जोड दिये ६१८ इनमें १७ और जोड दिया तो ६३५ हुआ इसमें २१६ से भाग लिया शेष २०३ पिण्ड हुआ अब कल्पित दैर्घ्य २९ से भाग लिया तो ७ विस्तार आया विस्तार ७ से भाग लिया तो २९ दैर्घ्य हुआ. महागृहके लिये इष्ट वास्तु सहित जो क्षेत्रफल है २१६ उसमें जोडके जो १ । २ । ३ आदि इष्ट हैं उससे युक्त करके समाभीष्ट महागृहका क्षेत्रफल होता है ॥ ३ ॥ (इन्द्रवज्रा)

स्वेष्टायनक्षत्रभयोऽथ दैर्घ्यहृत्याद्विस्तृतिर्विस्तृतिहृच्च दीर्घता ।
आयो ध्वजो धूमहरिश्वगोखरेभध्वांक्षकाः पिण्ड इहाष्टशेषिते ॥ ४ ॥
ध्वजादिकाः सर्वदिशि ध्वजे मुखं कार्यं हरौ पूर्वयमोत्तरे तथा ।
प्राच्यां वृषे प्राग्यमयोर्गजेऽथवा पश्चादुदक्पूर्वयमे द्विजादितः ॥ ५ ॥

पिण्ड आठसे शेष करके जो शेष रहे वह ध्वजादि वास्तु होता है, ध्वज १ धूम २ सिंह ३ कुत्ता ४ वृष ५ गदहा ६ गज ७ काक ८ ये वास्तुके नाम हैं, ध्वजमें वर्ज्य हैं । विवाहोक्त दोष सर्वदिग्द्वार सिंहमें पूर्व दक्षिणोत्तर, वृषमें पूर्व गजमें पूर्व दक्षिण द्वार करना. समवास्तु निषिद्ध विषम शुभ होते हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ (इ० व० उ० जा०)

गृहेशतत्स्त्रीसुखवित्तनाशोऽर्केन्दुजीज्यशुक्रे विबलेऽस्तनीचे ।
कर्तुः स्थितिर्नो विधुवास्तुनोर्भे पुरःस्थिते पृष्ठगते खनिः स्यात् ॥ ६ ॥

गृहस्वामीके जन्मराशिसे सूर्य, चंद्रमा, गुरु, शुक्र निर्बल, अस्त, नीचगत हो तो क्रमसे ये फल हैं - सूर्यसे गृहेशका, चंद्रमासे उसकी स्त्रीका, बृहस्पतिसे सुखका, शुक्रसे धनका नाश । दिननक्षत्र तथा गृहनक्षत्र सम्मुख होनेमें गृहमें वास न करना, यदि ये नक्षत्र पृष्ठगत हों तो भी योग्य नहीं चोरी (नकब आदि) से भय फल है अर्थात् विना नक्षत्रोंके दिग्विभाग पूर्वोक्त प्रकारसे पार्श्वगत चाहिये । कृत्तिकादि ७ पूर्व, मघादि ७ दक्षिण, अनुराधादि ७ पश्चिम धनिष्ठादि ७ उत्तर हैं ॥ ६ ॥ (उ० जा०)

गृहारम्भे विशिष्टकालनिषेधः।

भं नागतष्टं व्यय ईरितोऽसौ ध्रुवादिनामाक्षरयुक्तपिण्डः।
तष्टो गुणैरिन्द्रकृतान्तभूपा ह्यंशा भवेयुर्न शुभोऽन्तकोऽत्र ॥ ७ ॥

गृहनक्षत्र ८ से तष्ट करके जो शेष रहे वह व्यय होता है, जैसे—रोहिणी ८ से तष्ट करके ४ ही रहा यही व्यय हुआ, इसमें ध्रुवादि शालानामाक्षर संख्या जोडके पिंडमें जोड देना ३ से भाग लेके १ शेषमें चन्द्र, २ में यम, ३ राजसंज्ञक अंश होते हैं, इनमें यमांशक शुभ नहीं ॥ ७ ॥ (उ० जा०)

शालाध्रुवाङ्कनयनम्।

दिक्षु पूर्वादितः शाला ध्रुवा भूद्वौ कृता गजाः।
शालाध्रुवाङ्कसयोगः सैको वेश्म ध्रुवादिकम् ॥ ८ ॥

ध्रुवांकशालाविधिः—पूर्वद्वारमें शालाध्रुवांक १ दक्षिणमें २ पश्चिममें ४ उत्तरमें ८ जितनी दिशाओंमें द्वार हों उतने ध्रुवांक जोडने एक और जोडना वह ध्रुवादि (शाला) गृह जानना ॥ ८ ॥ (अनु०)

तिथ्यर्काष्टाष्टिगोरुद्रशक्रे नामाक्षरत्रयम्।
भूद्व्यब्धीष्वङ्गदिग्वह्निविश्वेषु द्वौ नगाब्धयः ॥ ९ ॥

दिक्षुपूर्वादितइत्यादिसे जो ध्रुव आया उसका शालाध्रुवांक सैक करके १५ । १२ । ८ । १६ । ९ । ११ । १४ संख्यक तिथि संख्या भी हो तो गृहनाम अक्षरत्रयात्मक होता है, यदि १ । २ । ४ । ५ । ६ । १० । ३ । १३ हो तो द्व्यक्षर नाम, ७ में चतुरक्षर जानना. वह ध्रुव धान्यादि अक्षर गिननेमें काम आता है ॥ ९ ॥ (पथ्यावक्त्रम्)

ध्रुवधान्ये जयनन्दौ खरकान्तमनोरमं सुमुखदुर्मुखोग्रं च।
रिपुदं वित्तदं नाशं चाक्रन्दं विपुलविजयाख्यं स्यात् ॥ १० ॥

शालाओंके नाम—ध्रुव १ धान्य २ जय ३ नन्द ४ खर ५ कांत ६ मनोरम ७ सुमुख ८ दुर्मुख ९ उग्र १० रिपुद ११ वित्तद १२ नाश १३ आक्रन्द १४ विपुल १५ विजय १६ इनके नामसदृश फल हैं, शुभार्थ लेना, आक्रन्दादि अशुभ छोड़ना ॥ १० ॥ (आर्यागीतिः)

गृहस्यायादिनवकम् ।

पिण्डे नवाङ्काङ्गगजाग्निनागनागाब्धिनागर्गुणिते क्रमेण ।
विभाजितैर्नागनगाङ्कसूर्ये नागर्क्षतिथ्यर्क्षखभानुभिश्च ॥ ११ ॥
आयो वारोंऽशको द्रव्यमृणमृक्ष तिथियुतिः ।
आयुश्चाथ गृहेशर्क्षं गृहभैक्यं मतिप्रदम् ॥ १२ ॥

पिंड ९ से गुणाकर ८ तष्ट किया शेष आय, एवं ९ से गुना कर ७ से भाग देके शेष वा, ६ से गु० ९ भा० अंश, ८ गु० १२ भा० धन, ३ गु० ८ भा० ऋण, ८ गु० २७ भा० नक्षत्र, ८ गु० १५ भा० तिथि, ४ गु० २७ भा० योग ८ गु० १२ भा० आयु होती है, विषम वास्तु शुभ, सम अशुभ, शुभ वार शुभ, पाप अशुभ, पाप अंश निंद्य, धनादिक शुभ, ऋणादिक अशुभ, ३ । ५ । ७ तारा अशुभ, गृह तथा गृहस्वामीका एक नक्षत्र मृत्यु करता है तथा राशिकूटादि विवाह तुल्य विचारना, राशिगणना है कि, अश्विन्यादि ३ मेष, मघादि २ सिंह, मूलादि ३ धन अन्य नक्षत्र २ । २ की १ । १ राशि जाननी, गृहकार्य सेव्यसेवक मित्रमित्रकी एक नाडी शुभ होती है तिथि रिक्ता अमा अशुभ, १४, से पिंड गुणा कर ३० से तष्ट करके शे तिथि होती हैं, व्यतीपातादि दुष्टयोग अशुभ जहां हाथोंसे आयादि गुण शुभ न मिले तो उनमें अंगुल मिलाकर क्षेत्रफल करना, इसकी विधि लीलावतीसे जाननी ॥ ११ ॥ १२ ॥ (अनु०)

आयादि.	आ.	वार	अंश	धन	ऋ.	नक्षत्र	तिथि	योग	आयु
गुणक	९	९	६	८	३	८	८	४	८
भाजक	८	७	९	१२	८	२७	१५	२७	१२

गृहारम्भे वृषवास्तुचक्रम् ।

गेहाद्यारम्भेऽर्कभाद्वत्सशीर्षे रामैर्दाहो वेदभैरग्रपादे ।
शून्यं वेदैः पृष्ठपादे स्थिरत्वं रामैःपृष्ठे श्रीर्युगैर्दक्षकुक्षौ ॥ १३ ॥
लाभो रामैः पुच्छगैः स्वामिनाशो वेदैर्नैःस्व्यं वामकुक्षौ मुखस्थैः ।
रामैः पीडा संततं चार्कधिष्ण्यादश्वै रुद्रैर्दिग्भिरुक्तं ह्यसत्सत् ॥ १४ ॥

गृहादि प्रासाद ग्रामादिके आरंभमें सूर्यके नक्षत्रसे दिन नक्षत्र पर्यंत ३ नक्षत्र वृषके शिरमें दाह फल एवं ४ अग्रपाद शून्यफल, ४ पृष्ठपाद स्थिरता, ३ पृष्ठमें श्री; ४ दक्षिण कुक्षिमें लाभ, ३ पुच्छमें स्वामिनाश, ४ वामकुक्षिमें दरिद्रता, ३ मुखमें

पीडा सर्वदा हो. यह वृषवास्तुचक्र है । प्रकारांतरसे है कि, सूर्यनक्षत्रसे दिननक्षत्र पर्यन्त ७ अशुभ ११ शुभ १० अशुभ होते हैं ॥ १३ ॥ १४ ॥ (शालिनी)

कुम्भेऽर्के फाल्गुने प्रागपरमुखगृहं श्रावणे सिंहकर्क्योः
पौषे नक्रेऽथ याम्योत्तरमुखसदनं गोजगेऽर्केऽच राधे ।
मार्गे जूकालिगे सद्ध्रुवमृदुवरुणस्वातिवस्वकपुष्यैः
सूतीगेहं त्वदित्यां हरिभविधिभयोस्तत्र शस्तः प्रवेशः ॥ १५ ॥

कुम्भके सूर्ययुक्त फाल्गुन महीनेमें पूर्वपश्चिममुख गृह शुभ होता है, तथा ५ । ४ के सूर्यमें श्रावणमें भी पूर्वपश्चिममुख गृह शुभ है, तथा १० केमें पौषमें भी पूर्वपश्चिमद्वार शुभ और १ । २ के सूर्यसहित वैशाखमें तथा ७ । ८ के सूर्य मार्गशीर्षमें दक्षिणोत्तरमुख गृह शुभ होता है. ध्रुव मृदु शततारा स्वाती धनिष्ठा हस्त पुष्य, नक्षत्र गृहारम्भको शुभ हैं परन्तु सूतिकाघरके लिये पुनर्वसुमें आरम्भ, श्रवण अभिजितमें प्रवेश कहा है ॥ १५ ॥ (स्रग्धरा)

चैश्चिन्मेषरवौ मधौ वृषभगे ज्येष्ठे शुचौ कर्कटे
भाद्रे सिंहगते घटेऽश्वयुजि चोजऽलौ मृगे पौषके ।
माघे नक्रघटे शुभं निगदितं गेहं तथोज न सत्
कन्यायां च तथा धनुष्यपि न सत्कृष्णादिमासाद्भवेत् ॥ १६ ॥

मेषके सूर्यमें चैत्रमें भी गृहारम्भ शुभ है तथा वैशाख कथित ही है, वृषकेमें ज्येष्ठमें तथा कर्ककेमें आषाढमें एवं सिंहकेमें भाद्रपदमें, एवं तुलाकेमें आश्विनमें तथा वृश्चिककेमें कार्तिकमें मकरकमें पौषमें एवं मकर और कुम्भके सूर्यमे माघ मासमें भी गृहारम्भ शुभ है । कन्याके सूर्यमें कार्तिकमें शुभ नहीं है । इसी तरहसे धनुके सूर्यमें भी गृहारम्भ शुभ नहीं यहां कृष्णादि मास ग्रहण है ॥ १६ ॥ (शार्दूलवि०)

तिथिपरत्वेन द्वारनिषेधः ।

पूर्णेन्दुतः प्राग्वदनं नवम्यादिषूत्तरास्यं त्वथ पश्चिमास्यम् ।
दर्शादितः शुक्लदले नवम्यादौ दक्षिणास्यं न शुभं वदन्ति ॥ १७ ॥

पूर्ण = शुक्ल १५—८ तक पूर्व मुख, ९—१४ तक उत्तर मुख, कृष्ण ३०—८ त. पश्चिम मुख ९-१४ तक दक्षिणाभिमुख गृहारम्भ शुभ नहीं होता । पश्चिम मुख

द्वारस्थान ८१ पदवाले वास्तुचक्रसे जानना, शुभ भागमें शुभ अशुभमें अशुभ कहा है ॥ १७ ॥ (उपजाति)

भौमार्करिक्तामायूने चरोनेऽङ्के विपञ्चके ।
व्यन्त्याष्टस्थैः शुभैर्गेहारम्भस्त्र्यायारिगैः खलैः ॥ १८ ॥

मंगल सूर्य वार, रिक्ता ४ । ९ । १४ । तथा ३० । १ । ८ तिथि, धनिष्ठादि ५ नक्षत्र चरणलग्न छोडके गृहारम्भ करना, लग्नसे १२ । ८ रहित स्थानोंमें शुभ, ३ । ६ । ११ । में पापग्रह शुभ होते हैं ॥ १८ ॥ (अनुष्टुप्)

देवालये गेहविधौ जलाशये राहोर्मुखं शम्भुदिशो विलोमतः ।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात्पृष्ठविदिक्छुभा भवेत् ॥ १९ ॥

देवालयारंभमें राहुका मुख मीनार्कसे ३ । ३ राशियोंके सूर्यमें ईशानादि विदिशाओंमें विपरीतक्रमसे रहता है ऐसा जानना । गृहारंभमें सिंहार्कादि ३ । ३ तथा जलाशयारम्भमें मकरार्कादि ३ । ३ राशियोंके सूर्यमें वैसे ही जानना , प्रकट चक्रमें लिखा है, इसका प्रयोजन यह है कि (खात) भूमिशोधन राहुके मुखमें न करना मुखस्थ विदिशासे पंचम विदिशामें राहुकी पुच्छ होती है, मुखपुच्छके वीच पीठ होती है । पीठसे खात शुभ होता है. जैसे देवालय खातमें मीनादि ३ चैत्र वैशाख, ज्येष्ठमें राहुका मुख ईशान, पुच्छ नैर्ऋत्य है तो विपरीत क्रमसे पीठ आग्नेयमें हुई इसीसे खातारम्भ करना ॥ १९ ॥

राहुमुखचक्रम्.				
दिशा	ईशान्यां	वायव्यां	नैर्ऋत्यां	आग्नेय्यां
देवालये	१२।१।२ के. सू. मे. रा. मु.	३।४।५ के. सू. मे. रा. मु.	६।७।८ के. सू. मे. रा. मु.	९।१०।११ के. सू. मे. रा. मु.
गृहारंभे	५।६।७ के. सू. मे. रा. मु.	८।९।१० के. सू. मे. रा. मु.	११।१२।१ के. सू. मे. रा. मु.	२।३।४ के. सू. मे. रा. मु.
जलाशये	१०।११।१२ के. सू. मे. रा. मु.	१।२।३ के. सू. मे. रा. मु.	४।५।६ के. सू. मे. रा. मु.	७।८।९ के. सू. मे. रा. मु.

गृहकूपनिर्माणम्।

कूपे वास्तोर्मध्यदेशेऽर्थनाशस्त्वैशान्यादौ पुष्टिरैश्वर्यवृद्धिः।
सूनोर्नाशः स्त्रीविनाशो मृतिश्च संपत्पीडा शत्रुतः स्याच्च सौख्यम् ॥ २०॥

कूप (कुआँ) घरके मध्यमें अर्थनाश, ईशान्यादि सृष्टिमार्गसे पुष्ट्यादि,जैसे ईशानमें पुष्टि, पूर्वमें ऐश्वर्यवृद्धि, आग्नेयमें पुत्रनाश, दक्षिणमें स्त्रीनाश, नैर्ऋत्यमें गृहकर्त्ताकी मृत्यु, पश्चिममें शुभ, वायव्यमें शत्रुसे पीडा, उत्तरमें सुख होता है ॥ २० ॥ (शालि०)

उपकरणगृहाणि।

स्नानस्य पाकशयनास्त्रभुजेश्च धान्यभाण्डारदैवतगृहाणि च पूर्वतः स्युः।
तन्मध्यतस्तु मथनाज्यपुरीषविद्याभ्यासाख्यरोदनरतौषधिसर्वधाम ॥२१॥

(कोठे) चतुरस्र घरके पूर्वमें स्नानका आग्नेयमें रसोईका दक्षिणमें (शयन) सोनेका नैर्ऋत्यमें (शस्त्र) हाथियारोंका पश्चिममें भोजनका वायव्यमें अन्नका उत्तरमें धनका स्थान ईशानमें देवगृह करना, पशुमंदिर भी वायव्यमें शुभ होता है। दिशा विदिशाओंके मध्यमें कहते हैं कि, पूर्वाग्नेयके बीच दही विलोनेका, आग्नेय दक्षिणके मध्य घृतका, दक्षिण नैर्ऋत्यके बीच (पुरीष) पायखाना, नैर्ऋत्य पश्चिमके बीच पाठशाला, पश्चिमवायव्यके मध्य (रोदन) शोकका स्थान, उत्तरवायव्यके बीच स्त्रीसम्भोग, उत्तर ईशानके मध्यमें औषधिका, ईशानपूर्वके बीचमें अन्य अन्य समस्त वस्तुमात्रका स्थान करना ॥ २१ ॥ (वसन्ततिलका)

गृहायुर्विचारः।

जीवार्कविच्छुक्रशनैश्चरेषु लग्नारियामित्रसुखत्रिगेषु।
स्थितिः शतं स्याच्छरदां सितार्कारेज्ये तनुत्र्यङ्गसुते शते द्वे ॥ २२ ॥

गृहका आयुर्योग-बृहस्पति लग्नमें सूर्य छठा बुध सप्तम शुक्र चतुर्थ शनि तीसरे गृहारम्भ लग्नसे हों तो १०० सौ वर्ष घरकी आयु होवे तथा शुक्र लग्नमें सूर्य तीसरा मंगल छठा बृहस्पति पंचम हो तो घरकी आयु २०० वर्ष हो, यह योगायु है ॥ २२ ॥ (उपजाति)

लग्नाम्बरायेषु भृगुज्ञभानुभिः केन्द्रे गुरौ वर्षशतायुरालयः।
बन्धौ गुरुर्व्योम्नि शशी कुजार्कजौ लाभे तदाशीतिसमायुरालयः ॥ २३ ॥

लग्नमें शुक्र दशम बुध ग्यारहवां सूर्य लग्नरहित केन्द्रमें बृहस्पति हों तो १०० वर्ष तथा चतुर्थ गुरु, दशम चन्द्रमा, एकादशमें मंगल शनि हों तो ८० वर्ष घरकी आयु हो ॥ २३ ॥ (इन्द्रवज्रा)

लक्ष्मीयुक्त गृहयोगत्रयम् ।

स्वोच्चे शुक्रे लग्नगे वा गुरौ वेश्मगतेऽथवा ।
शनौ स्वोच्चे लाभगे वा लक्ष्म्या युक्तं चिरं गृहम् ॥ २४ ॥

उच्चका शुक्र लग्नमें हो १ वा उच्चका बृहस्पति चतुर्थमें हो २ अथवा उच्च ७ का शनि लाभभावमें हो तो ३ वह घर लक्ष्मी सहित बहुत स्थिर रहे ॥ २४ ॥ (अनु०)

गृहस्यान्यदीयत्वम् ।

द्यूनाम्बरे यदैकोऽपि परांशस्थो ग्रहो गृहम् ।
अब्दान्तः परहस्तस्थं कुर्य्याच्चेद्वर्णपोऽबलः ॥ २५ ॥

गृहारम्भ लग्नसे यदि एक भी कोई ग्रह शत्रुनवांशका सप्तम वा दशम भावमें हो तो यह घर एक वर्षके भीतर दूसरेके हाथमें चला जावे परन्तु यदि वर्णेश (विप्राधीशावित्यादि) निर्बल हो, वर्णेशके बलवान् होनेमें ग्रह उक्त फल नहीं करता ॥ २५ ॥ (अनु०)

पुष्ये ध्रुवेन्दुहरिसार्पजलैः सजीवैस्तद्वासरेण च कृतं सुतराज्यदं स्यात् ।
द्वीशाश्वितक्षवसुपाशिशिवैःसशुक्रैर्वारे सितस्य च गृहं धनधान्यदं स्यात्२६

पुष्य ध्रुव मृगशिर श्रवण आश्लेषा पूर्वाषाढा इन नक्षत्रोंमें बृहस्पति जिसमें हो उस नक्षत्रमें तथा बृहस्पतिवारमें भो घर बने तो घरवालोंको पुत्र तथा राज्य हो तथा विशाखा अश्विनी चित्रा धनिष्ठा शततारा आर्द्रा इनमेंसे जिसमें शुक्र हो उस नक्षत्रमें और शुक्रवारके दिन गृहारम्भ हो तो अन्न धन बहुत हो ॥ २६ ॥ (वसन्ततिलका)

सारैः करेज्यान्त्यमघाम्बुमूलैः कौजेऽह्नि वेश्माग्निसुतार्तिदं स्यात् ।
सज्ञैः कदास्रार्यमतक्षहस्तैर्ज्ञस्यैव वारे सुखपुत्रदं स्यात् ॥ २७ ॥

हस्त, पुष्य, रेवती, मघा, पूर्वाषाढा, मूल नक्षत्र मंगलयुक्त हों तथा मंगलवार भी हो तो घरमें अग्निपीडा पुत्रपीडा हो और रोहिणी, अश्विनी, उत्तराफाल्गुनी, चित्रा, हस्तमेंसे जिसमें बुध हो तथा बुधवार भी हो तो घर सुख तथा पुत्र देनेवाला हो ॥ २७ ॥ (इन्द्र०)

अजैकपादहिर्बुध्न्यशक्रमित्रानिलान्तकः ।
समन्दैर्मन्दवारे स्याद्रक्षोभूतयुतं गृहम् ॥ २८ ॥

पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, ज्येष्ठा, अनुराधा, स्वाती, रेवती, भरणीमेंसे जिसमें शनि हो उस नक्षत्रमें तथा वार भी शनि हो तो वह घर राक्षसभूतादिकोंसे युक्त रहे ॥ २८ ॥ (अनु०)

द्वारचक्रम्।

सूर्यर्क्षाद्युगभैः शिरस्यथ फल लक्ष्मीस्ततः कोणभै-
र्नागैरुद्वसनं ततो गजमितः शाखासु सौख्यं भवेत्।
देहल्यां गुणभैर्मृतिगृहपतेर्मध्यस्थितैर्वेदभः
सौख्यं चक्रमिदं विलोक्य सुधिया द्वा ं विधेयं शुभम् ॥ २९ ॥

इति श्रीमद्दैवज्ञानन्तसुतरामविरचिते मुहूर्त्तचिन्तामणौ द्वादशं
वास्तुप्रकरणम् ॥ १२ ॥

किसीके मतसे द्वारचक्र है कि, सूर्यके नक्षत्रसे चन्द्रमाके नक्षत्रपर्यन्त ४ नक्षत्र शिरपै लक्ष्मी-प्राप्ति करते हैं, एवं ८ चारों कोणोंमें (उद्वसन) घरमें कोई न रहने पावे, फिर ८ शाखाओंमें सौख्य, ३ देहलीमें गृहपतिकी मृत्यु, फिर ४ मध्यमें सौख्य देते हैं (तथा ग्रन्थान्तरोंमें पंचांग भी कहा है कि अश्विनी, चित्रा, उत्तरा, स्वाती,रेवती, रोहिणी ये द्वारशाखा, देहली आदिको शुभ हैं तथा ५ । ७ । ९ । ८ तिथि शुभ, ११ । १२ । १६ । १४ मध्यम, अन्य तिथि अशुभ हैं, वारयोगादिभी शुभ) इस चक्रको देखकर पंडितजन द्वार का विधान करें ॥ २९ ॥

इति श्रीमुहूर्त्तचिन्तामणौ महीधरकृतभाषाटीकायां द्वादशं वास्तुप्रकरणम् ॥ १२ ॥

अथ गृहप्रवेशप्रकरणम् १३।

कालशुद्ध्यादिः।

सौम्यायने ज्येष्ठतपोऽन्त्यमाधवे यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे।
स्याद्वेशनं द्वाःस्थमृदुध्रुवोडुभिर्जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे॥ १॥

राजा आदिके यात्रासे निवृत्त होनेमें सुपूर्व तथा नवीन गृहादिमें अपूर्व प्रवेशके मुहूर्त। शुक्र गुरुके अस्तादि। 'वाप्यारामेत्यादि' दोषरहित उत्तरायणमें ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख महीनोंमें प्रवेश करना, (मध्यममें कार्तिक मार्गशीर्ष भी कहे हैं) द्वाःस्थनक्षत्र "भानि स्वाप्यान्यश्विदिक्षु" इत्यादिमें कहे हैं, घरका द्वार जिस दिशामें है उस दिक्स्थनक्षत्रोंमेंसे मृदु तथा ध्रुव नक्षत्रोंमें तथा जन्मलग्न जन्मराशिसे उपचय ३। ६। १०। ११। वें तथा स्थिरलग्नोंमें अपूर्व सुपूर्व गृहप्रवेश शुभ होता है, इसमें भी विवाहोक्त २१ महादोष वर्जित हैं॥ १॥ (इ०)

जीर्णगृहप्रवेशे विशेषः।

जीर्णे गृहेऽग्न्यादिभयान्नवेऽपि मार्गोर्जयोः श्रावणिकेऽपि सत्स्यात्।
वेशोऽम्बुपेज्यानिलवासवेषु नावश्यमस्तादिविचारणात्र॥ २॥

दूसरेके अथवा अपने बनाये पुराने घरमें तथा अग्नि जल राजा आदिकोंके कारण घर टूट गया फिर नवीन बनानेमें प्रवेशके लिये पूर्वोक्त मासादि लेने और कार्तिक मार्गशीर्ष श्रावण महीना, शततारा पुष्य स्वाती धनिष्ठा नक्षत्र भी शुभ होते हैं, तथा ऐसे प्रवेशमें शुक्र गुरुके अस्तादिविचार भी नहीं है॥ २॥ (इन्द्रवज्रा)

गृहप्रवेशात्प्राग्वास्तुपूजनम्।

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे वास्त्वर्चनं भूतबलिं च कारयेत्।
त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः शुभैर्लग्ने त्रिषष्ठायगतैश्च पापकैः॥ ३॥

मृदु, ध्रुव, क्षिप्र, चर, मूल नक्षत्रोंमें प्रवेशदिनसे पूर्व वास्तुका पूजन (भूतबलि) वास्तुपूजाप्रकारोक्त बलि भी करनी. लग्नशुद्धि कहते हैं कि, त्रिकोण (५। ९) केन्द्र (१।४।७।१०) धन (२) आय (११) त्रि (३) भावोंमें शुभग्रह हो तथा ३। ६। ११ में पापग्रह हों॥ ३॥ (उपजाति)

तिथिलग्नवारशुद्धयः।

शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भमृत्यौ व्यार्कारिरिक्ताचरदर्शचैत्रे।
अग्रेऽम्बुपूर्णं कलशं द्विजांश्च कृत्वा विशेद्वेश्म भकूटशुद्धम्॥ ४॥

चतुर्थाष्टम भाव ग्रहरहित हों और जन्मलग्न जन्मराशिसे अष्टम लग्न न हों तथा सूर्य मंगलवार रिक्ता ४ । ९ ।१४ । तिथि चर १ । ४ । ७ । १० लग्न इनके अंशक (दर्श) अमावास्या चैत्रका महीना उपलक्षणसे आषाढका भी इनको त्याग कर शुभ समयमें प्रवेश करना. उस समय आगे जलपूर्ण कलश एवं ब्राह्मणोंके लिये जाना तथा विवाहोक्त भकूट शुद्ध होना चाहिये ॥ ४ ॥ (इन्द्रवज्रा)

वामरविचक्रफलम्।

वामो रविर्मृत्युसुतार्थलाभतोऽर्के पञ्चमे प्राग्वदनादिमन्दिरे।
पूर्णातिथौ प्राग्वदने गृहे शुभो नन्दादिके याम्यजलोत्तराननें॥ ५॥

प्रवेशलग्नसे जो अष्टम स्थान है उससे १२ पर्यन्त सूर्य स्थित हो तो पूर्वमुख गृह-प्रवेशको वामरवि होता है, तथा पंचम स्थानसे ९ पर्यन्त दक्षिणमुख गृहमें प्रवेश को वामसूर्य; तथा दूसरे स्थानसे पांच स्थानोंमें हो तो पश्चिमद्वार घरमें, एवं ११ भावसे ५ स्थानोंमें हो तो उत्तराभिमुख घरमें प्रवेशको वामसूर्य होता है और पूर्वद्वार घरमें प्रवेश को पूर्णा ५ । १० । १५ । तिथि दक्षिणद्वारमें नन्दा १ । ६ ११ । पश्चिम-द्वारमें भद्रा २ । ७ ।१२ उत्तरद्वारमें जया ३ । ८ । १३ । तिथि शुभ हैं ॥ ५ ॥ (इन्द्रवज्रा)

वामरविचक्रम्।

पू. मु.	द. मु.	प. मु.	उ. मु.
सू. ८	सू. ५	सू. २	सू. ११
सू. ९	सू. ६	सू. ३	सू. १२
सू. १०	सू. ७	सू. ४	सू. १
सू. ११	सू. ८	सू. ५	सू. २
सू. १२	सू. ९	सू. ६	सू. ३

कलशवास्तुचक्रम्।

वक्त्रे भूरविभात्प्रवेशसमये कुम्भेऽग्निदाहः कृतः प्राच्यामुद्वसनं कृता-
यमगता लाभः कृताः पश्चिमे। श्रीर्वेदाः कलिरुत्तरे युगमिता गर्भे
विनाशो गुदे रामाः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनलाःकण्ठे भवेत्सर्वदा॥ ६॥

कलशवास्तुचक्र–सूर्यके नक्षत्रसे चन्द्रनक्षत्रपर्यंत क्रमसे १ कलशके मुखमें अग्नि-दाह, ४ पूर्वमें (उद्वसन) वासशून्य, ४ पश्चिममें धनलाभ, ४

उत्तरमें कलह, ४ गर्भमें गर्भोंका विनाश, २ गुदामें स्थिरता, फिर २ कण्ठमें स्थिरता फल है, प्रवेशमें यह चक्र विचारना चाहिये ॥ ६ ॥ (शार्दूल०)

प्रवेशोत्तरकर्तव्यता ।

एवं सुलग्ने स्वगृहं प्रविश्य वितानपुष्पश्रुतिघोषयुक्तम् ।
शिल्पज्ञदैवज्ञविधिज्ञपौरान् राजार्चयेद्भूमिहिरण्यवस्त्रैः ॥ ७ ॥

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ त्रयोदशं गृहप्रवेशप्रकरणम् ॥ १३ ॥

उक्त प्रकारोंसे निर्दोष लग्नमें राजा वितान (चाँदनी) पुष्पादि शोभायुक्त अपने घरमें वेदध्वनिके साथ मंगललक्षणोंसहित प्रवेश करके शिल्पज्ञ (राजा, बढ़ई आदि) तथा ज्योतिषी (मुहूर्तादि बतलानेवाले), विधिज्ञ (गृहनिर्माण एवं भूतबलि आदि विधान जाननेवाले) और पुरोहित आदि नगरवासियोंको भी यथार्ह भूमि सुवर्ण वस्त्रादि देकर पूजन करे ॥ ७ ॥ (उपजाति)

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ महीधरकृतभाषाटीकायां त्रयोदशं गृहप्रवेशप्रकरणम् ॥ १३ ॥

अथ उपसंहाराध्यायः ।

ग्रन्थनिर्मातृपरिचयः ।

आसीद्धर्मपुरे षडङ्गनिगमाध्येतृद्विजैर्मण्डिते ज्योतिर्वित्तिलकः फणीन्द्ररचिते भाष्ये कृतातिश्रमः । तत्तज्जातकसंहितागणितकृन्मान्यो महाभूभुजां तर्कालंकृतिवेदवाक्यविलसद्बुद्धिः स चिन्तामणिः ॥ १ ॥

(षडंग) शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष ये वेदके अंग हैं-इनके पढ़नेवाले तथा वेदादि पढ़ानेवाले ब्राह्मणोंके निवासभूत नर्मदासमीपवर्ती विदर्भ-देशांतर्गत धर्मपुरनाम नगरमें (ज्योतिर्वित्तिलकः) ज्योति-ताराओंको जाननेवाले ज्योतिषियोंका तिलक (श्रेष्ठ) और जिसने व्याकरणके शेषकृत महाभाष्यमें अतीव श्रम (अभ्यास) किया तथा छोटे बडे अनेक जातकशास्त्र, संहिताशास्त्र, गणितशास्त्र समस्त तीनों (होरा, गणित, संहिता) स्कंधात्मक ज्योतिषशास्त्र, अपनी ग्रंथरचनासे प्रकट किया तथा महाराजाओंका मान्य तथा न्यायशास्त्र, अलंकारशास्त्र, वेदविचार-प्रतिपादक मीमांसाशास्त्र, वेदांतशास्त्रोंमें विलासयुक्त है बुद्धि जिसकी ऐसा चिन्तामणिनाम दैवज्ञ हुवा ॥ १ ॥ (शार्दूलविक्रीडित)

ज्योतिर्विद्गणवन्दिताङ्घ्रिकमलस्तत्सूनुरासीत्कृती नाम्नाऽनन्त इति
प्रथामधिगतो भूमण्डलाहस्करः । यो रम्यां जनिपद्धतिं समकरोद्दुष्टा-
शयध्वंसिनीं टीकां चोत्तमकामधेनुगणितेऽकार्षीत्सतां प्रीतये ॥ २ ॥

उक्त चिन्तामणि दैवज्ञका पुत्र अनन्तनामा करके संसारमें विख्यात हुआ; ज्योतिषियोंके समूहसे जिसके चरणकमलोंकी वन्दना की जाती थी अर्थात् उस समयमें ज्योतिःशास्त्राध्यापक यही सर्वोपरि था, पृथ्वीमें ज्योतिषका प्रकाश करनेमें सूर्य जैसा एवम् अनेक ग्रन्थरचनामें कुशल (चतुर) वा सुघड था, जिसने रमणीय (जन्मपद्धति) भावदशांतर्दशा गणित शुभाशुभफलोपदेशक जन्मपत्रीरचनाका क्रम एवं जन्मपत्रीके मार्ग न जाननेवालोंके दुष्ट आशयोंको विनाश करनेवाली बनायी और इसीने आर्यभटमतपंचांगसाधक कामधेनु गणितकी भी टीका बनायी इत्यादि कृत्य सज्जनोंकी प्रीतिके लिये अर्थात् परोपकारार्थ किये ॥ २ ॥ (शार्दू०)

तदात्मज उदारधीर्विबुधनीलकण्ठानुजो
गणेशपदपङ्कजं हृदि निधाय रामाभिधः ।
गिरीशनगरे वरे भुजभुजेषुचन्द्रैर्मिते
शके विनिरमादिमं खलु मुहूर्त्तचिन्तामणिम् ॥ ३ ॥

उक्त अनंतनामा दैवज्ञका पुत्र (उदार) शिष्योंको विद्यादानकारी बुद्धिवाला राम दैवज्ञ ज्योतिष, व्याकरणादि अनेक विद्याओंमें पंडित नीलकंठ दैवज्ञका भाई था, इसने अपने कुलोपासित गणेशजीके चरणकमल अपने हृदयमें धारण करके मोक्षदायी काशीपुरीमें शालिवाहनीय १५२२ शककालमें यह मुहूर्त्तचिन्तामणि नाम ग्रंथ बनाया, [इसकी पीयूषधारानामक टीका रामज्योतिषीके भाई नीलकंठ ज्योतिषी पुत्र गोविंदनामा ज्योतिषीने १५२५ शककालमें बनायी है] ॥ ३ ॥ इति ग्रन्थकृद्वंशानुकीर्तनम् ॥

निधाय हृदयेऽथ विक्रमदिवामणेर्वत्सरे
नवाब्धिर्नवभूमिते गुरुपदाम्बुजे शाश्वते ।
धरान्तमहिशर्मणा टिहरिसंज्ञके पत्तने
भगीरथरथानुगामरसरित्तटे शोभने ॥

श्रीकृष्णदाससुतवैश्यकुलावतंस-
श्रीखेमराजकथनाद्विवृतिः प्रक्लृप्ता ।
चिन्तामणावमललौकिकभाषया तां
निर्मत्सराः श्रमविदः कलयन्तु कण्ठे ॥

भाषाकारका निवेदन है कि, श्रीगंगा भागीरथीके तीरस्थित राजधानी टिहरी नामक नगरमें महीधरशर्मा अपने हृदयकमलमें अविनाशी परब्रह्मरूप श्रीगुरुके चरणकमलोंको ध्यानरूपसे धारण करके विक्रमादित्य संवत् १९४९ में पुण्यात्मा एवं सब बातको जाननेवाले खेमराज श्रीकृष्णदासजीकी आज्ञानुसार इस "मुहूर्त-चिन्तामणि" ग्रंथकी यह टीका (सरल देशभाषामें) सर्वसाधारणके समझने योग्य परोपकार दृष्टि करके सरल भावसे बनायी, सब इसे (सरलबुद्धि) मद मत्सर अहङ्कार रहिततासे अपने कण्टमें धारण करें, जिससे जब जब पढें तभी तभी मुहूर्तचिन्तामणि (जो सहसा सबके बोधमें नहीं होती) में (गति) समझनेका सामर्थ्य हो जाय ॥

इति भाषाटीकासमेत मुहूर्तचिन्तामणि समाप्त ॥



पुस्तकें मिलनेका ठिकाना-

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
बम्बई.

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
कल्याण-बम्बई.